प्रकाशक,
उदयलाल काशलीवाल,
गाँधी हिन्दी-पुस्तक भंडार;
कालबादेवी—बम्बई।

मुद्रक—
मंगेश नारायण कुळकर्णी,
कर्नाटक प्रेस,
नं० ४३४, ठाकुरद्वार, बम्बई।

उपोद्घात ।

यद्यपि इस पुस्तकका विषय बड़ा रोचक और चित्ताकर्षक है फिर भी यह कोई उपन्यास या दिल बहलानेकी पुस्तक नहीं । जो लोग इसे केवल दिल बहलानेके लिए ही पढ़ना चाहते हों वे कृपया इसे हाथ न लगावें । इसमें उनके मनोरञ्जनकी कोई सामग्री नहीं है । परन्तु जो नर-नारी जीवनमें उन्नति करना चाहते हैं, जो अपनी गुप्त मानसिक शक्तियोंसे पूरा लाभ उठाना चाहते हैं, जो सुख और शांति प्राप्त किया चाहते हैं, जो आनन्द और तन्दुरुस्तीके अभिलाषी हैं, जो अपनी दरिद्रतासे महा दुखी हैं, जो अपने संसारमें सफलता लाभ करनेके आकांक्षी हैं, और अन्ततः जो परम देवको साक्षात्कार करनेके लिए योगके रहस्योंको समझना चाहते हैं उनके लिए यह एक वर-स्वरूप है । पर शर्त यह है कि वे इसमें बताई हुई शिक्षाओं पर अमल करें और इसमें वर्णित विधियोंका अभ्यास करें । विचार-विद्या एक नियम बद्ध शास्त्र है । इस लिए इसे एक शास्त्रीय पुस्तक समझ कर ही पढ़ना चाहिए । इसे समझनेके लिए जरा मस्तिष्कको भी सोचनेका काम करना पड़ेगा । इस शास्त्रके अध्ययनमें जितना परिश्रम और जितना समय जिज्ञासु लगायगा उतने ही चिरस्थायी उसके फल होंगे, और उतनी ही अधिक ऋद्धि तथा सिद्धि उसे प्राप्त होगी । इस लिए सच्ची उन्नतिके अभिलाषियोंको परिश्रम और उद्योगसे घबराना नहीं चाहिए । दिल बहलानेकी पुस्तकें तो आप सदा पढ़ते ही हैं, विचार-शास्त्रकी भी एक पुस्तक पढ़ देखिए । इसमें आपको अनेक अद्भुत और नई बाते मिलेंगी ।

जो लोग अपने मनोबलको बढ़ानेकी इच्छा तो रखते हैं, पर जिन्हें यह विषय अभी नीरस प्रतीत होता है उन्हें सबसे पहले इस पुस्तकका परिशिष्ट पढ़ना चाहिए । यह परिशिष्ट हमने अपनी तरफसे जोड़ दिया है । इसके पाठसे पाठकोंके मनमें इस शास्त्रके अध्ययनके लिए रुचि पैदा होगी । उन्हें मालूम हो जायगा कि मानसिक शक्तिसे कैसे कैसे अद्भुत कार्य किये जा सकते हैं ।

सुननेको तो हम शताब्दियोंसे सुनते आ रहे हैं कि **विचारमें शक्ति है**, पर हमने इस कथनका वैज्ञानिक अन्वेषण कभी नहीं किया, इस आर्ष वाक्यको परीक्षा द्वारा जाँचनेका कभी उद्योग नहीं किया । परन्तु पश्चिममें यह बात नहीं है । वहाँ विज्ञानकी कसौटी पर परखे बिना कोई भी बात स्वीकार नही

की जाती। **विचार ही संसारमें सबसे महान् शक्ति है**। इस कथनकी सत्यता इस पुस्तकमें वैज्ञानिक रीतिसे प्रमाणित की गई है। पुस्तककी लेखिका, श्रीमती 'ओ हष्णु हारा' ने इसे एक कल्पित तत्त्वज्ञान न रहने देकर एक सुनिश्चित शास्त्र सिद्ध कर दिया है। पश्चिमवालोंने इस शास्त्रका नाम 'नव-विचार' दिया रक्खा है। पश्चिमकी भोगभूमिके लिए है भी यह नव-विचार; पर भारतकी प्राचीन ज्ञान-भूमिके लिए यह कोई नया विचार नहीं है। यहाँके मुनि इस विद्याके पूर्ण ज्ञाता, नहीं नहीं, इस शास्त्रके अविष्कारक थे। उन्हींकी महती कृपासे ससारमें इसका प्रचार हुआ था। पर कालकी वाम गतिसे आज यह पवित्र विद्या उन जगद्गुरुओंके वंशजोंमें नहीं रही। इसका भारतमें लोप-सा हो गया है।

इसमें सन्देह नहीं कि महामुनि पतञ्जलिका योगदर्शन इस विद्याका सर्वोत्तम ग्रंथ है और उसका मिलना भी कुछ कठिन नहीं; परन्तु वह उच्च श्रेणीके अभ्यासियोंके कामकी चीज है, नये छात्र उससे बहुत कम फायदा उठा सकते हैं। जिन लोगोंको पूर्वसे इस शास्त्रका कुछ भी ज्ञान या अभ्यास नहीं, उन्हें इसका क, ख, आरम्भ करनेके लिए योगसूत्रकी अपेक्षा किसी और सुगम पुस्तककी जरूरत है। वे केवल योगदर्शनके पाठसे ही इसका अभ्यास नहीं कर सकते। यही कारण है कि उस पुस्तकके प्राप्त होते हुए भी आज हम योग नहीं सीख रहे हैं। हमारा खयाल है कि प्राचीन कालमें भी पतञ्जलिकी पुस्तकके अतिरिक्त नये छात्रोंके लिए और कई सुगम सुगम पुस्तकें मौजूद होंगी जो कि अब कालकी गतिसे विनष्ट हो चुकी हैं। नये अभ्यासी पहले उन्हें ही शुरू करते होंगे, और बादमें कुछ उन्नति कर लेने पर योगदर्शनसे सहायता लेते होंगे। या इन सरल और प्राथमिक पुस्तकोंके अभावको गुरुकी मौखिक शिक्षा दूर कर देती होगी। वर्तमान पुस्तक भी वैसी ही प्राथमिक पुस्तक है। इस विद्याके नये छात्रोंके लिए इसे एक प्रकारसे योगदर्शनकी वैज्ञानिक व्याख्या ही समझिए। अलबत्ता, इतनी बात जरूर है कि यह व्याख्या किसी भारतीय पडित द्वारा नहीं, बल्कि एक पश्चिमी देवी द्वारा की गई है। इसका अँगरेजी नाम है 'Concentration and the Acquirement of Personal Magnetism.' पदार्थ-विज्ञानकी भूमि पश्चिममें मानसिक विज्ञानकी इस पुस्तकका लिखा जाना कोई कम आश्चर्यकी बात नहीं है। सच तो यह है कि हमारी कोई भी उत्तम विद्या ऐसी नहीं जिसे पश्चिमवाले न ले गये हों। पश्चिममें इसके जानेसे एक फायदा अवश्य हुआ है।

और वह यह है कि जहाँ हमारे पंडितोंकी व्याख्याओंने इस विद्याको केवल एक खयाली ढकोसला और असम्भव कथा ही वना रक्खा था वहाँ अव यह विज्ञान-भक्त पाश्चात्योंके परिश्रमसे एक सत्य विज्ञान वन गई है। इसकी सचाईमें अव किसीको भी सन्देह नहीं हो सकता।

यह समझना भारी भूल है कि मनोवल या मानसिक एकाग्रता केवल ईश्वर प्राप्तिके लिए ही उपयोगी है। नहीं नहीं, मानसिक एकाग्रतासे मनुष्यके अन्दर एक विशेष प्रकारका वल पैदा हो जाता है। इस वलको चाहे सम्मोहिनी शक्ति कहो, चाहे व्यक्तिगत आकर्पण शक्ति, और चाहे मनुष्यकी चुम्बकीय शक्ति, वात एक ही है। परन्तु इसके लिए सवसे उत्तम नाम 'औज' या 'औजस' शक्ति है। इसका प्रयोग ईश्वर-प्राप्ति और धन-प्राप्ति दोनोंके लिए, समान रूपसे हो सकता है। भारतीय योगी जहाँ इसे आध्यात्मिक विकासके लिए प्राप्त किया करते थे, वहाँ आधुनिक या पाश्चात्य लोग इसे धन कमानेका साधन वना रहे हैं। कहनेका तात्पर्य यह कि अभ्यासी जैसा चाहे वैसा ही काम इस शक्तिसे ले सकता है। इस लिए गृहस्थ और वानप्रस्थ दोनोंके लिए इसका प्राप्त करना परम प्रयोजनीय है।

श्रीमती ओ हष्णु हाराकी वताई हुई प्राणायाम-विधि कुछ कठिनसी प्रतीत होनेसे हमने पुस्तकके अन्तमें "प्राणायामकी एक सरल विधि" और लगा दी है। यह विधि हमें पूज्यपाद श्री स्वामी सत्यानन्दजी महाराजकी कृपासे प्राप्त हुई है। इसके लिए हम स्वामीजी महाराजके अत्यन्त ही कृतज्ञ हैं। स्वामीजी महाराज कहते हैं कि जितना कुछ उन्होंने अपनी इस विधिमें लिख दिया है उससे अधिक पुस्तकों द्वारा सर्व-साधारणको वताया नहीं जा सकता। क्योंकि इससे अधिक लिखनेसे जनताको लाभके स्थानमें हानि होनेका डर है। जो अभ्यासी प्राणायामकी अधिक जटिल क्रियाओंको जानना चाहते हैं उन्हें किसी प्राणायाम करनेवाले सच्चे गुरुकी शरण लेनी चाहिए। पुस्तकें इस विपयमें उनकी अधिक सहायता नहीं कर सकतीं।

पुरानीवसी—होशियारपुर,
२९ श्रावण १९७४ वि०। } सन्तराम वी० ए०।

भूमिका।

नाम मात्र दक्षिणा पर मैं सर्व-साधारणको यह उपदेशमाला देने लगी हूँ। इसका कारण केवल यही है कि मैं इसे एक वस्तुतः उपयोगी कार्य समझती हूँ। **जिन लोगोंको अपनी** "विचार" रूपी नौकाको खेकर "सफलता" रूपी बन्दर तक ले जानेके लिए कर्णधारकी आवश्यकता है, मेरा विश्वास है कि उनके लिए यह बहुत लाभदायक सिद्ध होगी।

असंगठित विचार एक निकम्मी चीज है, पर **संगठित** विचार संसारमें सबसे महान् शक्ति है। दुनियामें रुपया सर्व शक्तिमान् माना जाता है। पर यह उससे भी अधिक बलवान् है। रुपया इसके वश-में हैं और दरिद्रता इसके डरसे सदाके लिए दूर भाग जाती है। **प्रेम** पर इसका राज्य है, लेकिन रुपयेका नहीं। जिन पदार्थोंसे जीवन सुखमय बनता है वे सब इसके अधिकारमें हैं।

कहनेका प्रयोजन नहीं कि मानसिक संगठनके लिए विशेष मान-सिक शिक्षाकी जरूरत है। लोग प्रति दिन अधिक प्रकाश, अधिक ज्ञान और निज अविद्याको दूर करनेके उपायोकी अभिलाषा करते हैं। यह बात ऐसी ही निश्चित है जैसा कि दिन दिन है और रात रात है। यही कारण है कि ओज और विचार-शक्तियोंके विवेकका इतना आदर है।

औजस या व्यक्तिगत आकर्षण-शक्तिका ही नाम दूसरे शब्दोमे **तन्दुरुस्ती, आनन्द, शक्ति और सफलता** है।

इन वस्तुओके अभिलाषियो ! मेरे इन पृष्ठोमे दिये हुए नियमोका पालन करो, प्रत्येक पाठको पढ़ो, उस पर निशान लगाओ, उसे याद करो और उसका खूब-मनन करो। फिर यदि तुम्हें औजस अर्थात् आकर्षणकी अद्भुत शक्ति प्राप्त न हो; यदि तुम अपने भीतर एक नव-प्राप्त आनन्दका अनुभव न करने लगो और तुम्हें यह मालूम न होने लगे कि तुम अब वह निर्बल, पद-दलित प्राणी नहीं रहे जो तुम पहले अपने आपको समझा करते थे बल्कि एक उन्नत, देदीप्यमान, सुखी जीव हो तो मै कहती हूँ कि मेरा नाम—

'ओ हण्णु हारा'—.

नहीं !

विषय-सूची ।

परिशिष्ट ।

एकाग्रता और दिव्यशक्ति।

१ विचार और मस्तिष्क।

विचारकी क्रिया, उसकी रचना और उससे काम लेनेकी यथार्थ-रीतिकी व्याख्याका क्रम-बद्ध शिक्षाके रूपमें बड़ा अभाव है। मानसिक विद्या और रहस्य-विद्याके विद्यार्थी अपने उत्कर्षके विशाल मार्गमें इस विषयके अभावको एक बहुत बड़ा बाधक समझते हैं। इस लिए यह प्रायः निश्चित प्रतीत होता है कि यह व्याख्या उनके एक वरदान सिद्ध होगी।

सामान्यतः जिन रीतियोंको अच्छा बताया जाता है वे मुझे बहुत ही असाध्य प्रतीत होतीं हैं। भला जिस मनुष्यने प्रति दिनके व्यवहारोंमें विचार पर शासन करना नहीं सीखा; जो दिन भरके कामके बाद घर जाने पर या सोते समय सब प्रकारकी व्यापार-सम्बंधिनी चिन्ताओंको निर्वासित नहीं कर सकता; छोटी छोटी आदतें जिसके वशमे नहीं; जो आत्माको कोई ऐसी वस्तु समझ रहा है कि उसका खयाल करते ही उसकी सारी सोई हुई कल्पना-शक्ति जाग उठती है और उसके मानसिक नेत्रोंके सामने एक मूर्तिके स्थानमें सैकड़ों मूर्तियाँ आ-उपस्थित होती है; वह परमात्मा जैसे गंभीर विषय पर कैसे ध्यान लगा सकता है? वह मूर्खकी तरह विश्वास करने लगता है कि मैं मनको एकाग्र करनेका अभ्यास कर रहा हूँ। लेकिन जब अंतमें कोई परिणाम नहीं निकलता तब उसे माळूम होता है कि मैंने कुछ नही किया। तब वह फिर उसे नये सिरेसे आरम्भ करता है।

यह कोई आशाके विरुद्ध बात नहीं। इस विषयको सरल बनानेके साधारण यत्न भी प्रसन्नता-पूर्वक स्वीकार किये जाते है। यह विषय सर्व-गुह्य और आध्यात्मिक शिक्षाओंमें सबसे बढ़कर महत्त्व रखता है। वस्तुतः पुस्तकोंमें जिस दृश्यका लम्बा चौड़ा वर्णन है उसे देखनेके लिए यह एक द्वार है। ज्ञान, स्वास्थ्य, आनन्द और अदृष्टका यह एक उन्मत्तकारी दर्शन है। इसका प्रथम पाद अति कठिन होनेके कारण यह बहुधा पुस्तकोंमें ही बंद पड़ा रहता है। जो लोग इस विषय पर अधिकार प्राप्त कर नहीं सके, उनमेंसे बहुतोंने मुझे पत्र लिखे हैं और मुझसे प्रार्थना की है। उनकी उस इच्छाको पूरी करनेके लिए ही मैंने यह एक सरल और साध्य यत्न किया है। अपने शिष्योंसे मेरी सबसे प्रथम प्रार्थना यह है कि वे इस विषयका प्रारम्भ मूलसे ही करें। जब तक उन्हें निम्न लिखित विषयोंका पूर्ण निश्चय न हो जाय तब तक आत्मा पर ध्यान जमानेका उद्योग करना उचित नहीं है।

पहला—विचारकी रचना क्या है।

दूसरा—तुम बाकी सब विचारोंको छोड़ कर किसी एक ही आवश्यक संसारी विषय पर अपने मनको लगानेके योग्य हो।

तीसरा—जब तक तुम दो मिनट तक मनको एकाग्र नहीं कर सकते तब तक आध घण्टे तक निरन्तर ध्यान लगानेका उद्योग न करो।

चौथा—आत्मा क्या वस्तु है।

शिष्योंके प्रति मेरा उपदेश यही है कि एक समयमें, एक विषय पर, एक मिनट भर ध्यान लगाओ और फिर शनैः शनैः दिन पर दिन उस समयको बढाते जाओ।

तुम एक छोटीसी दौड़के लिए अपने आपको तैय्यार करना चाहते हो और चिरकालसे तुम्हें दौड़नेका अभ्यास नहीं है। ऐसी अवस्थामें तुम अभ्यासके लिए पहले ही बीस मील दौड़ने न लगोगे। एक छोटे वालकको पढना सिखलानेके लिए पहले ही एक कठिन वैज्ञानिक पुस्तक आरम्भ नहीं कराई जा सकती। इतने पर भी हम देखते हैं कि प्रयुक्त क्रियाओंके उत्तरोत्तर ज्ञानकी प्राप्ति और तैय्यारीके विना ही लोगोंको इनसे भी कहीं अधिक कठिन कार्य्यों पर लगा दिया जाता है।

आरम्भ करनेके लिए अपनी किसी वहुत मनभाती वस्तुको लो। एक मिनटके लिए उसे अपने मानसिक नेत्रोंके सामने रक्खो; उसे अपनी कल्पनामें देखनेका यत्न करो। यदि तुम्हें ऐसा करनेमें सफलता न हो तो एक घण्टेके करीव और ठहर जाओ और फिर दुवारा उद्योग करो।

इन उपायोंसे तुम्हारे मस्तिष्ककी लचक क्रमशः बढ़ जायगी। निरन्तर अभ्यासके द्वारा मस्तिष्क भी विस्तृत किया जा सकता है और इससे ऐसे ऐसे कार्य्य कराये जा सकते हैं जिनका करना पहले इसके लिए असम्भव था। दूसरे इस वातको समझना है कि विचारकी उत्पत्तिमें मस्तिष्क क्या काम देता है।

मस्तिष्कको केवल एक अति सूक्ष्मयंत्र, या एक डायनमो (गतिजन्य-विद्युदंत्र) समझिए। विजली पैदा करनेवाले एक साधारण डायनमोकी भाँति मस्तिष्क विचार पैदा करता है। इस यंत्रकी वनावटको समझनेकी जरूरत है; क्योंकि यह वात माळूम है कि मस्तिष्कके विशेष विशेष भाग विशेष विशेष कार्य्य करते हैं। यह भी ज्ञात है कि यदि मस्तिष्कको निकम्मा छोड़ दिया जाय तो फिर इसमें शनैः

शनैः अकाम क्रिया करनेके सिवा और कोई काम करनेकी क्षमता नहीं रह जाती । यहाँ तक कि यदि मस्तिष्कके विशेष भागोंकी ओर भी ध्यान न दिया जाय तो वे भी निर्बल और निकम्मे हो जाते हैं ।

साथका चित्र मस्तिष्कके सापेक्ष भागोंको दिखलाता है। उनका काम यह है ।

चित्र नं० १

चित्र नं० ४

इस चित्रमें चित्र नं० १ बड़ा मस्तिष्क (सेरीब्रम) है। यह दो गोलार्धोंका बना है । इन दोनोंके बीच एक बहुत गहरी दरार है। बड़े मस्तिष्कमें श्वेत तंतुमय पदार्थके—मज्जाके—चारों ओर धूसर द्रव्यका एक मोटा स्तर है। धूसर द्रव्यकी तहें या गाँठें-सी बन रही हैं। यह साराका सारा शिराओं और रक्त-वाहिनी नाड़ियोंकी बनी हुई एक सूक्ष्म झिल्लीसे ढँका है । यह झिल्ली कोश-समूह पर ठहरी हुई है ।

मस्तिष्कका यह भाग अनुभव, इच्छा, बुद्धि और आवेगोंका स्थान है। मस्तिष्कके इस भागको नुकसान पहुँचनेसे इसकी मानसिक शक्तियोंके प्रकट करनेकी क्षमता थोड़ी बहुत नष्ट हो जाती है ।

चित्र नं० २ छोटा मस्तिष्क या सेरीबेलम है । यह अबुद्धि-पूर्वक काम करनेवाले स्नायुओं (involuntary muscles) को और मन तथा शरीरकी चेष्टाओंको नियममें रख कर उनकी रक्षा करता है । मैं अनाविष्कृत मन (Sub-conscious mind) का स्थान सदासे इसे ही बताती रही हूँ। इसके लिए सबसे अधिक युक्ति-सिद्ध स्थान यही प्रतीत होता है । कारण यह कि अनाविष्कृत

मन निश्चय ही एक अबुद्धि-पूर्वक काम करनेवाला है। यदि इसकी अवस्था प्रकट होनेकी न हो तो संसारकी सारी इच्छा-शक्ति भी इसे प्रकट कर नहीं सकती। इस लिए इच्छा या आवेगों पर इसका बहुत कम दारोमदार है। प्रति दिन काम करनेवाले मस्तिष्कके लिए कोई दूसरा व्यापार अपने जिम्मे लेनेके बिना ही अपने निजी व्यापारका खयाल रखनेका ही बहुत पर्याप्त काम है।

चित्र नं० ३ मस्तिष्क-सेतु (पोसवरोली) है; और नं० ४ अधिपति (मैडूला आवलाङ्गेटा) है। उससे हमारा कोई मतलब नहीं, यद्यपि उसका काम बड़े महत्त्वका है। देखिए, यदि अधिपति नष्ट कर दिया जाय तो झटसे मृत्यु हो जाती है।

मस्तिष्ककी निचली सतहसे नाड़ियो (नर्व) के बारह जोड़े निकलते है। इन्हे अँगरेजीमें क्रेनिपल नर्वज् अर्थात् कपालकी नाड़ियाँ कहते हैं। प्रत्येक जोड़ा शरीरको कुछ ज्ञान देता है। यह ज्ञान मस्तिष्क-रूपी यंत्रमें उसी प्रकार उत्पन्न होता है जिस प्रकार कि डायनमोमें बिजलीकी धारायें उत्पन्न होती हैं। नाड़ियोंका एक जोड़ा गंधका बोध कराता है। दूसरा जोड़ा देखनेके तंतु हैं। तीसरा जोड़ा आँखकी पुतलियोंको हिलाता है। चौथे और पाँचवे जोड़ेका सम्बंध मुख-मण्डलकी त्वचा, निचले जबड़ेके पट्ठों और जीभके साथ है। छठा जोड़ा उन पट्ठोंसे मिला है जो आँखकी पुतलियोको बाहरकी ओर फिराते हैं। सातवॉ जोड़ा मुख-मण्डलके पट्ठोंको नाड़ियाँ देता है। आठवॉ जोड़ा कानोंके लिए है। नौवॉ जोड़ा मिश्रित-नाड़ियाँ है जिनकी सहायतासे हम स्वाद लेते हैं। यह कण्ठको भी नाड़ियाँ देता है। दसवाँ जोड़ा बड़े महत्त्वकी मिश्रित-नाड़ियाँ है। ये नाड़ियाँ कण्ठनाली, फेफड़े, हृदय, आमाशय और पित्ताशयको सूत्र भेजती हैं। ग्यारहवॉ जोड़ा संचालक

नाड़ियाँ हैं। ये नाड़ियाँ गर्दनको विशेप पट्ठे भेजती है। वारहवाँ जोड़ा, जीभको सूत्र भेज रहा है। अव हमें अपने विचार-यंत्रका स्पष्ट ज्ञान हो गया। आरम्भ करनेके लिए इस ज्ञानका होना वहुत लाभदायक है; क्योंकि कोई भी इञ्जनियर किसी ऐसे यंत्रको चलानेका यत्न नहीं करता जिसके विपयमें कि वह सर्वथा अनभिज्ञ है। मानसिक एकाग्रता, जिसे **मानसिक-चिकित्सा** कहते हैं, शरीरको किस प्रकार प्रभावित करती और कोश-समूहों (दैहिक उपादान) की कैसे मरम्मत कर सकती है यह बात मस्तिष्क-केन्द्रके साथ इस प्रत्यक्ष व्यवस्थासे बहुत कुछ स्पष्ट हो जाती है।

नाड़ियोंका प्रत्येक जोड़ा मस्तिष्कके दिये हुए संदेशको ले जाता है। परिणामका पैदा करना स्वभावतः उस संदेश पर निर्भर है। जिस यंत्रसे हमे काम लेना है वह हमारे पास है। इसके वैज्ञानिक अंगोंको हमने भली भाँति समझ लिया है। अव हमें देखना यह है कि विचार किस प्रकार कार्य्य करता है और मानसिक एकाग्रताका विचार पर क्या परिणाम होता है।

इच्छाका यथार्थ स्थान कहाँ है, इसका चिन्तन और अध्ययन मै चिरकाल तक करती रही हूँ। मनकी एकाग्रताके लिए इसका महत्त्व और भी वढ़ जाता है; क्योंकि इच्छाके विना सम्भवतः मनुष्य मनको एकाग्र कर नहीं सकता। इच्छा विचार-रूपी क़लकी स्वामिनी है। इस कठिनताको हल करनेकी सवसे अच्छी युक्ति जो मेरी समझमे आती है, यह है कि इच्छा-शक्तिको विश्वात्मा (का अंश) मान लिया जाय। इससे मेरा मतलव मनुष्यके उस (आत्मिक) अंशसे है जिसका कभी नाश नहीं होता। मै पुनर्जन्मके सिद्धान्तको केवल एक कल्पना नही समझती। मेरे लिए यह कल्पनासे कुछ बढकर है।

मैंने ऐसे मनुष्य सुने हैं जिन्हें पूर्व-जन्मकी वातें याद है। उनमेसे कितने दो-दो तीन-तीन जन्मोंकी स्मृति रखते हैं। अनेक जन्मोकी स्मृति रखना तो वड़ी वात है, मैं कहती हूँ यदि मनुष्य किसी एक पूर्व-जन्मकी वातें भी याद रख सकता है तो निश्चय ही इससे कल्पना, कल्पना न रह कर एक सत्य घटना बन जाती है।

यही विश्वात्मा (का अंश) या इच्छा-शक्ति मस्तिष्कको गति देती है। यही इस वातका निश्चय करती है कि उत्पादित विचारका क्या परिणाम होगा और इसमें कितनी सामर्थ्य होगी। (कई एक जन्मोंमेंसे गुजर जानेके वाद) इस वातका निश्चय करना कि प्रत्येक जन्ममे क्रमशः हम कहाँ तक उन्नति कर सकेंगे, हमारे ही अधीन रहता है। यदि हमारी कामना हो तो विश्वात्मा (के अंश) के विज्ञ सहयोगसे हम एक ही जन्ममें इतनी उन्नति कर सकते हैं जितनी कि अन्य प्रकारसे कहीं शताब्दियोंमें जाकर होगी।

---

२ इच्छा, विचारके चलनेकी रीति और विचारकी लहरोंके प्रकार।

मेरी समझमे इच्छा अथवा सङ्कल्प-शक्तिका स्थिति-स्थान विना किसी विघ्न-वाधाके, **नाड़ियोंके** उस **तेजस्क ओजके** भीतर निश्चित किया जा सकता है जो मस्तिष्कको सव तरफसे घेरे हुए है।

जहाँ तक मैं मालूम कर सकी हूँ विचारका यथार्थ तत्त्व आज तक पूर्ण रीतिसे कभी भी प्रकट नहीं किया गया। निस्सन्देह विचारकी उत्पत्ति परमाणुमयी है। यदि ऐसा न हो तो मै नहीं समझती

कि प्रकृतिके नियमके अनुसार यह अन्तरिक्षमें एक स्थानसे दूसरे स्थान तक कैसे जाता है ।

आकाश (ईथर) में विचारकी क्रियाका खयाल करते समय हमें भय है कि आकाशको हम कहीं कोई अपनेसे बाहर वस्तु न समझ बैठें । साथ ही यह भी डर है कि कहीं विचारको एक अज्ञात और अचिन्तित राशि न खयाल कर ले । इन भूलोंसे हमे सदा बचते रहना चाहिए ।

आकाश हमारे सारे शरीरमें व्याप्त है । इसी अद्भुत और अदृश्य माध्यमके द्वारा विचार, चुम्बक-शक्ति और इसी प्रकारकी अन्य ज्ञात वस्तुएँ विश्व-ब्रह्माण्डमेसे द्रव्यको अपने पास आकर्षित कर सकती हैं । हाँ यह ठीक है कि जितनी शक्ति विचारमें है उतनी अन्य किसी वस्तुमें नहीं है । संसारका कोई भी पदार्थ इसके आकर्षणको रोक नहीं सकता, चाहे इसके और इसकी अभिलपित वस्तुके बीच कैसी ही बाधा क्यो न हो । इसका कारण एक शब्दमें बताया जा सकता है । वह शब्द आकाश (ईथर) है । यह उन प्रकाश-तरगोंके बहनेके लिए माध्यमका काम देता है जो अत्यन्त दूरस्थ लोकों और स्थिर तारागणोंसे निकलती है । वे लोक इतनी दूर है कि वहाँसे हमारी छोटीसी पृथ्वी तक पहुँचनेके लिए प्रकाशको दस बरस लग जाते है । यही आकाश हमारे विचारके चलनेका माध्यम है । इसके द्वारा हम विचारको चाहे पृथ्वीकी दूसरी ओर, चाहे अज्ञात प्रदेशके किसी अति दूरस्थ स्थानमें, चाहे चिरकालके भूले हुए भूतमें पीछेकी तरफ और चाहे अप्रकट भविष्यत्‌में आगेकी ओर जहाँ चाहें भेज सकते हैं ।

आकाश-रूपी अदृश्य पदार्थके वास्तविक स्वरूपके विषयमे मैं बहुत बार अपने विचार प्रकट कर चुकी हूँ । यद्यपि पुराने पाठकोको ये

विचार नीरस प्रतीत होंगे तथापि नये पाठकोके लाभार्थ मुझे इनका दुबारा कहना आवश्यक है।

आकाश (ईथर) एक अदृश्य माध्यम है। इससे सारा अन्तरिक्ष भरा हुआ है। अन्तरिक्षमेसे **प्रकाश**के आवागमनके लिए वैज्ञानिकोंने इसे एक **आवश्यक** वस्तु माना है; क्योकि वहॉ **वायु** आदि कोई दूसरा साधारण माध्यम पाया नहीं जाता।

वैज्ञानिक लोग इसे एक साफ और गाढ़े-रसके जैसा पदार्थ बताते है। **रोजीक्रूश्यन** लोग इसे एक सजीव अग्नि-शिखा समझते है। रोजीक्रूश्यन तत्त्ववेताओंका एक गुप्त सम्प्रदाय है। वे लोग अपने आपको प्रकृतिके रहस्योंका ज्ञाता और असाधारण शक्तिवाला बताते है। जिसे तेजोमय ईथर (luminiferous ether) कहा जाता है, इस समय हमारा सम्बंध उसीके वैज्ञानिक मूल या निर्दिष्ट स्थानसे है। मेरे पाठक यह बात आसानीसे समझ जायँगे कि **शून्य-देश** (अन्तरिक्ष) को भरनेके लिए किसी वस्तुका होना परमावश्यक है; नहीं तो सूर्य्य, चन्द्र और दूरस्थ तारागणोसे हम तक प्रकाश कभी न पहुँच सकेगा।

प्रकाश ईथर (आकाश) मेंसे '**लहरों**' द्वारा **चलता** है। छोटे छोटे परमाणु या कण शून्य-देशमेसे समकेन्द्रिक (अर्थात् एक ही केन्द्रवाली) तरङ्ग मालामें चलते हैं। प्रत्येक कण अपने पासके कणको गति देता है और वह फिर आगे अपने साथके कणको। यह भी याद रहे कि प्रत्येक कण या परमाणु अपनी बारीमें क्षोभका एक केन्द्र बन कर लहरें पैदा करने लगता है। इन लहरोंकी लम्बाई अत्यन्त छोटी होती है और वे अमित वेगसे चलती है। जैसे **जल**मे पत्थर फेकनेसे तरङ्ग-माला उत्पन्न होती है वैसी ही

ये लहरें होती है। लहरकी चोटी और खोखल भी होता है। यद्यपि इस समय इन लहरोकी लम्बाईको मापनेकी वैज्ञानिक रीतिसे हमारा कोई सम्बंध नहीं, पर मापी वे अवश्य जाती हैं।

हम जानते हैं कि **प्रकाश** ईथरमेंसे **लहरों** द्वारा **चलता** है। ये लहरें बाहरकी ओर निरन्तर फैलती रहती हैं। हम यह भी जानते है कि प्रकाशकी **किरणें** वास्तवमे कोई चीज नहीं। प्रकाश **अतीव सूक्ष्म** कणोंमें एक स्थानसे दूसरे स्थान तक चलता है। **विचार** भी प्रकाशके सदृश ही ईथर और शून्य-देश (अन्तरिक्ष) मेंसे भेजा जाता है।

अब मस्तिष्कको एक डायनमो समझिए। इनमे भेद केवल इतना ही है कि मस्तिष्क दूसरे सब ज्ञात यंत्रोंसे अधिक शक्ति-सम्पन्न और अधिक सूक्ष्म रचना रखता है। मनुष्य स्वभावसे ही सदा इस कलकी शक्तिका कम अंदाजा लगाता है। कारण यह है कि वह ऐसी प्रचंड शक्तिको **कल्पना**मे भी नहीं ला सकता।

मस्तिष्कके केन्द्र-स्थानमे गति बहुत प्रचण्ड है। किन्तु वहाँ यह स्थिर-सा देख पड़ता है। उस केन्द्रसे विचार उसी प्रकार बाहरकी ओर निकलता है जैसे कि हमारी शक्तिके केन्द्र-स्थान सूर्य्यसे प्रकाश विकीर्ण होता है।

पहले हमने विचारको पैदा करनेवाले यंत्रका वर्णन किया है। दूसरे उस माध्यमको दर्शाया है जिसमेंसे कि विचार भूमण्डलके एक स्थानसे ढकेल कर दूसरे स्थान तक भेजा जाता है।

विचार-तत्त्व अदृश्य है। चर्म-चक्षुओं द्वारा वह नहीं दिखलाया जा सकता। परन्तु विचारकी शक्ति हमारे दैनिक जीवनमें पग-पग पर प्रकट हो रही है।

मैंने विचारकी उत्पत्ति परमाणुमयी मानी है। साथ ही मैं आकाश (ईथर) को एक साफ और गाढ़े रसके सदृश पदार्थ लिख चुकी हूँ। आकाशमें परमाणुओं और अणुओ (दो या अधिक परमाणुओंके संघका नाम अणु है) को शून्य-देशमेंसे भीषण वेगके साथ एक स्थानसे दूसरे स्थान तक भेजनेका विशेप गुण है। हाँ यह ठीक है कि वेगका सारा दारोमदार परमाणुके कद और रूप पर है। विचारके परमाणु इतने सूक्ष्म हैं कि उनसे बढकर वेगवान् वस्तु और दूसरी कोई नहीं है। क्योंकि जितना छोटा परमाणु होगा उसकी थरथरा-हटका वेग भी उतना ही बड़ा होगा।

जब कोई व्यक्ति किसी तुच्छसे तुच्छ विषय पर भी विचार करने बैठता है तो उसके विचारके परमाणु एकदम आकाशमें क्षोभ पैदा करने लगते है। इससे उनके चारो ओरका मण्डल क्षुभित हो उठता है। यदि विचार निर्बल है तो क्षोभ केवल उसी स्थान तक ही रहता है; किसी दूसरे पर उसका कुछ प्रभाव नहीं पड़ता। हाँ, यदि उसमे क्रोध, अशान्ति या उद्वेग भरा हुआ है तो उसका स्वयं विचारक पर बहुत बुरा असर पड़ेगा।

ऐसे विचार आकाशको उलट-पलट देते है। वे मस्तिष्कमेंसे पीछे भीतरकी यांत्रिक रचना पर पलट कर मानसिक क्रियाके सदृश दाह पैदा करते हैं। इससे उनका न केवल प्राणभूत इन्द्रियोंके स्राव पर ही असर होता है, बल्कि वे सारी शारीरिक रचनाको ऋणात्मक तेजो-मंडलसे घेर लेते है। इससे प्रेम और उत्तम भावकी लहरें नष्ट हो जाती है और व्यक्ति उनसे वञ्चित रह जाता है। इन अवस्थाओका बहुत पासके दूसरे लोगों पर भी हलका-सा असर होता है। वे लोग उद्वेग और उदासीनताका अनुभव करने लगते है। किन्तु जब तक

मनुष्य इस प्रकारकी विचार-प्रवृत्तिका निरन्तर अभ्यासी न हो तब तक ये विचार इतने असंघटित रहते हैं कि इनका कोई स्थायी फल नहीं होता। **विचारकके सिवा** ये किसी भी दूसरे व्यक्तिको हानि नहीं पहुँचाते। इनसे उसकी जठराग्नि मंद पड़ जाती है, रातको उसे निद्रा नहीं आती, चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ जाती हैं, कपोल शिथिल पड़ जाते है और किसी बातमे भी उसे आनन्द प्राप्त नहीं होता। आकाशमय पदार्थोंके क्षोभके ये सब स्थायी परिणाम है।

जीवनमें सफलता लाभ करने और दूसरोको सहायता देनेके लिए हम सब उत्सुक हैं। परन्तु जीवन-साफल्यका आध्यात्मिक सफलताके साथ ऐसा पूर्ण संयोग होना चाहिए मानो दोनों एक हैं, नहीं तो कोई एक भी चिरस्थायी न होगा। मै जानती हूँ कई लोग मेरे इस कथनके साथ सहमत न होंगे। परन्तु मेरी यह दृढ़ सम्मति है कि सच्चा जीवन-साफल्य वही है जिसमें मेरी उपर्युक्त दोनों बाते हो। विचारकी थरथराहटका नियम यह है कि पहले यह उच्च वेगसे घट कर नीचतर वेग तक पहुँचती है, फिर वहाँसे इसका वेग दुबारा होने लगता है। विचार एक मुक्त-मार्ग गतिका अनुसरण करता है और जिस सन्देशकी पूर्तिके लिए यह चला था उसके साथ लदा हुआ लौट आता है। यदि आप इस प्रकरणके चित्र नं० १ पर ध्यान देंगे तो आपको एक पूर्ण चक्र दिखाई देगा। इसको हम आत्माका मण्डल कहेगे।

चित्र नं० १
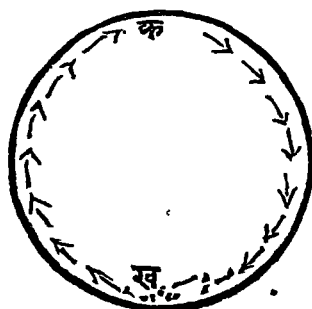
ऊपर दिये हुए चक्रके 'क' चिह्न पर हम निर्मल आत्मा देखते है और 'ख' पर प्रकृतिको स्थान देते हैं। इस प्रकार 'क' अर्थात् निर्मल आत्मा, थरथराहटका प्रचंड अर्थात् शीघ्रतम वेग है। यहाँसे आत्मा चलता है। इसका वेग क्रमशः मंद, पर साथ ही सघन होता जाता है। इस प्रकार जब यह अधोभाग 'ख' पर पहुँचता है तब कार्यतः इसकी गति बिलकुल बंद हो जाती है। इसे प्रकृतिके स्थूल पदार्थोंमेंसे आत्माकी यात्रा समझिए। यहाँ तक कि 'ख' पर हम विशुद्ध प्रकृतिके सिवा और कुछ नहीं पाते। परन्तु 'ख' से 'क' की ओर लौटते समय आकाश (ईथर) का यह वेग पुनः शीघ्र और शीघ्रतर होता जाता है; यहाँ तक कि 'क' पर पहुँच कर इसकी गतिका वेग पुनः शीघ्रतम हो जाता है। यहाँ यह बंधनोंमें जकड़नेवाले प्रकृतिके तत्त्वोंको दूर फेंक कर एक वार फिर निर्मल आत्मा हो जाता है।

हम इसे जीवनकी क्रियाके रूपमें दिखला सकते हैं। सारा जीवन आत्मा है। आत्मासे व्यक्तिका जब प्रथम वियोग होता है तबसे लेकर उस समय तक—जब कि वह जीवन-यात्रा करता हुआ असंख्य जन्मान्तरोंमेंसे गुजर कर उस स्थानमें वापस जानेके लिए प्रस्तुत होता है जहाँसे कि वह आया था—यह सारा कालचक्र इस चित्रमें दिखलाया गया है। इस यात्राका कारण स्पष्ट नहीं। सृष्टिका केवल ऐसा नियम है।

'क' से 'ख' तक आध्यात्मिक आधार है। इस पर ही हम सबकी नींव है। इसीसे, विकासकी मन्द क्रियाओं द्वारा, हम प्रकृतिके जैसी जड़ अवस्थाको प्राप्त होते हैं। संसारकी सम्पूर्ण जनसंख्याका नौ-दसवाँ भाग इस समय इसी अवस्थामे है। तब यहाँसे

मनुष्यकी श्रेष्ठ बुद्धि विकासकी श्रेष्ठतर अवस्थाकी अभिलाषा करने लगती है। अन्तको उसे इस बातका अनुभव हो जाता है कि जिस समय वह चाहे, इसका प्राप्त करना उसकी शक्तिमें है। "हम विकासकी उस अवस्थामे रहते है जो कि हमारे विचार हमारे लिए पैदा कर देते है।" हमारी मानसिक आकाक्षाएँ जितनी उच्च होगी, थरथराहटका वेग भी उतना ही जियादा तेज और साफ होगा। यदि आप मैले स्थानमें रहते हैं तो मैलके सिवा किसी दूसरी वस्तुको आकृष्ट करनेकी आप आशा नहीं रख सकते। परन्तु यदि तुम प्रकाशमें रहनेवाले युवक हो तो तुम्हारे शरीरके चारो ओर प्रकाश ही प्रकाश रहेगा; और जिन पदार्थोंके तुम अधिकारी हो उन सबको अपने पास खेंच लोगे।

अब हम तनिक सिहावलोकन करते हैं। मस्तिप्क-केन्द्र डायनमोके सदृश एक माध्यम या यंत्र है। यह विचारको उत्पन्न और प्रकट करता है। भेद केवल इतना है कि यह दूसरे सब यंत्रोंसे अधिक शक्तिशाली और पूर्ण है।

मस्तिष्कके केन्द्र पर इतना प्रचंड बल है कि यह प्रायः सर्वथा स्थिर और शान्त प्रतीत होता है। इस स्थिर केन्द्रसे विचार बाहरकी ओर विकीर्ण होता है। इस विचारकी राशि और गुणका **दारोमदार** शक्ति पैदा करनेवाले यंत्र पर है। उत्पन्न करनेकी क्रिया मनुष्यके अमर भाग अर्थात् इच्छा या **विश्वात्मा**के प्रबल संयोगके द्वारा होती है। शुद्ध रीतिसे साँस लेनेसे इस संयोगको प्रायः बहुत कुछ सहायता मिलती है। शुद्ध रीतिसे साँस लेनेका विचारकी एकाग्रता पर बड़ा अद्भुत परिणाम होता है।

किसी विशेष अवस्थामे विचार किस प्रकार चलेगा, यह बात नीचे दिये चित्रो परसे भली भाँति जानी जा सकेगी। विचारका सम्बंध गतिशास्त्रसे या यथार्थ रूपसे कहे तो बल-विज्ञानसे है। लेकिन इन दोनो शब्दोका प्रयोग अवश्यमेव एक ही चीजके लिए होता है। जिस वस्तु पर ध्यान लगाया जाता है उसकी ओर बलवान् और उन्नत इच्छाके जोरसे विचार सीधा जाता है। यह ध्यान जितना अधिक प्रचण्ड होगा उतनी ही अधिक शीघ्र और सीधी उस विचारकी यात्रा होगी।

चित्र नं० २
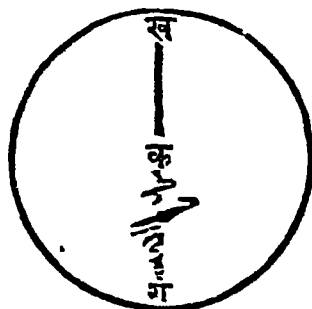
ऊपर दिये हुए चित्र नं० २ मे विचारकी वह क्रिया दिखाई गई है जो कि इसे किसी विशेष लक्ष्यकी ओर भेजते समय होती है। एकाग्र विचारको मस्तिष्क केन्द्र 'क' से चला कर जिस स्थान 'ख' तक पहुँचानेका सङ्कल्प है वह चित्रमें 'क' से 'ख' तक जाता हुआ दिखलाया गया है। इसे संगठित विचार कहा जा सकता है। इसकी थरथराहट प्रायः ऐसी ही सूक्ष्म है जैसी कि इसका संचालन करनेवाले माध्यम अर्थात् आकाशकी लहरें सूक्ष्म हैं।

---

१ "गति पैदा करनेवाला। किसी चालक शक्तिके तौर पर किसी प्रकारका बल और उसका कार्य्य।"

प्रति दिनके संभाषणमे विचारकी जो क्रिया मानी जाती है वह 'क' से 'ग' तक दिखलाई गई है। यह एक असंगठित मनका चंचल और अनिश्चित विचार है। यह टेढ़े मेढ़े मार्गका अनुसरण करता है। इसकी शक्ति बदलती रहती है और अन्ततः अपने लक्ष्य पर पहुँचे विना ही नष्ट हो जाती है।

---

३ विचार-तरङ्ग।

विविध प्रकारके विचार-तरङ्गों पर पुनर्विचार करनेके लिए अब हम इस प्रकरणके नीचे दिये गये चित्र नं० १ पर ध्यान देते है।

चित्र नं० १
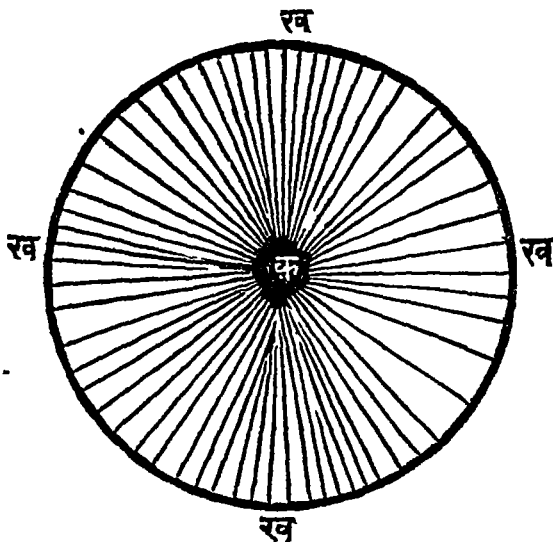
यह चित्र मस्तिष्ककी उस समयकी क्रियाको दिखलाता है जब कि वह दूसरे प्रकारकी मन-तरङ्ग पैदा करता है। उस समय विचार-

क्षेत्रकी शक्ति-रेखाएँ कम एकाग्र होती है; क्योंकि जिस क्षेत्र-फलमें वे फैली होती हैं वह अधिक विस्तृत होता है। ये रेखाएँ उसी स्थिर केन्द्रसे बाहर निकल निकल कर सब बिन्दुओंकी ओर जाती हैं। इसीसे इनका क्षेत्र-फल विस्तृत हो जाता है। विचार-क्षेत्र विद्युत्-शास्त्रियोंके परिचित चुम्बकीय क्षेत्रसे बहुत मिलता-जुलता है। किन्तु सुव्यवस्थित मानसिक क्रियाके प्रभावसे प्रत्येक रेखा लक्ष्य तक पहुँच जाती है।

इस प्रकार 'क' से लेकर सबसे बाहरके चक्र तक विचार किरणें सब ओर एकसे गुण और पूर्ण बलके साथ जाती है। बाहरके चक्रको इस अवस्थामें हम ज्ञात-ब्रह्माण्ड या शायद और भी अच्छा होगा, संसार मान लेते हैं। जिस समय अभ्यासी साधारण ध्यान लगाने बैठता है और उसके मनमें किसी ऐसे शुभ पदार्थके पानेकी कामना या आशा होती है जो कि मनुष्य-समाज या प्रकृति समष्टि-रूपसे (अभ्यासीके प्रकृतिके साथ सम्बंधके कारण) उसे दे सकती है, पर उसका किसी व्यक्ति-विशेषकी ओर निर्देश नही होता, उस समय उसका विचार जिस प्रकार चलता है वह इस चित्रमें दिखलाया गया है। उसके मस्तिष्क-रूपी यंत्रसे विचार उसी प्रकार निःसृत होता है, जिस तरह कि सूर्य्यसे प्रकाश निकलता है।

यह धीरे धीरे, सब पर एक-सा बँट कर और प्रायः अलक्षित रूपसे पड़ता है। जिन पर यह जाकर पड़ता है वे बहुधा विलक्षण दिखाई देनेवाले सुयोगोसे, उस केन्द्र-शक्तिके पास खिंच आते है। विचारकको, चाहे व्यापारके लिए हो और चाहे किसी दूसरी चीजके लिए, इस बातका अनुभव होने लगता है कि उसका ध्यान लगाना कुछ फल लाया है।

चित्र न० २
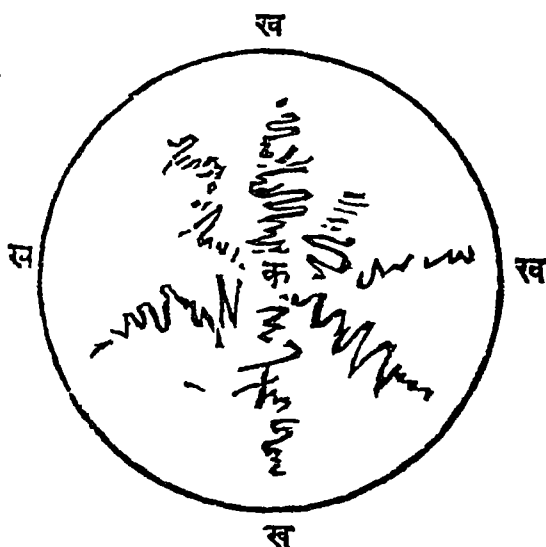
ऊपर दिये हुए चित्र नं० २ में सब दिशाओंमें भेजे हुए विचारका रूप स्पष्ट रीतिसे दिखलाया गया है। यह विचार असमान और चंचल क्रियासे बना है। कई लोगोंको मानसिक और आध्यात्मिक शास्त्रके अध्ययनसे, अथवा विचार-जीवनको उन्नत करनेकी अनेक रीतियोंमेंसे किसी एकसे, कुछ फल प्राप्त नहीं होता। इसका कारण जितना अच्छी तरह यह दिखलाता है वैसा और कोई नहीं दिखलाता।

जिन नियमोके अधीन मानसिक क्रिया है उन पर इन लोगोका अधिकार नहीं होता; और न वे इस विचित्र और शक्तिशाली पदार्थके बलको या इसे एक स्थानसे धक्का देकर दूसरे स्थान तक भेजनेकी रीतिको भली भाँति समझते हैं।

गतिका तीसरा नियम यह है कि " क्रिया और प्रतिक्रिया बलमें समान पर दिशामे विपरीत होती है।

यहाँ हम किसी ऐसी वस्तुकी क्रिया पर विचार कर रहे है जिसे प्राकृतिक या यॉत्रिक साधनों द्वारा बल प्राप्त हुआ है। उदाहरणार्थ,

यदि तुम रबड़की एक गेंद लेकर दीवार पर मारोगे तो वह तुम्हारे पास ठीक उतने ही जोरसे लौट आयगी जितने जोरसे कि तुमने उसे मारा था। ठीक यही बात प्रत्येक दूसरे पदार्थ और परमाणु-राशिकी है। (याद रहे कि पत्थरसे लेकर मनुष्य शरीर तक प्रत्येक पदार्थ परमाणुओका ही बना है। मनुष्य-शरीर, वायु, बिजली, और जल प्रभृति कई एक पदार्थोंके परमाणुओमें सतत गति रहती है। कई दूसरी वस्तुओं—जैसे कि चट्टानें, विशेष रासायनिक पदार्थ इत्यादि—के परमाणु ऐसी अवस्थामें हैं जिसे कि "निर्व्यापार" अवस्था कहा जाता है। अर्थात् वे विश्राम कर रहे हैं और किसी दूसरे पदार्थकी प्रतिक्षामें हैं, जो उन्हे आकर जगावे। उस समय उनके अन्दर दूसरोंके समान ही जीवन और बल आ जाता है। बड़े बड़े विशाल भवन बाहरसे निर्जीव या निर्व्यापार प्रतीत होते है। पर बहुधा धूएँ और वायु-मण्डलकी रासायनिक क्रिया उन्हें वस्तुतः गतिकी एक राशि बना देती है। पत्थरका प्रत्येक सूक्ष्म परमाणु थरथराने लगता है।) जिस बलके साथ प्रकृति या तुम इसे भेजते हो ठीक उसी बलके साथ यह तुम्हारे पास लौट आती है।

अत एव गेंदको दीवारके साथ पटकना एक क्रिया है। जिस बलके साथ गेंद और दीवार मिलते हैं उससे प्रतिक्रिया पैदा होती है। यह प्रतिक्रिया गेंदको वहीं वापस भेज देती है जहाँसे वह आई थी। साथ ही यह बात भी है कि यदि गेंद दीवारके साथ इतने हौले टकराती है कि मुश्किलसे ही कोई प्रतिक्रिया पैदा हो तो वह गति-वेग या प्रेरणाके अभावसे पृथ्वी पर गिर पड़ेगी। **गति-वेग या प्रेरणा उस शक्तिका नाम है जिससे किसी वस्तुको दौड़ाया या हाँका जाता है।**

विचारकी किरणें (विचार एक थरथरानेवाला पिण्ड है यह बात हम ऊपर मान आये है,) जब आकाशमें सीधे बलके साथ भेजी जाती है तब वे जिस बलके साथ बाहर भेजी गई थीं उसके समान बलके साथ ही अपने केन्द्र (मस्तिष्क) पर लौट आती हैं। अतः इस नियमके अनुसार विचार अपने कर्तव्यको लेकर बाहर जाता है, और यदि विचारक संगठित है तो वह अपना काम करके उसी स्थान पर लौट आता है जहाँसे कि वह चला था। इस लिए विचार किसी कामको पूरा करनेके लिए बाहर जाता है, और **यदि तुम उसके स्वामी** हो तो जिस वस्तुके लिए तुमने उसे भेजा है ठीक उसीसे लदा हुआ वह तुम्हारे पास लौट आयगा। **विचार तुम्हारा सेवक है**। यदि इसका उचित प्रयोग किया जाय तो जिस चीजके लिए तुम इसे भेजोगे यह सदा ही तुम्हें उसे ला दिया करेगा।

तंत्र-विद्याके क्षेत्रमें जिन मानसिक शक्तियोंका मनुष्य प्रयोग करता है वे अधिकतर उन्हीं नियमोंका अनुसरण करती है जिनके अधीन प्राकृतिक या अंशतः भौतिक जगत् है। लेकिन इस महत्त्वके तथ्यको न समझ कर मनुष्य उन नियमोंको अपने ज्ञात नियमोसे कहीं बाहर ढूँढता रहा है। मेरा निजका अनुभव है कि गुप्त विद्या इतनी सरल है कि गलीका साधारण मनुष्य भी उसे तुच्छ समझ कर छोड़ देता है। वह रहस्यको उस स्थानमें ढूँढ़ता है जहाँ कि वस्तुतः वह नहीं है। जीवनके सभी रूप सादा है और जिस प्रकार कि प्राचीनोंकी शिक्षा है, वे **एक** जीवन, **एक** नियम, **एक** शब्दके अधीन हैं। विषय जटिल नहीं, उसकी शिक्षायें जटिल हैं। इस लिए ऐसी शिक्षाओंको सरल बनानेके लिए जो कुछ भी किया जा सके निश्चय ही वह सन्मार्ग पर एक पग आगे बढ़ना है।

इस चिन्हसे तू विजयी होगा, यह एक बहुत प्राचीन आदर्श वाक्य है। फ्रीमेसन और अन्य धार्म्मिक तथा तात्रिक सम्प्रदाय इसका प्रयोग करते है। क्या गुप्त सभाओंमें और क्या फ्रीमेसन-समाजोंमें, सव कहीं, इस वाक्यका अभिप्राय ईसाइयोंकी सलीव (सूली) समझी जाती है। पर सलीव हमे विजयी होनेमे कैसे सहायता दे सकती है? इसका वास्तविक अर्थ मै वताती हूँ। विजयी होनेके लिए सलीव नहीं, वल्कि ख्रीष्ट हमारी सहायता कर सकता है। कई लोग खीष्टको एक कल्पित कथा समझते है, इस लिए वह भी हमारी सहायता नहीं कर सकता। हाँ, हमारे भीतरके ख्रीष्टमें यह सामर्थ्य है। परन्तु जब तक हम अपने अन्दर पुण्यकी इस महान् शक्तिका अनुभव न करेंगे, हम कभी भी विजय प्राप्त न कर सकेंगे। मुझे सदा यह प्रतीत होता है कि जिन तात्रिक सचाइयोंको हम अपने मनका एक भाग वनानेका उद्योग कर रहे है उन्हें मानसिक रीतिसे ग्रहण करनेमे हमारे शरीरोंका ठोसपन एक भारी वाधा डाल रहा है। हमें इतने मन मास, लहू हड्डी और पट्ठोंका भार उठाना पड़ता है, मुझे जान पड़ता है, हमारी ऐसी वुद्धि ही हमे इस महान् सत्यका अनुभव करनेसे रोकती है कि हम सव **मन** और **प्रेम** हैं। इस लिए मेरा अपने शिष्योंसे आग्रह है कि वे ऐसे विचारोंको अपने मनसे वाहर निकाल दे और इस वातको समझें और विश्वास करें कि आत्मामें वे किसीसे कम नहीं। मांसल शरीरकी जड़ता ही मानसिक और आध्यात्मिक उन्नतिके मार्गमें रुकावट है। पर मैं यह नहीं चाहती कि तुम अपने शरीरको तुच्छ समझो। यह अपनी जगह वहुत ठीक है और इसकी जरूरत भी है। मै केवल यह चाहती हूँ कि तुम इस सचाईको ग्रहण कर लो कि "**मैं प्रेम हूँ**" "**मैं शक्ति हूँ**"। इसके गूढ़ आशयको समझ लेनेसे तुम इस

तथ्यको स्वीकार कर लेते हो कि **तुम्हारे सारे शरीरमें ऐसे आकाश-तरङ्ग व्याप्त हो रहे हैं जो अनन्तमेंसे सब चीजोंके लिए माध्यमका काम देते हैं।**

तुम प्रेम और शक्ति हो। यदि तुम इस नियमको समझ लो तो प्रेम ही प्रेम होनेके कारण कोई वस्तु तुम्हें हानि नहीं पहुँचा सकती। तुम्हारा शरीर एक सचेतन चुम्बक है और जो स्थान यह वायु-मण्डलमें घेरता है वह भी वैसा ही **महान् आकर्षण-केन्द्र** बन जाता है। "**मैं शक्ति**" हूँ, "**मैं जीवनका नियम हूॅ**"। नियम मेरे शरीरमें प्रकट हो रहा है। जब मै चाहूॅ इससे काम ले सकता हूॅ। ऐसा दिनमे कोई पचास बार कहो। इस सारेका क्या आशय है उस पर खूब विचार करो।

शब्दोंमें बड़ा बल है। इसका यह अर्थ नहीं कि स्वय शब्दोका कुछ मूल्य है। वे उद्‌बोधन कर सकते और करते भी हैं। जब तुम विशेष शब्दों पर ध्यान जमाते हो तो तुम वह अवस्था पैदा कर लेते हो जो कि वे शब्द तुम्हारे मस्तिष्क-रूपी यंत्रको समझाते है। तुम **प्रेम** शब्द बोलते हो। यह एकदम एक विशेष विचार-अनुक्रम पैदा कर देता है। ज्यों ही तुम विचार करने लगते हो, झट गतिकी थरथराहटें पैदा होने लगती हैं। ये निरन्तर बाहरकी ओर फैलती है और तुम्हारे लिए संसारके पास जो सर्वोत्तम पदार्थ है उसके साथ तुम्हारा मानसिक संसर्ग पैदा कर देती है। यह सर्वोत्तम पदार्थ चाहे उन स्त्रियो और पुरुषोंका सर्वोत्तभ भाग हो जिनके साथ कि तुम्हारा लेन-देन या सामाजिक सम्बंध है; चाहे यह कोई सबसे उत्तम खनिज पदार्थ, या पशु, या वनस्पति हो; और चाहे यह आध्यात्मिक जगत् और **तुम्हारे व्यक्तित्वकी** सर्वोत्तम

चीज हो। तुम अपने आपको **प्रेम बनाते** हो और तुम प्रेम-रूप बन जाते हो।' तुम केवल प्रेमकी किरणें अपने चारो ओर बखेरते हो, जिस प्रकार कि भट्टी या सूर्य्य ताप बखेरता है। इस लिए तुम्हारी युद्ध-ध्वनि और सुदशाके लिए तुम्हारा साकेतिक शब्द यह हो—"**मैं प्रेम हूँ, मेरा सारा शरीर प्रेमसे परिपूर्ण हो रहा है।**" यदि इससे तुम्हे कोई भौतिक लाभ न भी हो (जो कि जरूर होगा) तो भी यह परीक्षा एक बार करके देखने योग्य है। और नहीं तो तुम्हें केवल यही देख कर आनंद आयगा कि जिस मनुष्यसे तुम मिलते हो वह किस प्रकार तुम्हारे प्रभावके सामने नहीं झुकता और इस प्रेमके बदलेमें तुमसे लोग कितना प्रेम करने लगते हैं। जो उद्-बोधन प्रेम शब्दसे होता है, तुम्हारे मानसिक शरीरकी ओरसे उसका यह प्रत्युत्तर मात्र होगा। फिर मानसिकसे भौतिक शरीर तक पहुँचना केवल एक दर्जा ही है। इस प्रकार तुम इस छोटेसे शब्दके अर्थोंका न केवल मानसिक रीतिसे बल्कि भौतिक रीतिसे भी प्रत्यक्ष करते हो।

मैंने दिखला दिया कि विचार कैसे चलता है और इसे कैसे चलना चाहिए। मैंने यह भी दिखलाया है कि यह आकाशमेंसे क्यों कर चल सकता है। पर मैंने यह सब बहुत साधारण रीतिसे लिखा है. कारण यह है कि मैं इससे अगले, विचार-क्षेत्रोंवाले प्रकरणमें इसका अधिक पूर्ण रीतिसे वर्णन करना चाहती हूँ।

---

४ चुम्बकीय शक्ति—विचार-क्षेत्र—आकर्षण शक्ति।

इस प्रकरणकी बाते विशेष रूपसे ध्यान देने योग्य हैं। इसका कारण यह है कि एक तो इनकी सहायतासे यह बात स्पष्टतया समझमें आ जायगी कि मनकी एकाग्रताके द्वारा विचारको मार्ग

दिखलाने और इसे **बलिष्ठ बनाने**से इसकी गूढ शक्ति कितनी महान् हो जाती है। दूसरे, इनसे यह भी विदित हो जायगा कि भौतिक और अलौकिक नियमोमे आपसका क्या सम्पर्क है। **दीप्तबल** Radiant Energy और विचार-क्षेत्रोंके कार्य्योंका उल्लेख करनेके पहले यह समझ लेना अच्छा होगा कि "दीप्तबल" किसे कहते हैं और क्षेत्र क्या चीज है।

पहले **गति**से भिन्न **बल**का अर्थ समझिए। बल एक परिभाषा है। इसका प्रयोग किसी ऐसे पिण्ड (या **वस्तु**) के साथ होता है जो चलते चलते जब किसी दूसरी वस्तुके साथ टकराता है तब वह भी फिरने लगती है। पहली वस्तुकी दूसरीको हिला देनेकी शक्ति **बल** कहलाती है। इसका अन्दाजा उस चलनेसे होता है जो कि यह पैदा कर सकता है।

दीप्तबल एक परिभाषा है जिसका प्रयोग किसी ऐसे पिण्ड या वस्तुके साथ होता है जिसमें इस प्रकारका बल हो जो कि वायु-मण्डल, या उस वस्तुको चारों ओरसे घेरनेवाले माध्यमको दिया जा सके। जिस वेगसे यह बल दूसरे स्थानमें भेजा जाता है उसका सारा दारोमदार माध्यमकी बलको भेजनेकी क्षमता पर है; स्वय बल पर कुछ नहीं।

इस प्रकार विचारके परमाणुओं और आकाश-रूपी माध्यममें पूर्ण सहानुभूति है। फ़लतः विचारकी लहरोंको ले जानेके लिए आकाश एक आदर्श माध्यम है।

स्मरण रहे कि कोई वस्तु या पिण्ड जो इस प्रकार दीप्तबल बखेर रहा है, प्रकृतिके दूसरे पिण्डोमें भी गति पैदा कर सकता है। विचारके थरथरानेवाले धर्म्मके विषयमें हमारे कथनका यह एक आव-

श्यक भाग है। ऐसी तरङ्ग-गतियोंको आकाश **सीधी रेखाओंमें** भेजता है। इनकी यात्राकी दूरीकी तो कोई सीमा नहीं। वे अनियत हद तक चल सकती हैं। परन्तु जिस बात पर तुम्हें मैं ले जाना चाहती हूँ और जिसकी मै व्याख्या करना चाहती हूँ उसे वैज्ञानिक परिभाषामें **क्षेत्र** कहते हैं।

चित्र नं० १

अच्छा, तनिक चित्र न० १ को ध्यान-पूर्वक देखिए। केन्द्र 'क' एक ऐसा पिण्ड है जिसमें दीप्तबलको बाँटनेकी शक्ति है। अब इस पिण्ड या वस्तुके बाहर उस सारे स्थानको, जहाँ तक कि पिण्डमे इस प्रकार दूसरी वस्तुओं पर क्रिया करने अर्थात् उन्हें अपने जैसी अवस्थामें लानेकी सामर्थ्य है, वैज्ञानिक लोग **क्षेत्र** कहते हैं। दूसरे शब्दोंमे, पिंडके चारो ओर, और सामनेका शून्य-देश क्षेत्र कहलाता है। अतः ऊपर चित्रमें 'ख' उस क्षेत्रको दिखलाता है। क्षेत्रके **विस्तार**का सारा दारोमदार पिण्डकी **शक्ति** या बल पर है। इसमें जितनी अधिक शक्ति होगी उतने ही अधिक विस्तृत क्षेत्रमें इसका बल बँटा होगा। सोचिए कि संसारके बड़े बड़े मस्तिष्क किस प्रकार अपने प्रभावका अनुभव कराते हैं। या विचारिए कि सूर्यका बल उस विस्तृत शून्यमय अवकाशमे, जो कि उसके और हमारी पृथ्वीके बीच है, किस प्रकार फैल रहा है।

विचार-वलके लिए सवसे उत्तम दृष्टान्त सूर्य्य-रूपी चुम्बकका ही सम्भव है । इस दृष्टान्तसे यह स्पष्ट हो जाता है कि उत्पादक चुम्बक Inducing magnet या विजलीकी धाराके विना चुम्बक-क्षेत्र हो नहीं सकता । प्रत्येक चुम्बकके दो " ध्रुव " होते है । यह परिभाषा चुम्बकके दोनों सिरोंके लिए प्रयुक्त होती है । इनमेंसे एक सिरा ' धन-ध्रुव ' और दूसरा ' ऋण-ध्रुव ' कहलाता है । पाठकोंमेसे कई एक चुम्बक-शास्त्रसे अनभिज्ञ होगे । इस लिए इसकी थोड़ीसी व्याख्या कर देनेसे उन्हें सहायता मिल जायगी । साधारण चुम्बक या चुम्बक-पत्थर एशिया माईनरके अन्तर्गत **मगनेशिया** और भूमण्डलके दूसरे भागोमे पाया जाता है । इसमे ईसपात और लोहेके टुकड़ोको अपने पास खींचने या आकृष्ट करने और सदा **उत्तर** तथा **दक्षिण** दिशाओंको दिखलाते रहनेका गुण हैं । ईसपातके टुकड़ोको चुम्बक-पत्थर पर रगड़नेसे वे कृत्रिम चुम्बक वन जाते है । इससे लोहा चुम्बक-पत्थरके गुण ग्रहण कर लेता है । १६०० ईसवींमें डाक्टर गिलबर्टने मालूम किया था कि लम्बे आकारवाले चुम्बकमें आकर्पण-शक्ति उसके दोनो सिरों पर वास करती प्रतीत होती है । इन दोनो प्रदेशोंका नाम ध्रुव रक्खा गया था । इस लिए चुम्बकका ध्रुव, पृथ्वीके ध्रुवोंके सदृश, चुम्बकके विन्दुओंमेसे एक विन्दु होता है । इनमेसे एक ध्रुव तो उत्तरकी ओर और दूसरा दक्षिणकी ओर रहता है । प्रायः ध्रुव सदा सिरो पर होते हैं । चुम्बकका वह भाग जो दोनों ध्रुवोके वीच होता है, अपेक्षाकृत कम आकर्षण-शक्ति रखता है । यह उतने जोरसे आकार्षित नहीं करता और दोनों ध्रुवोके मध्यमे तो आकर्पण विलकुल ही नहीं होता ।

चुम्बक-शास्त्रका पहला सिद्धान्त यह है कि "एक जैसे चुम्ब-कीय ध्रुव एक दूसरेसे परे भागते, पर भिन्न भिन्न चुम्बकीय ध्रुव एक दूसरेको आकृष्ट करते हैं।" अतः उत्तरकी ओर रहनेवाले दो ध्रुव प्रबल रूपसे एक दूसरेसे परे भागेंगे। परन्तु ऐसे दो ध्रुव, जिनमेसे एक उत्तरकी ओर रहता है और दूसरा दक्षिणकी ओर अर्थात् एक धन-ध्रुव और दूसरा ऋण-ध्रुव, एक दूसरेको आकृष्ट करेंगे।

पृथ्वी स्वय एक चुम्बक है। इसमे दो ध्रुव है। एक उत्तरकी ओर रहता है और दूसरा दक्षिणकी ओर। मनुष्य भी एक चुम्बक है। वास्तवमें प्रकृतिके सब भिन्न भिन्न रूप और नाना आकार चुम्ब-कोंके बने हुए है। प्रत्येक परमाणु और अणुमें उत्तर और दक्षिण ध्रुव विद्यमान है।

मानव-मस्तिष्कके भी धनात्मक और ऋणात्मक रूप है। इसका धन-ध्रुव बड़े मस्तिष्कमे और ऋण-ध्रुव छोटे मस्तिष्कमे है, यह बात तीसरे चित्रमें प्रगट की गई है (मस्तिष्कके भागोंकी व्याख्या पहले प्रकरणमें देखिए)। चित्र नं० २ मे एक साधारण चुम्बकसे साधा-

चित्र नं० ४

रण चुम्बकीय रेखायें निकल कर बाहर फैलती हुई दिखलाई गई है। जो स्थान रेखाओंसे भरा हुआ है वह चुम्बकीय-क्षत्र है।

चित्र नं० ३
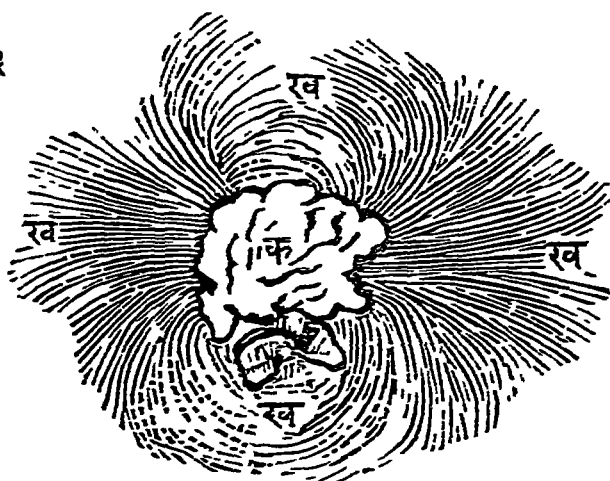
अब हम अपने तात्कालिक विषय '**विचार**' की ओर आते हैं। अब आप शीघ्र ही समझ जायँगे कि **विचार-क्षेत्र** चुम्बकीय क्षेत्रकी रीतियोंका किस प्रकार अनुसरण कर सकता है। मस्तिष्क और **विचार-क्षेत्र** आपके सामने हैं। इस प्रकार ' क ' मस्तिष्क है, और ' ख ' विचार-क्षेत्रकी विचार रेखायें हैं।

मैं पहले कह आई हूँ कि दीप्तबलको बाँटनेके लिए किसी वस्तु या प्रकृतिके पिण्डका होना परमावश्यक है। जब तक क्षेत्र बनानेके लिए—यह क्षेत्र चाहे चुम्बकका हो, चाहे बिजलीका, चाहे रासायनिक हो, चाहे यांत्रिक; और चाहे यह **विचार-क्षेत्र** हो—कोई वस्तु या **शक्ति** न हो तब तक कोई क्षेत्र नहीं हो सकता।

विचार-क्षेत्रकी दशामें बलका सोता और " क्षेत्र " को उत्पन्न करनेवाली शक्ति या प्रकृतिका पिण्ड **मस्तिष्क** होता है। निर्बल और असंगठित मस्तिष्कमें यह क्षेत्र दुर्बल रहता है और इसका प्रभाव भी बहुत परिमित स्थान तक ही होता है। परन्तु जितनी जियादह आकर्षण-शक्ति होगी, जितना अधिक बलवान और संगठित मस्तिष्क

होगा, उतनी ही अधिक सीमा तक इसकी किरणें विखरेगी, उतना ही अधिक विस्तृत इसका क्षेत्र होगा और उतने ही अधिक चिरस्थायी इसके परिणाम होंगे । **विचार-शक्ति**, या मन, जिसका वर्णन मैंने पहले प्रकरणोमे किया है, जब किसी मनुष्यमे उत्पन्न हो तब उसे समझ लेना चाहिए कि वह कोई बड़ा आदमी बननेवाला है। उसका यह वड़प्पन उसके परिश्रम और उसकी शासक बुद्धिके अनुरूप होगा ।

इस प्रकारके श्रेष्ठ पुरुषोमें ईसा, बुद्ध, शेक्सपीयर, वोडीशिया आदि महात्माओंके नाम हैं जिनमे गुण तो भिन्न भिन्न थे, पर उनमे प्रत्येकमे युग-युगान्तर तक बना रहनेवाला बल पैदा करनेके लिए यथेष्ट **शक्ति** थी ।

जब मनःसंयोग (टेलीपेथी) या चिकित्साके उद्देशसे दो मस्तिष्क इकट्ठे कार्य कर रहे हो तब उनमेंसे एकका धनात्मक और दूसरेका ऋणात्मक होना आवश्यक है । परस्परकी सहानुभूतिके द्वारा वे आकाश पर दबाव डालते है और विचार-क्षेत्र इस प्रकार कार्य्य करते हैं कि वे (मेरा अभिप्राय विचार-रेखाओंसे है, मस्तिष्कोंसे नहीं,) उपर्युक्त अवस्थाओंके नीचे दब कर इकट्ठे और संयुक्त हो जाते है । उनके ऐसा करनेसे **आकर्षण** पैदा होता है । वे अपने वलका परिवर्तन या बदला कर लेते है। यह बदला सदा जियादह वेगवालेसे कम वेगवालेकी ओर होता है। इस प्रकार एक मनुष्य सञ्चारक (ट्रांसमिटर) का और दूसरा ग्राहक (रीसीवर) का काम करता है। इनमेंसे एक धनात्मक है और दूसरा ऋणात्मक । नहीं तो **आकृष्ट** करनेके स्थानमें वे **एक दूसरेसे दूर भागें**, क्योंकि " सदृश चुम्वकीय-ध्रुव एक दूसरेसे दूर भागेंगे, पर

एक धन-ध्रुव और दूसरा ऋण-ध्रुव एक दूसरेको आकर्षित करेंगे। इसी प्रकार सदृश मन एक दूसरेसे दूर भागते और असदृश मन एक दूसरेको आकर्पित करते हैं। दूसरे शब्दोंमें यों कहिए कि बलवान् मन निर्बल मनको और निर्बल मन बलवान् मनको आकृष्ट करता है।
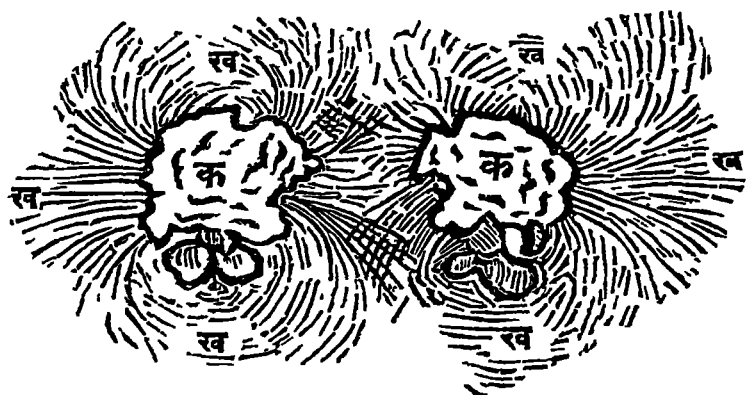
ऊपर दिये हुए चित्र नं० ४ में दिखलाया गया है कि एक मस्तिष्क दूसरेके विचार-क्षेत्र पर किस प्रकार प्रभाव डालता है। यह स्मरण रखना चाहिए कि इस क्रियाका प्रयोग मानसिक चिकित्सा, सफलताकी थरथराहट प्रभृति विविध क्रमो पर विशेप रूपसे होता है।

---

५ मानसिक एकाग्रताकी विधियाँ—प्राणायाम।

हमें यह भूल न जाना चाहिए कि जो गुण सारे पिण्डमें होते हैं वे उसके प्रत्येक परमाणुमे भी होते हैं। अर्थात् प्रत्येक परमाणुमे वे सब बातें पाई जाती हैं जो कि सारे पिण्डमें होती है। मस्तिष्कके उपादान या विचारका प्रत्येक परमाणु अपने पड़ोसके प्रत्येक परमाणु पर उसी प्रकार क्रिया कर रहा है जिस

प्रकार कि एक मस्तिष्क दूसरे मस्तिष्क पर क्रिया करता है । यह क्रिया अपरिछिन्न रूपसे जारी है । यहाँ तक कि विश्व-ब्रह्माण्डके अन्दर प्रत्येक वस्तु अपने आस-पासके देशको विविध प्रकारसे—अपने तापसे, आस-पासके प्रदेश पर अपने कार्योंसे, अपने चुम्बकीय या वैद्युतिक गुणोसे और विचारकी दशामें अपने आध्यत्मिक, भौतिक, अच्छे और मिथ्या गुणोंसे—निरन्तर प्रभावित कर रही है । विचारमें ताप है । शीघ्र-ग्राहक मनुष्यको इसकी उष्ण, शीत, या स्वाभाविक अवस्थाका अनुभव झटपट हो जाता है । मेरी सम्मति है कि शीघ्र ही एक ऐसा यंत्र बनेगा जिससे लोगोंके विचारोंकी गरमीका पता लग सकेगा ।

विचार और उसकी शक्यताओंकी विशालताके कारण ही इसके नियमोंका अध्ययन ऐसा मनोरंजक और इतना जटिल हो रहा है । मनुष्यके अपने शरीरको हिलानेसे आकाशकी स्थितिमे एकदम परिवर्तन होता है और दबाव या भार पैदा हो जाता है । परंतु जब मनुष्य विचार करता है तब इससे भी अधिक प्रबल दबाव पैदा होता है । जब हम कई एक मनुष्योंकी विशेष विचार-रीतियों पर विचार करते हैं तब हमारी समझमे यह बात झट ही आ जाती है कि वे लोग क्षुब्ध समुद्रमे कर्ण-हीन नौकाके सदृश क्यों हैं । ऐसा जान पड़ता है कि वे लोग अपने चारो ओर सब प्रकारकी प्रतिकूल लहरे पैदा कर लेते हैं । इसका परिणाम दुःखमय जीवन होता है । जब एक संगठित विचारक मानसिक शक्तिसे काम लेता है तो वह एकसा दबाव उत्पन्न करता है । उपमासे काम लेते हुए हम कह सकते है कि उसकी नौकाके एक ही ओर वायु बहने लगता है । इससे उसकी नौका अपनी ही पैदा की हुई प्रतिकूल लहरो और चोटोंसे नहीं डूब

जाती। जो मनुष्य एक बड़ी हद तक अपने जीवनको स्वर्गमय बना सकता है मैं नहीं समझती कि वह जान-बूझ कर उसे नरकमय बनानेका क्यों यत्न करेगा। दूसरोंके विचारोंका हम पर कैसा गहरा प्रभाव होता है इसे एक चतुर नटीके दृष्टान्तसे समझिए। वह अपने श्रोतृवर्गके भावोंको धोखा दे सकती है, उन्हें रुला सकती है, डरा सकती है, हँसा सकती है। इसके लिए उसे केवल अपनी मानसिक दशाको ही उत्तेजित करना होता है; परन्तु उस समयके लिए सुननेवालोंकी एक बड़ी संख्या अपने सामनेकी स्त्री पर वस्तुतः **एकाग्र चित्त होकर ध्यान लगाये** होती है। इस लिए जो मनोवेग वह दिखलाती है उसमे वे सब बह जाते हैं।

इस लिए मै अपने शिष्योको आरम्भमें किसी ऐसी वस्तु पर ध्यान लगानेको कहती हूँ जिसके साथ उनका प्रेम हो। यही कारण है जिससे नव-विचारका आश्रय लेनेवाले लोग शरीरकी किसी दूसरी व्याधिकी अपेक्षा दरिद्रताको बहुत शीघ्र दूर कर सकते हैं। उन्हे रोग इत्यादिकी तो खासी आदत रहती है, पर वे दरिद्रताकी चक्कीमे पिसते रहनेके साथ कभी भी सन्तुष्ट नहीं हो सकते।

यदि तुम प्रेमकी किरणे निकालोगे तो घृणा-रूपी निशाचरी भाग जायगी। यदि तुम केवल सफलताका ही चिन्तन करोगे तो इसे प्राप्त कर लोगे। परन्तु यदि तुम इन चीजोंको ही अपना हृदय दे डालोगे तो तुम्हारी कृत-कार्यता केवल कुछ समयके लिए ही होगी। खूब याद रक्खो कि आत्माकी आज्ञाका पालन करना भी आवश्यक है। जब तक आध्यात्मिक और भौतिक दोनों प्रकारकी बातोंमें समान उन्नति न हो, लौकिक आनन्द प्राप्त नहीं हो सकता।

मनुष्य स्वभावका दास है। विशेष अवस्था तक उसका विकास भी स्वभावके अधीन अबुद्धि-पूर्वक ही होता है। पर उसके पश्चात् **मन रूपी मनुष्य**का पूर्ण प्रभुत्त्व हो जाता है। उस समय हम ठीक वही बन सकते हैं जो कुछ कि हमारे मन सोचते है। उस वक्त हम उन ही प्राकृतिक नियमोके अधीन होते है जो कि हमारी सत्ताके अंश है और जो हमारे सार्वत्रिक विकासके लिए बने है। मानसिक विज्ञानकी प्रतिज्ञा है कि हम पापको निकाल कर उसका स्थान पुण्यको दे सकते है। और यह बात है भी ठीक। किन्तु प्रकृतिके नियमोंसे हम कभी बिलकुल मुक्त नहीं हो सकते। हमारी भूले ही हमारे मानसिक विकासकी प्रधान कर्त्री हैं।

पहले प्रकरणोंमे हमने प्रधानतः विचारके समाहृत-रूपमे प्रसारका ही वर्णन किया है। अब व्यक्तिगत औज और रोग-नाशक औजस-शक्ति पर विचार करते हुए हम अपनी शक्तियोंको भीतर एकाग्र कर-नेकी विधियोकी तलाश करेगे। अर्थात् किसी सन्देशको ले जाने, कोई उत्तर लाने, या अनन्तसे जिन विशेष प्रीतियों या सम्पर्कोंकी हमे अभिलापा है, उन्हें आकर्षित करनेके लिए अपने विचारको बाहर भेजनेके स्थानमे अब हम अपनी विचार-शक्तियोंको भीतरकी ओर फेरनेका विचार करेंगे। इसके लिए हमें कोई ऐसी विधि निका-लनी चाहिए जिससे विचारकी एक भी किरण बाहरकी ओर जाने न पाये।

मै यह वात मान लेती हूँ कि शिष्योको इस बातका पहलेसे ही ज्ञान है कि सारी शक्ति भीतरसे ही आती है और सारा सार अन्दर ही है, अर्थात् आत्माके बाहर दृष्टि डालनेकी कोई भी आवश्यकता नहीं। तुम्हारे भौतिक शरीरके भीतर सर्व मानसिक शक्तियाँ भरी

पड़ी है। तुम्हारा आध्यात्मिक या **सूक्ष्म-शरीर** भी इसीके भीतर है। जीवन तथा कथन-मात्र मृत्युका, प्रेमका, सत्यका, शक्तिका, और जो भी घटना कभी हुई है उसका सारा ज्ञान और आत्माकी सारी शिक्षाये भूतकी स्मृतिमें बंद है—यह सब तुम जानते हो। पूर्व जन्मोंकी स्मृतिके तालेको खोलनेकी ही देर है कि तुम अपने सामने एक ऐसे ज्ञानका भाण्डार देखोगे जिसके सम्भव होनेकी कल्पना भी तुमने पहले न की होगी।

किसी हद तक हम अदृष्टके अधीन भी हैं। पर जहाँ तक प्रत्येक जन्मकी साधारण घटनाओंका सम्बंध है, हम अकेले ही उनके लिए उत्तरदाता हैं। प्रत्येक स्त्री और पुरुष एक शक्ति है। उनके अन्दर देवत्वकी सारी सम्भाव्यता है। उन्हें प्रकाशके लिए बाहर तलाश करनेकी जरूरत नहीं। यह सब उनके भीतर मौजूद है।

शिष्यके लिए इस प्रकरणका समझना सबसे कठिन है। यह विचित्र बात है कि वह इस शिक्षाको चाहे सैकड़ो पुस्तकोंमें क्यो न पढ ले, चाहे सहस्रों गुरुओंके मुखसे इसे क्यों न सुन ले, पर जब तक वह उन्नतिकी विशेप अवस्थाको प्राप्त नहीं होता तब तक इस तथ्यके महत्त्वका अनुभव नहीं कर सकता।

भीतर ध्यान जमानेकी यह रीति अतीव अमूल्य और महत्त्व-पूर्ण है। जिन क्रियाओंका उल्लेख मैंने पहले प्रकरणोंमें किया है उनका सम्बध जितना भौतिक पदार्थोंके साथ है उतना आध्यात्मिकके साथ नहीं। पर यह विधि अधिकतर आत्माके प्रदेश पर लागू है।

मैं नहीं चाहती कि मेरे आशयको समझनेमें भूल हो। सारे विचार, सारी उन्नतिकी भाँति भीतरसे निकलते है। पर विशेष अवस्थाओंमें तुम इन विचारोंको बाहर भेज देते हो और विशेष अन्य

अवस्थाओंमें ये भीतरकी ओर मोड़ दिये जाते हैं। इस प्रकार तुम्हारी प्रज्ञाका सारा प्रकाश तुम्हारी आत्मा पर इकट्ठा हो जाता है।

हम अपने विचारोंको लम्बा बढ़ा कर अपनेसे बाहर भेजते है। उनकी यह यात्रा या तो किसी कार्य्य-सम्पादनके लिए, या किसी रोगीको चङ्गा करनेके लिए, या किसी मित्रके पास सन्देश ले जानेके लिए, या किसी अन्य ऐसे भौतिक प्रयोजनके लिए होती है जो कि अपने आपमें तो अच्छा होता है, पर जो स्वयं विचारकके लिए सदा उच्चत्तम आध्यात्मिक मङ्गलका देनेवाला नहीं होता। यदि तुम इस प्रकरणके नीचे दिये हुए चित्र पर दृष्टि डालोगे तो तुम्हें इस विधिका प्रयोग देख पड़ेगा। सबसे बाहरके चक्रको मस्तिष्ककी सीमा समझिए। यह सीमा मस्तिष्क-रूपी यंत्रकी है, उससे उत्पन्न हुई शक्तिकी नहीं।
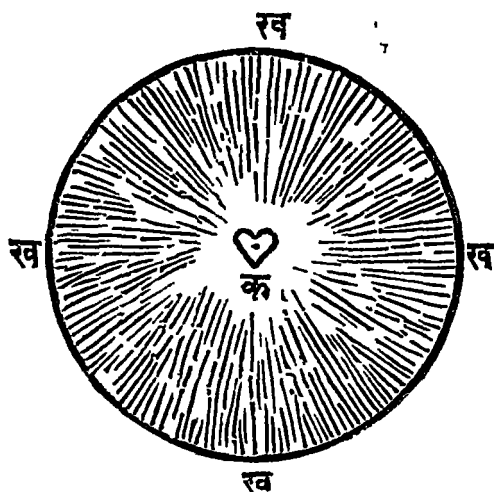
इस चक्रको मैंने 'ख' से चिह्नित किया है। 'क' शारीरिक हृदय है। रोजीक्रूश्यन सम्प्रदायकी शिक्षाके अनुसार हृदय शरीरके आकाश-केन्द्रोंकी वेदी है। अब विचारकी किरणे, बाहरकी ओर बढ़ानेके स्थानमे प्रत्यक्ष हृदयकी ओर भीतर मोड़ दी जाती हैं। ये किरणें

या थरथराहटें 'क' से 'ख' की ओरके स्थानमे 'ख'से 'क' की ओर चलती है। इस लिए अँधेरी लालटैनकी भाँति बाहरसे कुछ भी दिखाई नही पडता। सारा प्रकाश भीतर ही इकट्ठा हो रहा है।

मनकी सामान्य प्रकारकी एकाग्रताकी भाँति इसमे भी आरम्भमें ही बहुत उद्योग न करना चाहिए। मनको एकाग्र करनेके लिए जो विधि पहले बताई गई है यह उससे भी अधिक कष्टकर है। तंत्र-विद्याके अतीव उत्सुक विद्यार्थियोके छोड़ कर बाकी सबको यह पहली विधिकी अपेक्षा कम मनोरञ्जक मालूम होती है। साथ ही जहाँ सच्ची उन्नातिकी अभिलाषा हो वहाँ तो इस बातका खयाल रखना नितान्त आवश्यक है।

जब तक हम पुस्तको और पाठोंसे शिक्षा ले रहे हैं तब तक हम नये छात्र ही हैं; और जो ज्ञान हम प्राप्त करते है वह उत्तम होते हुए भी बासी है। पर जब एक बार हमने वस्तुतः ध्यान लगाना सीख लिया तब फिर हम देव-मन्दिरके बाहर ही खड़े नहीं रहते। हमे दूसरोंके आश्रयकी आवश्यकता नहीं, **हम अपने आप जान लेते** हैं। पूर्वोल्लिखित चित्रका भली भाँति अध्ययन करो। तब मनमें कल्प-नाको दृढ बिठला कर शान्ति-पूर्वक बैठ जाओ और जिस प्रकार मैंने बतलाया है, अपने विचारोंको भीतरकी ओर मोड़ो।

मैंने देखा है कि यदि शिष्यगण ध्यान लगाते समय किसी एक शब्द या अनेक शब्दोंका प्रयोग करें तो सिद्धिकी सम्भावना बढ़ जाती है। इसके लिए मैं ये प्रस्ताव करती हूँ—

गहरा साँस लो, परन्तु पूर्णतया सम रूपसे और बिना किसी आ-यासके। श्वासोंको गिनने, या देर तक थामे रखनेका यत्न न करो। सारी क्रिया बिलकुल स्वाभाविक रीतिसे होने दो। इसमें अपनी ओर-

से बल न लगाओ। पेटसे बल्कि इसके भी पीछेसे अर्थात् मणिपूर-चक्र (Solar plexus) से निकले हुए गहरे साँसका उन सब प्रयत्नो पर विचित्र और प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है, जो कि ध्यान, योग और सूक्ष्म-दर्शिता प्रभृति शक्तियोंके लिए किये जाते है।

जब तुम अन्दर सॉस खींचो तो विचार करो। अपने मस्तिष्कके प्रत्येक कणके साथ '**प्रेम**' **का चिन्तन करो**। प्रेम शब्दके साथ कौनसे भाव सम्बद्ध हैं, और यह किस प्रकार परमात्माके साथ तुम्हारा सम्बन्ध कराता है, इसका विचार इस शब्दके जापके साथ साथ करो। "मै सदासे प्रेम हूँ। मैं दिव्य प्रेम हूँ। मेरा संकल्प इस शरीरमें अपने देवत्त्वको प्रत्यक्ष करनेका है।" साँसको अन्दर खींचते और हौले हौले और निर्विकार-रूपसे बाहर निकालते समय इसका बार बार जाप और चिन्तन करो।

पाँच दस मिनिट तक इसका जाप करते रहो। "**प्रेम**" या "**प्रज्ञा**" "**जीवन**" "**देवत्व**" इनमेंसे किसी एक पर पूरा मन देकर विचार करो और जब तक पूर्ण-रूपसे उसे ग्रहण न कर लो तब तक निरन्तर जाप करते रहो। इसे रसकी तरह पेट भर कर पी जाओ। जब पी चुको, तब इसे दृढ़ताके साथ थामे रक्खो, और कभी ढील होकर निकलने न दो।

जब तुम इन शब्दों पर विचार करते हो तब क्रमशः अपने आपको इनकी अवस्थाओंके साँचेमें ढालते जाते हो। आपके लिए शायद सबसे उत्तम शब्द "**शक्ति**" है। इसके अन्दर बहुतसे भाव भरे पड़े हैं। किन्तु इसका **जो** भाव तुम समझते हो उसका स्पष्ट अनुभव करो। गौण फलोंको लेकर न बैठ जाओ और न पूर्वोक्त भीतरी नाभिको छोड़ कर विचारोंको इधर उधर फिरने दो। इसी लिए

मैंने पहले मनको एकाग्र करनेके दूसरे प्रकार दिये है; क्योंकि उन्हें सीखना सुगमतर है और वे शिष्यको वर्तमान कठिन कार्यके लिए तैयार करते है। याद रक्खो कि तुम्हारा विचार तुम्हारे शरीरको सँचे-मे ढाल सकता है। जैसे तुम्हारे विचार होंगे वैसे ही तुम बन जाओगे। इस प्रकार जब तुम अपनी सम्भवनीय शक्ति, प्रज्ञा और प्रेम पर दस मिनिट या इससे अधिक समयके लिए समाधि लगाते हो तो ये चीजें वस्तुतः तुम्हारे अन्दर बढने लगती है और जब तक तुम इन पर बुद्धि-पूर्वक विचार करते हो तब तक इनमें परिणत हुए बिना रह नहीं सकते।

अच्छा, जब तुमने इतना कर लिया तब फिर कुछ आगे चलनेके लिए उद्योग करो। लेकिन यद्यपि तुम सब पाठ एक साथ पढ रहे हो, परन्तु इन दोनोंका अभ्यास एक साथ नहीं कर सकते। इस लिए एक समयमें तुम्हें एक ही कार्य करना चाहिए।

पूर्वोक्त रीतिसें बैठ कर एकसा साँस लो। अब प्रश्न करो और मनको खाली करके उत्तरको ध्यान-पूर्वक सुनो। कोई एक या दो मासमें तुम्हे एक स्पष्ट सन्देश मिलेगा। अधीर मत हो, तुम इसमे जल्दी नहीं कर सकते। ठीक उसी प्रकार ध्यान लगा कर सुनो, मानों तुम किसी मनुष्यकी आवाजको सुननेकी प्रतीक्षा कर रहे हो। मन-को एकाग्र करके सुनो। अन्तको तुम्हे प्रत्यक्ष या संस्कार-रूपसे अवश्य उत्तर मिलेगा।

कई लोगोंके लिए मस्तिष्कको विचारोंसे खाली करना बहुत कठिन होता है। इस क्रियाका सिखलाना भी कुछ कम सुगम नहीं है। फिर भी मैं समझती हूँ कि इसके लिए सबसे उत्तम रीति यह है कि इसे क्रमशः किया जाय। पहले एक मिनिट तक सब विचारोंको

दमन करनेका यत्न करो और दिन पर दिन इस समयको शनैः शनैः बढाते जाओ; इस प्रकार तुम्हें अपनी मस्तिष्क-रूपी मशीन पर पूर्ण प्रभुत्व प्राप्त हो जायगा। तुम अपनी इच्छाके अनुसार, जब चाहो, विचारोको बिलकुल विलुप्त कर सकते हो, और जब चाहो, उनको किसी विशेष विषय पर लगा सकते हो। यदि शीघ्र ही कोई फल न निकले तो तुम्हें हताश न हो जाना चाहिए। एक क्षणमें सीख लेना तुम्हारे लिए सम्भव नहीं। इसके लिए समय चाहिए। ज्ञान-प्राप्तिमें तुम्हें जितना अधिक समय लगेगा उतना ही वह ज्ञान अधिक सम्पूर्ण होगा और साथ ही उसके परिणाम भी अधिक चिरस्थायी होगे।

---

६ विचारकी लहरें कैसे पैदा की जाती हैं।

मनको एकाग्र करनेकी शक्ति प्राप्त करनेके दो लक्ष्य है। पहला, चेतनाको नई और अच्छी दशामें परिणत करना; और दूसरा, आध्यात्मिक बातोका यथाशक्ति उच्चसे उच्च ज्ञान प्राप्त करना।

याद रक्खो कि जिस चीजके बनानेकी तुम्हे कामना है वह स्वभाव है। इसके द्वारा तुम अपने शरीरका नये सिरेसे निर्माण कर सकते हो। यह भी स्मरण रहे कि नियमित और सतत ध्यान-योगके लिए यह परम आवश्यक है कि तुम किसी क्रियाको प्रायः अबोध-पूर्वक दुहरा सको; क्योंकि किसी विषय-विशेष पर जितना अधिक तुम्हारा मन एकाग्र होगा उतनी ही मनमें अधिक स्थिरता आयगी। ईसी प्रकार यदि तुम नियमका पालन नहीं करते तो जिस विचार-शक्तिको व्यक्त करना तुम्हारा धर्म्म है, उसके दबे रहनेका भय है।

मस्तिष्कके सूक्ष्म रंध्रमय उपादानमें शुद्ध विचारकी इस क्रियासे भारी परिवर्तन पैदा हो जाता है। इसे यह क्रिया वस्तुतः बढ़ा

सकती है । साथ ही अशुद्ध विचार द्वारा बना हुआ उपादान इससे घिस जाता है । यथार्थ विचार या मनको एकाग्र करनेके लिए जो भी यत्न होता है उससे परमाणुओंका एक नवीन समूह कार्य करने लगता है । इससे नवीन उपादानकी सृष्टि और पुरानेका विनाश होता रहता है ।

सारे संसारमें मनुष्यके मस्तिष्कके समान नमनशील वस्तु और दूसरी नहीं है । इसके स्वामीकी या इस पर प्रभाव रखनेवाले किसी दूसरे व्यक्तिकी इच्छा इसे जैसे साँचेमें ढालना चाहे ढाल सकती है । इसी प्रकार यथार्थ आवेगके प्रयोगसे गुरु अपने शिष्यके मनकी अवस्थाको उच्च कर सकता है और उसकी शारीरिक तथा मानसिक प्रकृतिकी पुनः रचनामें उसे सहायता दे सकता है ।

जब मनुष्य उस अवस्थामें पहुँच जाता है जिसमें वह इस बातका अनुभव कर लेता है कि उसकी इच्छा उसके लिए क्या कुछ कर सकती है तो फिर उसे अपने आपको ढालनेके कार्यमें गुरुकी सहायताका प्रयोजन नहीं रहता । किन्तु बहुधा ऐसा भी होता है कि किसी ऐसे मनुष्यके अंदर आत्मा जाग्रत होती है जिसकी कि इच्छा अभी थोड़ी बहुत सो रही है । ऐसी अवस्थामें गुरुके उपदेशका थोड़ा बहुत प्रयोजन बना रहता है ।

जिज्ञासुके मनमें अपनी शक्ति तथा देवत्वके विषयमें अकसर संशय पैदा हो जाता है । जब तक यह संशय बना हुआ है उसे इस तंत्र-शास्त्रसे बहुत कम लाभ प्राप्त होगा । अपनी शक्तियोंके विषयमें बुरी सम्मति ही मनुष्यको आगे नहीं बढ़ने देती । मनुष्य भूल जाता है कि जीवनकी प्रत्येक घड़ीमें वह अपने भविष्यत्को घड़ रहा है ।

अर्थात् उसके आजके सारे विचार कल या परसों भौतिक आकार धारण कर लेंगे। इस लिए शुद्ध भावसे मनको एकाग्र करनेमें जितना वह चूकता है, दैनिक अभ्यासोंको जितना वह छोड़ता है, उतना ही अपने भावी आनन्दकी प्राप्तिमें विलम्ब करता है।

गहरा सँास लेनेसे, जिसकी कि मैंने अभी सिफारिश की है, रुधिरकी गति तेज हो जाती है। साथ ही इसका असर किसी प्रकार मस्तिष्कके उपादान पर भी होता है। इससे दृष्टि, आध्यात्मिक अर्थोंमें श्रवण शक्ति और बुद्धि सब ही अधिक तीक्ष्ण हो जाती है। जब तुम इस प्रकार प्राणायाम करते हुए किसी प्रबल और सुनिश्चित विचारको सोचते हो तब इससे वह विचार या सन्देश सूक्ष्म तंतुओं, रक्तवाहिनी नाड़ियो, और पट्ठोंके द्वारा प्रत्येक अङ्गमे पहुँच जाता है। यहो तक कि सारा शरीर उसीका राग अलापने लगता है और विचारकी शक्तिसे परिपूर्ण हो जाता है; यहॉ फिर मनकी एकाग्रता काम देती है। जो सुनिश्चित संदेश तुम्हारे समाचार भेजनेके भौतिक तारोंके द्वारा भेजा जाता है वह लक्ष्य तक पहुँच कर एक दृढ और निश्चित चिन्ह बना देता है। किन्तु निर्बल विचारका ऐसा कोई परिणाम नहीं होता। इस लिए यदि तुम किसी शारीरिक व्याधिको दबाना चाहते हो तो जिस भागके उद्धारका प्रयोजन है उसे साफ पकड़ लो और अपनी सारी विचार-शक्तिको अंदरकी ओर मोड़ कर उस अंगको एक प्रबल संदेश भेजो।

" मै बलवान् हूँ, मैं चङ्गा हूँ, मैं दिव्य हूँ। सब कहीं जीवनका समुद्र लहरे मार रहा है और मेरे विचार तथा मनमें अनन्त जीवन निवास कर रहा है। मै अपनी जीवन-यात्रामे पग-पग पर अपना भविष्यत् बना रहा हूँ। वह भविष्यत् पूर्णता होगा। मैं अजेय हूँ,

मुझे कोई भी चीज हानि नहीं पहुँचा सकती । मेरा सङ्कल्प ठीक इसी समय अपनी शक्तिको अपने शरीरमें प्रत्यक्ष करनेका है । ”

इन वाक्योंका तोतेकी तरह उच्चारण न करो । इनके सारे अभिप्रायः पर विचार करो । ये जो कुछ तुम्हारे पीछे धरते हैं और जो कुछ तुम्हारे आगे खोल देते हैं उस सारेको सोचो । अब, हॉ· अब, तुम अपना भविष्यत् बना रहे हो । जब तुम मनको एकाग्र करके बैठते हो तब उस समय अपना दैव—अच्छा, बुरा या मध्यम—तैयार करते हो ।

जब तुम लगातार कुछ मिनटों तक—पहले लौकिक पदार्थों पर, और बाद आत्माके अधिक दुःसाध्य रूपों पर—मनको एकाग्र करना सीख जाओ तब अपनी भावी आशाओका ध्यान करनेके लिए प्रति दिन थोड़ासा समय निकालनेका स्वभाव बना लो । इस ध्यानमें बैठनेका फल-स्वरूप जो शान्ति और प्रसाद मिलता है उसे जब तुम जानने लग जाओगे तब उसके अनुसार ही इसके महात्म्यको भी समझने लगोगे । पहले तो ये शान्ति और प्रसाद शीघ्र ही दूर हो जायँगे, पर जैसे जैसे तुम्हारा मन अधिक संगठित होता जायगा वैसे वैसे इनमें भी स्थिरता आती जायगी । और एक समय आयगा, जब कि तुम इस शान्ति और प्रसादको अपने साथ रख सकोगे । न केवल अपने पास ही रख सकोगे, बल्कि इन्हे दूसरोको भी दे सकोगे ।

संसारके अन्य पदार्थोंकी भाँति सारी विचार-शक्ति भी, जिसके रख छोड़नेके लिए मैं तुम्हें कह रही हूँ, क्षीण हो जाती है । इसी लिए व्यापार या किसी दूसरे विषयमें तुम्हें थोड़ी सफलता प्राप्त होती है ।

यदि तुम्हे व्यापारिक सफलताकी कामना है तो अपनी सारी विचार-शक्तिको किसी अवश्य ही सफल होनेवाले विषय पर इकट्ठा कर दो और उसका ऊँची आवाजसे नाम लो। अपने विचारमे उसे एक सफलताके रूपमें देखो और फिर उस सफलताके प्रत्यक्ष होनेकी आशा रक्खो।

जब इतना हो जाय तब अपने विचारोंको गूँथ कर उनकी प्रबल लहरे बनाओ। देखो कि ये लहरें उस पदार्थके पास जाकर उसे सब ओरसे घेर रही हैं, यहाँ तक कि वह इनमे निमग्न हो रहा है। ये लहरे बिजलीकी चमकसे भी अधिक बलवती और शीघ्रगामिनी हैं। ये बिजलीकी बैटरीसे भी अधिक घातक है। ये अपनी बारीमें चुम्बकका काम करती हैं। जिन लोगोंका उस विषयसे सम्बंध होता है, ये उनकी सब उत्तम शक्तियोंको आकर्षित कर लेती है। फिर वे लोग उसकी सफलताके लिए भर सक यत्न करते है। आप पूछेगे कि विचारकी लहरोको गूँथनेकी क्या रीति है।

मैं बल-पूर्वक उपदेश देती हूँ कि इसमें कल्पना-शक्तिसे सहायता लो। पहला अंग मनको एकाग्र करनेकी शक्ति है। दूसरा अग यह है कि तुम अपनी कल्पनामें अपने मन-रूपी यंत्रको इस आश्चर्य-शक्तिसे परिपूर्ण एक अतीव सूक्ष्म रस पैदा करता देखो। तब अवश्यमेव पहले प्रकरणमें बताई हुई रीतिके अनुसार इसे बढाओ, और नीचेके चित्रमें दिये हुए मार्गका अनुगमन करने दो। ‘क’ मस्तिष्क हैं, ‘ख’ विचार-शक्ति है जो कि आकाशमेंसे यात्रा करती है, और ‘ग’ वह विषय है जिसको तुम सजीव मन-द्रव्यकी इस प्रबल लहरमें लपेटना चाहते हो।
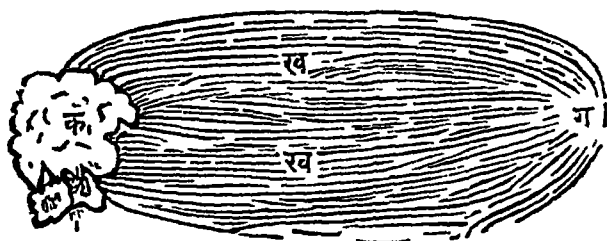
इसका प्रति दिन दो तीन वार अभ्यास करो। जब तुम अपनी आज्ञाओंका पालन करनेके लिए अपने मस्तिष्ककी अवस्थाको यथेष्ट संगठित बना लोगे तब फिर तुम कभी न चूकोगे। इन प्रकरणों पर पूरी तरह चलनेसे यह अवस्था प्रायः दो या तीन मासमें प्राप्त हो जानी चाहिए। देखो, यह कोई लोकोत्तर कर्म नहीं है। यह तो सुव्यवस्थित शिक्षाकी केवल एक प्रणाली है। इसके परिणाम ऐसे ही निश्चित है जैसे कि आगरेका ताजमहल।

विचारको सदा एक वस्तु समझो। किसी वस्तु-विशेपके चारों ओर बिजलीकी झलकको कुछ समय तक फिराते रहनेका जो परिणाम होगा, उसकी कल्पना तुम सुगमतासे कर सकते हो। या और लो, लोहेकी सलाख पर चुम्बक-शक्तिकी धाराका जो परिणाम होता है उसे तुम भली भाँति जानते ही हो। तुम्हारा विचार, जैसा कि मैं पहले भी कई वार कह आई हूँ, इन दोनों वस्तुओंसे बलवान् है। जब तुम यथार्थ अवस्थामें इसे किसी वस्तु-विशेप पर चलाते हो तब वैसे ही परिणाम पैदा होते हैं। क्योंकि जिस प्रकार चुम्बन-शक्तिका प्रवाह उपपादन (Induction) पैदा करता है उसी प्रकार तुम्हारी विचार-शक्ति अपने आकाशमय द्रव्यको उस चीजके अंदर ले जाती है, जिस पर कि तुम इसका असर डालना चाहते हो। उपपा-

दन* (Induction) एक वैज्ञानिक परिभाषा है। इसका अर्थ है चुम्बकीय या वैद्युत दशाका, विना किसी संसर्गके निकटता

चित्र नं० १
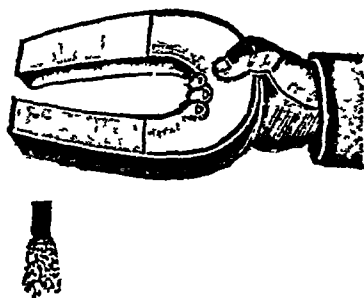
* (क) एक चुम्बकको एक हाथमें पकड़ो, और एक लोहेके टुकड़ेको दूसरे हाथमें पकड़ कर चुम्बकके ए ध्रुवके समीप लाओ। ध्यान रक्खो कि लोहेका टुकड़ा चुम्बकको न छूए। अव किसी दूसरे मनुष्यसे कहो कि लोहेके टुकड़ेके दूसरे सिरेके पास; जो चुम्बककी तरफ नहीं है, लोह-चून लाये। तो लोहचून लोहेके टुकड़ेसे चिमट जायगा। लेकिन यदि इस टुकड़ेको चुम्बकसे परे ले जाओगे या चुम्बकको हटा लोगे तो फौरन लोह-चून नीचे गिर पड़ेगा, मानों लोहेके टुकड़ेमें चुम्बकके पास लानेसे चुम्बकीय असर पैदा हो गया। इसी तरह लोहेके टुकड़ेको चुम्बकके पास लाकर इसमें चुम्बकीय शक्ति पैदा करनेकी क्रियाको चुम्बकीय **उपपादन** कहते हैं।

चित्र नं० २
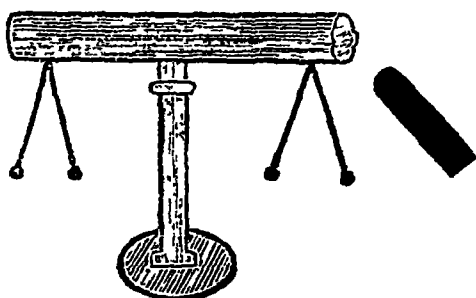
(ख) एक पीतल या किसी और विजलीके प्रवाहको ले जानेवाले पिण्डका सिलिण्डर लो जो शीशेके पाये पर स्थित हो, और उसके दोनों सिरों पर कतिपय सरकण्डेके गूदेकी गोलियाँ लटक रही हों, जैसा कि चित्र नं० २में दिखलाया गया

द्वारा, एक विजली भरी हुई वस्तुसे दूसरी विजलीसे खाली वस्तुमें संक्रमित करना।

विद्युत्-शास्त्र और वस्तुतः भौतिक विज्ञानके सारे प्रदेश तथा विचार और आत्माके इन्द्रिय-गोचर जगत्के बीच बड़े विलक्षण सादृश्य है। मनुष्य जितनी अधिक छान-बीन करता है उतना ही अधिक यह निश्चित प्रतीत होता है कि दोनों एक ही नियमोके अधीन हैं।

---

७ औजस शक्ति—औजस इच्छा।

भारतीय योगियोंकी ध्यान-विधिका भी यहाँ कुछ वर्णन करना जरूरी है; क्योंकि उसके विना ये निवंध अपूर्णसे रह जायँगे। वे लोग **अध्ययनमें सारा जीवन लगा कर ही** यह अभ्यास प्राप्त करते हैं। पश्चिममें हम लोगोंके पास इसके लिए इतना समय नहीं है। और न मै समझती हूँ कि " विचारको मार डालने " की विविध विधियोंसे कुछ लाभ ही हो सकता है। जो लोग " **अविज्ञेय** " से

है। अव उसके एक सिरेके पास कोई बिजलीसे भरा हुआ पिण्ड लाओ। इस पिण्डके लाते ही दोनों सिरोंकी गोलियॉ एक दूसरेसे अलग हो जायॅगी। यदि बिजली भरे हुए पिण्डको हटा लिया जाय तो फिर गोलियॉ पास आ जायॅगी। बस मालूम हुआ कि बिजलीके प्रवाहको ले जानेकी शक्ति रखनेवाला नल बिजलीसे भरे हुए पिण्डके पास लानेसे साराका सारा बिजलीसे भर जाता है। और उस पिण्डको हटानेसे फिर बिजलीसे खाली हो जाता है।

पर किसी परिचालन-शक्ति रखनेवाले पिण्डके एक सिरेके निकट कोई बिजलीसे भरा हुआ पिण्ड लाकर उसके इस प्रकार बिजलीसे भर जानेकी क्रियाको कि उसके निकटस्थ सिरे पर विरोधी और दूरके सिरे पर उसी प्रकारकी बिजलीकी शक्ति पैदा हो, **वैद्युत उपपादन** कहते हैं।

केवल दैवी ज्ञानके समाचार प्राप्त करनेके लिए ही मनको खाली करना चाहते हैं वे ही इन विधियोके पक्षपाती हैं। किन्तु मैं जानती हूँ कि यदि हम आरम्भमे ही वहुत जियादहके लिए यत्न न करें तो विना किसी विशेष आयासके अपने मनको खाली कर सकते है। हमें स्मरण रहना चाहिए कि जो लोग ध्यान लगानेकी विधियोंमें कोई स्वाद लेना चाहते हैं उनके शरीरोंका वलवान् और स्वस्थ होना आवश्यक है। क्योंकि जव हम किसी वस्तु-विशेष पर कुछ समयके लिए मनको लगाते हैं तव विचारके स्थूल परमाणु, जो ध्यान-वस्तु या ध्यानके **स्थान** तक पहुंच चुके है, अपने चलनेके मूल स्थानमें ही लौट कर नीचे वैठ जाते है। अर्थात् वे छन कर नीचे गिर पड़ते हैं और उनका स्थान सूक्ष्म परमाणु ले लेते हैं। इससे विचारको वड़ा भारी मानसिक आयास करना पड़ता है। इस लिए इस आयासको **सहन करने**के लिए यदि वहुत अच्छी तन्दुरुस्ती न हो तो पागलपन या मस्तिष्क-ज्वर पैदा हो जाता है। किन्तु यदि तन्दुरुस्ती, विलकुल ठीक है तो ध्यान-योगसे अभ्यासीको लाभ पहुँचेगा और कोई हानि न होगी। अभ्यासको शनैः शनैः वढ़ाते जाओ; इससे तुम्हारे सभी मनोरथ और सभी प्रयत्न सफल हो जायँगे।

ध्यान लगानेके लिए जलसे भरे हुए कांचके ग्लासका प्रयोग करना कोई वुरा उपाय नहीं है। अपनी कामनाको मनमें स्थिर करके उस शब्दका **वर्ण-विन्यास** प्यालेमें देखनेका यत्न करो; मानों पानी पर वे अक्षर लिखे हुए हैं। यह रीति ध्यानको दृढ करनेमें सहायता देती है। यदि पानीका प्याला पास न हो तो पेंसिल और कागजके टुकड़ेके साथ यत्न करो। भाव केवल यही है कि आँखके "रेटिना" द्वारा मस्तिष्क तक सन्देश ले जाया जाय; क्योंकि रेटिना फोटोग्राफ-

रके शीघ्र-ग्राहक प्लेट (Sensitiveplate) की तरह चित्रको पकड़ लेता है।

जिस समय भी तुम्हें अवसर मिले बैठ जाओ—कोई विशेष समय नियत करना प्रायः असम्भव ही है। सर्व-साधारणके प्रयोगके लिए लिखे हुए किसी भी प्रकरणमें प्रत्येक व्यक्तिकी जुदा जुदा जरूरतके अनुकूल जानकारी देना प्रायः असम्भव है। यदि मेरे शिष्य अपनी व्यक्तिगत कठिनाइयोंका वर्णन करेंगे तो इससे मुझे और उन्हें, दोनोंको, सहायता मिलेगी। चिट्ठी-पत्री और समयके मूल्यके लिए ढाई शिलिंग मिल जाने पर मै बड़ी प्रसन्नता-पूर्वक उनकी सर्व आवश्यकताओंका पूरा उत्तर दे सकूँगी।

निम्न लिखित संक्षिप्त नियमोंको याद रक्खोः—

यदि तुम्हें धनकी आवश्यकता है तो उसे अपने पास आता हुआ देखो। तुम्हारा ध्यान व्यापक हो। तुम्हारे अंदर श्रद्धा हो। फिर जिस चीजका तुम्हें प्रयोजन है उसकी प्रतीक्षा करो।

यदि तुम्हारी तन्दुरुस्ती ठीक नही है तो उस रोग-विशेषका विचार न करो, जिससे कि तुम्हें कष्ट हो रहा है, बल्कि पूर्ण स्वास्थ्यकी प्राप्ति पर अपना सारा मनोयोग एकाग्र कर दो। इस समयके लिए कोई भी दूसरी कल्पना मनमें न आने दो। कहो, "**मैं तन्दुरुस्त हूँ। मेरी तन्दुरुस्ती बिलकुल ठीक है। विशुद्ध प्राणभूत रुधिर मेरी शिराओंमें बह रहा है। म मङ्गल-स्वरूपकी पूर्ण अभिव्यक्ति हूँ। मेरे शरीरका प्रत्येक भाग जीवन और प्रेमसे परिपूर्ण है।**" मैंने देखा है कि असाध्यसे असाध्य अवस्थाओंमें भी इस आवेदनसे आराम हो जाता है। यह बहुत ही कम निष्फल जाता है। तन्दुरुस्तीके सिवा और किसी विषय पर बात न करो। यहाँ तक कि

निद्रामे, स्वप्नमें और भोजनमें भी तन्दुरुस्ती और केवल तन्दुरुस्तीका ही खयाल हो। फिर तुम शीघ्र ही इसे प्रत्यक्ष कर लोगे। जिस प्रयासके साथ लोग अपने छोटे छोटे दुःखों पर वाद प्रतिवाद किया करते हैं यदि उससे आधे श्रमके साथ भी वे तन्दुरुस्तीकी वात-चीत किया करें तो डाक्टरोंको कोई नया व्यवसाय ढूँढना पड़े।

क्या तुम यह समझते हो कि तुम्हें तत्काल ही तन्दुरुस्ती प्राप्त नही हो जाती इस लिए तुम्हारा आवेदन मिथ्या है। तुम अपने मानसिक भावसे " भविष्यत् " तैय्यार कर रहे हो। इस लिए यह कथन सत्य है कि यदि तुम " मैं तन्दुरुस्त हूँ " के स्थानमें, " मै तन्दुरुस्त हो जाऊँगा " कहते हो तो इससे तुम्हारे विचारकी फसलके पकनेमें देर हो जाती है। यदि तुम्हारा कष्ट कोई भारी शोक है तो तुम्हारा निवेदन इस प्रकार होना चाहिए:—

" में प्रेम हूँ। मेरा शरीर प्रेमसे परिपूर्ण है और मैं उस तेजोमयी प्रफुल्ल दीप्तिसे भरा-पुरा हूँ जो केवल प्रेममेंसे ही निकल सकती है। सब भद्र ही भद्र है और मैं सुखी हूँ। "
एक वार नहीं, वीसियों वार इसका जाप करो। इसको अपने अंदर वैठाओ, यहाँ तक कि तुम अपने आदर्शकी प्रतिमूर्ति वन जाओ।

जिस प्रेमका तुम प्रकाश करते हो कुछ समय पाकर तुम उसके समान ही देदीप्यमान वन जाओगे। ऐसे वन जाने पर फिर तुम्हें और प्रयत्न करनेका प्रयोजन न रहेगा। सारा संसार विल्कुल ठीक माळूम होगा।

अव मै औज अर्थात् " व्यक्तिगत आकर्पण-शक्ति " के विषय पर आना चाहती हूँ। स्वभावतः प्रश्न उठता है कि—

औज या सम्मोहिनी शक्ति क्या चीज है ?

साथ ही पूछा जाता है कि इससे क्या क्या **लाभ** है ?

औज वस्तुतः बहुतसी चीजें है। पहले तो यह संगठित **इच्छा-शक्ति** है। दूसरे यह **तन्दुरुस्ती** है। तीसरे यह इच्छा-शक्ति और तन्दुरुस्तीको मिलानेकी योग्यता है। साथ ही यह शरीरमें इस प्रकार उत्पन्न हुई सूक्ष्म तथा अतीव प्रबल औजस-शक्तिको, जनता और अवस्थाओंको आकृष्ट करनेके लिए, विशेष विशेष वस्तुओंको **प्राप्त करने**की आकांक्षाकी सहायतासे **बाहर भेजने**की सामर्थ्य है। इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक स्त्री और पुरुष स्वाभाविक चुम्बक बन सकता है। पर इस शक्तिके विकासके लिए उनका धैर्य-पूर्वक यत्न करते रहना आवश्यक है।

इसके लाभोंकी बात पूछो तो वे अनेक है।

यह औजस-शक्ति रोगियोंको चंगा कर सकती है। मेरी सम्मतिमे सबसे बड़ा काम इससे यही लिया जा सकता है।

जिस स्त्री या पुरुषमे यह शक्ति है वह जिस चीजको चाहे स्वेच्छा-नुसार अपनी ओर **खींच** सकता है या अपनेसे दूर **हटा** सकता है। अर्थात् इसके **सविवेक प्रयोगसे** वह **सफलता धन, यश, शक्ति और आनंद**को आकर्षित कर सकता है।

औजस-शक्ति एक अतीव सूक्ष्म चीज है। इससे सारा ब्रह्माण्ड भरा हुआ है। जिस प्रकार जलसे वायु और वायुसे आकाश सूक्ष्म है वैसे ही यह आकाशसे भी सूक्ष्म है।

जिस प्रकार आकाशकी थरथराहट प्रकाशको और वायुकी थरथरा-हट शब्दको ले जांती है उसी प्रकार औजकी थरथराहटें अन्य दृश्य चमत्कार पैदा करती और उन्हें ले जाती है।

इस थरथरानेवाली वस्तुको ओज या दिव्यशक्ति कहते है। इसके लिए अच्छी परिभाषा भी यही है; क्योंकि चाहे इससे रोगोंको शान्त करनेका काम लिया जाय, और चाहे किसी अन्य प्रयोजनके लिए इसका प्रयोग हो, यह समझनेमें सुगम और सरल है।

प्रत्येक चुम्बकमे एक धन-ध्रुव और एक ऋण-ध्रुव होता है। (ये ध्रुव चुम्बककी लम्बी सलाखके दोनों सिरों पर होते है।) यह सार्वत्रिक माना गया है कि धनका अर्थ जियादह या प्रबल है, और ऋणका अर्थ थोड़ा या निर्बल है। चुम्बक-शास्त्रका पहला नियम यह है कि सदृश चुम्बकीय ध्रुव एक दूसरेसे दूर भागते और असदृश ध्रुव एक दूसरेको आकर्षित करते हैं।

अतः धन ऋणको, ऋण धनको और बलवान् निर्बलको आकृष्ट करता है।

मनुष्य-रूपी चुम्बकके दो ध्रुव उसके शरीर और मन है। यह बात हमें हेलन विलमेन्सने सिखलाई है।

शरीर ऋण-ध्रुव है और मन या विचार-शक्ति धन-ध्रुव। धन या सुनिश्चित मन, अर्थात् जो मन अपनी अनन्त शक्तिसे परिचित हो चुका है, साधारण वितर्क रीतिसे औजस-शक्तिको अपने पास आकृष्ट कर सकता है और आवश्यकताके अनुसार इसे उत्पन्न कर सकता है।

इसका तुम्हारी इच्छा-शक्ति, तुम्हारे मस्तिष्क और तुम्हारे विचारके साथ घनिष्ट सम्बध है। इसके विकासके लिए तुम्हे किसी अगले प्रकरणमें दी हुई बातोका अभ्यास करना चाहिए। इससे तुम्हे वास्तविक जीवन मिलेगा। तुम्हारा बुढ़ापा और तुम्हारी चिन्तायें

सब दूर होकर तुम्हें मनोवाञ्छित, बल्कि इससे भी अधिक **स्वास्थ्य** और **सफलता** प्राप्त होगी ।

विश्वजनीन ज्ञान अर्थात् परमात्माको पहचानना आवश्यक है। इस लिए मैं चाहती हूँ कि तुम एक बलवान् व्यक्ति बन जाओ और अपनी निज शक्तिके ज्ञानका आश्रय लेने लगो। परन्तु यह बात कभी न भूलो कि वह शक्ति सब वस्तुओंके केन्द्र **एक प्रकाश**का प्रतिफलित तेज मात्र है ।

अध्यात्मविद्याके अनेक गुरुओंकी यह रीति है कि वे इस बात पर बहुत जोर देते हैं कि शरीरधारी परमात्माका होना असम्भव है। उनका यह मत है कि परमात्मा एक सार है और उसका कोई व्यक्तित्व नहीं है। पर इस शिक्षासे कई ऐसे शिष्योंका चित्त उचाट हो जाता है जो दूसरी प्रकारसे **उच्चतर विचारों**की ओर आकृष्ट हो सकते थे ।

विज्ञानका आगे बढते रहना आवश्यक है । आध्यात्मिक **देव**को पारमार्थिक **देव**के साथ मिलानेका काम करके मैं एक पग आगे बढ़ रही हूँ ।

संक्षेपसे भाव यह है:—

खगोल-विद्यासे यह जाना गया है कि आकाश-गङ्गा सूर्यों और तारोंका एक विशाल **पटका** है। कदकी दृष्टिसे हमारा सौर जगत् इसके सामने एक तुच्छ वस्तु है। यह पटका या प्रकाशमय पथ अपने गिर्द घूम रहा है और किसी अदृष्ट **भारकेन्द्र**के अधीन है । उसका सारा दारोमदार इसी पर है । यह केन्द्र, मेरा दृढ़ निश्चय है कि **सर्वशक्तिमान्, परमपिता, "परमात्मा"** ही है ।

इस तेजोमयी सत्तासे एक प्रबल सूक्ष्म सार निकल कर अनन्त शून्यमय अवकाशमे फैल रहा है। इस निकलनेवाले सारका नाम **जीवन** और **प्रेम** दोनो है।

यह सदा द्रव्य या जीवन पैदा करता रहता है। जहाँ कहीं यह जीवन होता है वहाँ एक **पवित्र मन्दिर** स्थापित हो जाता है। रोजीक्रूशियन लोगोंने मनुष्यमे इस मन्दिरका स्थान **भौतिक हृदय** माना है। यह हृदय भौतिक शरीरका उसी प्रकार केन्द्र है जिस प्रकार कि परमपिता विश्व-ब्रह्माण्डका केन्द्र है। जिस प्रकार भास्करकी रश्मियाँ पुष्प पर घर बना लेती हैं उसी प्रकार मानव-हृदयके द्वारोंके भीतर यह **पवित्र दीप्ति ठहरती** और **निवास करती है। वहाँ-से मनुष्यकी सचेतन इच्छा-शक्ति और विचारके आदेशसे यह दिव्य ज्योति पुनः असीम प्रेमके रूपमें प्रकाशित होकर मनुष्यके पास स्वास्थ्य, धन या आनन्द, जिसका उसे प्रयोजन हो, खींच लाती है।** कारण यह कि इस विधिसे वह परमपिताके साथ एक हो जाता है—उसका परम-प्रिय **सखा** बन जाता है।

यदि छात्र **शारीरिक हृदय**की अपेक्षा **मस्तिष्क**को अच्छा समझता है तो यह लक्षण उस पर भी प्रत्युक्त हो सकता है।

अब औजस-शक्तिका प्रयोग करते समय अपनी सफलता प्राप्त करनेकी शक्तिमें तुम्हारी श्रद्धाका होना उस सफलताके लिए परम आवश्यक है।

औजस-शक्तिका संचार करते समय जिस मनुष्यको अपनी योग्यतामे विश्वास है वह बहुत शीघ्र फल प्राप्त कर लेता है। परन्तु **जिसे अपनी इस शक्तिसे काम लेनेकी योग्यतामें संदेह है वह इसे केवल व्यर्थ नष्ट करता है।**

मायावादीके मनकी अवस्था बहुधा एक कल्पनाकारीकी अवस्थाके सदृश देखी जाती है । वह युक्तियाँ तो अनेक सोचता है पर पूरी एक भी नहीं करता । इसका कारण यही है कि या तो उसकी औजस-शक्ति बहुत जियादह नष्ट हो चुकी है, या उसके शरीरका सारा नाड़ी-मडल (नर्वस सिष्टम) शिथिल हो गया है ।

प्रबल इच्छाका स्वाभाविक होना परमावश्यक है । प्रत्येक मानसिक और शारीरिक क्रिया पर इसका अधिकार होना चाहिए । यही बात सिखलाना इन प्रकरणोंका उद्देश है ।

मै तुम्हें अपने **व्यक्तित्वको** एक **व्यक्ति-गत सत्ता** निश्चय करना सिखलाती हूँ । मै नहीं चाहती कि तुम एक मेरुदंड-हीन रेंगनेवाले कीड़े बने रहो और बात बातमे रोगोत्पादक तथा दुर्बल कर देनेवाली चालाकियोका आश्रय लेते फिरो । आकर्षणशील इच्छा-शक्ति निरन्तर अभ्याससे ही पैदा हो सकती है । फिर तुम दैव या अवस्थाके खिलौने न रह कर अपनी **अवस्थाके** शासक और स्वामी बन जाते हो ।

---

८ व्यापारमें औजस-शक्ति—रीतियाँ—सूचनायें ।

औजका अर्थ **शक्ति** और उस शक्तिको जनता पर, बल्कि किसी कदर अवस्थाओं पर भी लगानेकी योग्यता है; क्योंकि जिन लोगों पर हम प्रभाव डालते है और जिनके साथ हमारा मेल-जोल होता है, अवस्थाओको **पैदा करनेमें** उनका बड़ा हाथ होता है।

जो स्त्री या पुरुष इस शक्तिका सर्वोत्तम प्रयोग कर सकता है उसकी प्रकृति **प्राणभूत प्रकृति कहलाती** है ।

विश्लेषण करने पर यह शक्ति केवल जीवन-शक्ति और पूर्ण स्वास्थ्यकी प्रकृतिसे बनी सिद्ध होती है। इस प्रकृतिको सामान्यतः रंगका विषय बनाया जाता है। जिनके लाल या भूरे बाल होते हैं वे इस प्रकृतिके मनुष्य समझे जाते हैं। पर मै इस रीतिमे कुछ लाभ नहीं देखती। मनुष्यमें जीवात्माको संस्कृत करनेके लिए बल और दीर्घोद्योग होना चाहिए। फिर **प्रत्येक** रंग प्राणभूत हो सकता है। इस विषयमें कोई विशेष और दृढ नियम बनाना बिलकुल कपट है।

हॉ, एक बात है। वह यह कि जो लोग **शक्ति, सत्य जीवन** और **सफलताके** अभिलाषी है उन सबको इस प्रकृतिके बनानेका **प्रयोजन** है। प्राणभूतका अर्थ **जीवन** या जीवन-सम्बंधी है। प्राणभूत प्रकृतिका प्रयोग उन लोगोंका वर्णन करनेके लिए होता है जिनका कि **मन और शरीर पूर्ण अवस्थामें** है; जिनके शरीर और मन पूर्ण-रूपसे स्वस्थ होते है। इनमेसे एककी क्षतिसे दूसरेकी वृद्धि नहीं हुआ करती।

उन लोगोंकी त्वचा स्वच्छ और सतेज, नेत्र चमकीले, शरीर सुदृढ़, आत्मा प्रफुल्ल और दूसरोको आकर्षित करनेकी शक्ति अतीव प्रबल हुआ करती है। सारांश यह कि ये वे लोग है जिनके पास **स्वाभाविक औजस-शक्तिका** सबसे बड़ा भण्डार है; किन्तु बड़ी बात यह है कि प्रत्येक मनुष्य इस गुणको धारण कर सकता है और अपने चुम्बकीय तथा वैद्युत कणोंके भण्डारको बढ़ा कर **प्राणभूत बन सकता है।**

प्राणभूत प्रकृतिमेसे औजकी लहरे निकलती हैं। ये अदृश्य लहरें शरीरके प्रत्येक भागमेंसे निकल कर चारों ओर फैलती है। इस सूक्ष्म शक्तिका वेग इतना प्रबल है कि यद्यपि **आँखें इसे देख नहीं**

सकतीं; परंतु फोटोग्राफीका कैमेरा इसे प्रकट कर सकता है। मनुष्यका शरीर और मन एकदम इस संस्कारका अनुभव करते हैं। शरीरको इसका अनुभव सनसनाहट या गरमीकी संवेदनाके रूपमें होता है। मन इसका अनुभव इस प्रकार करता है जैसे किसी बिजलीकी बैटरीसे एक बलबर्द्धक क्षोभ पहुँचे, या बाहर निकल कर कुछ काम करनेकी अति प्रबल रुचि पैदा हो।

ऐसी प्रकृतिमे उस मनुष्यसे मिलनेवाले प्रत्येक व्यक्ति (और पशु) को प्रभावित करनेकी क्षमता, परन्तु इससे भी अधिक शक्ति होती है।

इस प्रकृतिवाला मनुष्य उनको भी प्रभावित कर सकता है जिनके साथ उसका अभी वास्तविक संसर्ग नहीं हुआ है। वे उसके विचारके प्रभावसे ही उसके पास खिंच आते है। वह मनुष्य अपनी सम्मोहिनी शक्ति या औजकी किरणे सार्वत्रिक प्रेमके भावसे बखेरता है। वह प्रत्येकमे आत्मा अर्थात् प्रेम-सूत्रको देखता है और जिस भण्डारका उल्लेख मैंने सातवे प्रकरणमें किया है उस भण्डारसे अपनी शक्तिको मनुष्य मात्र पर समष्टि-रूपसे बरसाता है।

इस व्यक्तिमेंसे निकलनेवाली प्रबल, आकर्णशील किरणें, अमित मनुष्य-समाजके बीचमेसे वह सब उसके पास खींच लाती है जो कि उसके लिए उपयोगी हो सकता है।

वह अपने भीतर प्रेमात्माको देखता है। वह मानसिक नेत्रो द्वारा इस आत्माको अपने शरीरमेसे एक अमित शक्तिवाला सार बाहरकी ओर बखेरते देखता है। यह सार या भाव उन हृदयोंमें अथवा उन मनों पर जाकर ठहरता है जिनका कि वह ऐसे प्रेमसे स्मरण करता है।

याद रक्खो कि जो स्त्री-पुरुष इस शक्तिका दुरुपयोग करते है वे निश्चय ही देखेंगे कि यह शक्ति उलट कर उन्हींको नष्ट कर देती है।

लोगोंके किसी प्रयोजनको पूरा करनेके कारण ही तुम उन्हें आकृष्ट कर सकते हो। तुम उन्हें कोई ऐसी वस्तु देते हो जो उनके पास नहीं है। तुम्हारी प्रबल आकर्षण-शक्ति उनके किसी शून्य स्थानको भरती है। एक वक्ताकी भारी सफलता और दूसरेकी नितान्त विफलताका यही रहस्य है।

एक मनुष्यके पास व्यक्तिगत सम्मोहन-शक्तिका बहुत बड़ा खजाना है। वह अपने श्रोतृ-समाजको बाँध कर बैठा रखता है। वे उसके प्रत्येक शब्दोंको बड़े ध्यान-पूर्वक सुनते है और उसके अमित बल तथा **आकर्षण शक्ति**की प्रबल लहरमे बह जाते हैं।

दूसरे मनुष्यके पास कुछ नहीं है। इसके शब्द प्रभावहीन है। श्रोतृ-वृन्द पर उसका कुछ असर नहीं होता। इतने पर भी यह हो सकता है कि यह मनुष्य शोभा-युक्त, सुशिक्षित, उच्च पदवीधारी और विद्वान् माता-पिताकी संतान होनेसे वाग्मी हो, और पहला एक निर्धन, असंस्कृत और साधारण व्यक्ति हो। परंतु पहला मनुष्य अपने विषयको जानता है। अपनी आकर्षण-शक्तिमे उसका विश्वास है। वह केवल इच्छा-शक्तिसे ही अपनी बात लोगों द्वारा मनवा लेता है।

व्यापारिक बातोंमे भी यही नियम काम करता है। शक्तिशाली मनुष्य, जिसके कि पास यह अद्भुत सम्मोहिनी शक्ति है, सबको अपने आगे हाँक ले चलता है। यही मनुष्य है जो न माननेवाले (दूसरे शब्दोमे असंगठित) ग्राहकको उसकी इच्छाके विरुद्ध स्वीकार करा लेता है। यही मनुष्य **रुपये** और सफलताको समान प्रमाणमें अपने पास खेंच

कर ला सकता है, और सबसे ऊँची सीढ़ी पर चढ़ सकता है। इस जीवनकी प्राप्तिमें शक्तिका प्रयोग समाजकी प्रत्येक अवस्था और स्त्री, पुरुष दोनोंके लिए होता है। इस शक्तिको कैसे पैदा करना चाहिए यह दूसरी विचारणीय बात है।

अपने मध्यवर्ती आत्मिक प्रकाशको पहचान लेना ही पर्याप्त नहीं है। जो शक्तियाँ तुम्हारे पास पहलेसे हैं उनके लिए तुम्हारा शिखाको प्रज्ज्वलित करना और नवीन क्षमता पैदा करना परमावश्यक है। मस्तिष्क और नाड़ियोको पुष्ट और विकसित करना जरूरी है। इन बातोंके प्राप्त करनेके लिए सबके पहले आत्म-संयमका होना आवश्यक है। और इस कारण आप जो अपने हाथ निश्चेष्ट नहीं रख सकते; आप श्रीमती जो सदा अपने पिछले बालोंको सँवारा करती है, या अपने कपड़ोंको ठीक किया करती है, या अपनी घड़ीकी जञ्जीरको मरोड़ा करती है; और आप जो प्रत्येक शब्द पर चौंक उठते है; छोटी छोटी तुच्छ बातों पर व्याकुल, कुपित और दुःखित हो जाते है; तथा नाज़ुक-मिजाज, छोटे दिलके और चिड़चिड़े है; जो मनोविकारके सामने दब जाते हैं और परिस्थितिके खिलौने बन रहे हैं, मै आपसे कहती हूँ कि आप अपने आपको काबूमें रखना सीखें; क्योंकि इन सब एक-रसताओंका परिणाम यह होता है कि औजस-शक्ति बड़ी बुरी तरहसे निरन्तर टपकती रहती है। यह वह शक्ति है जिसका यदि सदुपयोग किया जाये तो यह आपको सफलता पर अधिकार जमानेमें समर्थ बना सकती है।

"चुम्बकीय" लोग बड़े सुन्दर होते हैं। उनकी आँखे काली और चर्म पीला और कोमल होता है। वे चुलबुले, दुर्बल, वायु-ग्रस्त और प्रायः अशान्त मस्तिष्कवाले होते हैं। उनका मन कभी स्थिर

नहीं रहता। वे छोटी छोटी बातोंसे निरन्तर चिन्तातुर रहते है। उनकी प्रकृति स्नेह-शून्य और प्रायः स्वार्थ पर होती है।

संयमसे तुम उपर्युक्त छिद्रोंको बंद कर सकते हो। अतः नाड़ियो और मस्तिष्कके विकाससे—**मस्तिष्कके मूलमें, नाड़ियोंकी ग्रंथि-योंके केंद्रों (ganglionic centres) के सम्बंधमें मस्तिष्कको सदा नाड़ियोंका केन्द्र मान कर**—तुम औजस-शक्तिके अपव्यय और टपकनेको बंद करके औजस बन सकते हो।

जिसे "वैद्युत" प्रकृति कहा जाता है वह ऐसे लोगोमें पाई जाती है कि जिनकी त्वचाका रंग प्रायः काला और फीका या पीला होता है। उनकी मानसिक शक्तियाँ प्रायः मंद होती है। उन्हे पित्ता-शयके रोग, आलस्य और ऐसी ही अन्य व्याधियाँ बनी रहती हैं। ऐसे लोगोंको सादा, सात्विक भोजन करना चाहिए। निराभिष-भोजि-योंकी तन्दुरुस्ती ही सबसे उत्तम होती है। मै स्वयं मासको छूती तक नहीं। उन लोगोंको नियमानुकूल कार्य करने और किसी अगले प्रकरणमें दिये हुए अभ्यासोंके अतिरिक्त नियमित मानसिक अभ्या-सकी आवश्यकता है। उनको जगाने और उनके मस्तिष्कको उत्ते-जित करनेका प्रयोजन है। उनके लिए पौष्टिक और गरमी पैदा करनेवाला भोजन चाहिए; किन्तु वह मांस न हो। उन्हे ऐसे समय-की भी आवश्यकता है जब कि वे **निश्चेष्ट** हो सकें, अपने मस्तिष्ककी दौड-धूपको **कम** कर सके, या किसी एक ही विषय पर मनको एकाग्र कर सकें।

ये दोनों प्रकारके मनुष्य आगामी प्रकरणोंमे दिये हुए नियमो पर चल कर **प्राणभूत** बन सकते है। अवस्थाओंके दास होनेके स्थानमें वे उनके स्वामी बन कर स्वेच्छानुसार जीवन व्यतीत कर सकते है।

विविध प्रकृतियोका वर्णन मैंने इस लिए किया है कि छात्रको जीवन और जनताके ज्ञानमें सहायता मिले और शक्तिके विकासमे वह इसका कार्यतः प्रयोग कर सके।

कृत-कार्य स्त्री या पुरुष **स्वामी** है। परन्तु जब तक वे **सब मनुष्योंके लिए सब पदार्थ** होना सीख नहीं लेते तब तक वे स्वामी हो नहीं सकते।

इस प्रकार औजस-शक्तिको विकसित होनेके साथ साथ तुम्हारी निर्वाचन-शक्ति भी अमित प्रमाणमें बढ़ जाती है। तुम एक ही दृष्टिमे इस बातको समझ लेते हो कि समाज या व्यापारमें जिन लोगोंके साथ तुम्हारा मेल-जोल होता है उनके लिए कौनसे अस्त्रका प्रयोग करना ठीक है।

दिव्यशक्तिको एक बार विकसित हो जाने पर फिर वह सहानुभूतिका रूप धारण कर लेती है। अर्थात् दूसरोंको ऐसी वस्तुएँ देने लगती है जिनका कि उनके पास अभाव है।

जब तक तुम अपनी निज शक्तियों पर शासन करने और उनसे स्वेच्छानुसार काम लेनेके योग्य नहीं हो जाते तब तक तुम स्वेच्छापूर्वक दूसरोंको कुछ दे भी नहीं सकते।

जिस मनुष्यको अपनी समग्र शारीरिक और मानसिक रचना पर पूर्ण अधिकार है वह अपने कार्य-क्षेत्रको बढा कर किसी समय सारे संसारको अपने वशमें कर सकता है। तुम्हें चाहिए कि "वैद्युत" लोगोंको विद्युत दो; उनके मस्तिष्कोंको उत्तेजित करो; और उनसे प्रश्न करके उन्हें विचार करने पर बाध्य करो। फिर वे प्रसन्नता-पूर्वक तुम्हारी आज्ञाओंका पालन करेंगे; क्योकि तुमने उनकी प्रकृतिको एक नवीन मार्ग दिखला दिया है।

चुम्बकीय लोग सान्त्वना पाकर बहुत प्रसन्न होते है। उनमेंसे भी कई सुगमतासे प्राप्त हो जानेवाली वस्तुओंकी परवा नही करते। इन लोगोंको तुम्हें **दूर हटाना** चाहिए। उन्हें अपनी प्रकृतिका स्वतन्त्र पहलू दिखलाओ। उन्हे विश्वास दिला दो कि तुम्हे उनके साथ व्यवहार करनेकी कोई जरूरत नहीं है। केवल निश्चित विमुखतासे ही तुम उनकी बात मानो। तुम जितना पीछे हटोगे उतनी ही उनकी उत्सुकता बढ़ती जायगी। कई ऐसे भी लोग हैं जिन्हें दिलासे—सहायता—का प्रयोजन है। मानसिक उद्बोधन द्वारा तुम उनके मनोंको उनके कामके लायक बना सकते हो।

मानसिक नियम सदा इस प्रकार होते है कि एक भाग नियममें तीन भाग व्यवहार-ज्ञान मिला कर इसे हलका कर लो। भौतिक नियम पीछे आयेंगे।

तुम्हें अपनी प्रबल औजस-शक्तिका ज्ञान है। तुम यह भी जानते हो कि तुम इस शक्ति या वस्तुको उसी प्रकार बाहर बखेर रहे हो जैसा कि सूर्य प्रकाश विकीर्ण कर रहा है।

तुम केवल सफलता प्राप्त करनेकी इच्छासे ही व्यापारमें पड़ते हो। तुम्हारे मनमें कोई भी सन्देह नहीं कि दूसरा मनुष्य तुम्हारे साथ ठीक-वैसा ही व्यवहार करेगा जैसा कि तुम उससे करना चाहते हो।

व्यापार और समाजमें लोगोंके साथ व्यवहार करते समय अपने मनको अपनी शक्ति पर दृढ़ता-पूर्वक जमाये रक्खो। सरलतासे उनकी आँखोंसे आँखें मिलाओ। मनसे उन्हें अपनी कामनाओंको पूर्ण करनेकी आज्ञा दो। निश्चय करो कि "मैं एक सुसंगठित शक्तिवाला मनुष्य हूँ। मै अमुक प्रकारकी युक्तिको काममे लाना चाहता हूँ। तुम्हारा मस्तिष्क मेरे मस्तिष्कके वशमें है और मै चाहता हूँ कि तुम

ऐसा और अमुक काम करो। मैं स्वामी हूँ। जो कुछ मैं चाहता हूँ वह लेकर छोडूँगा।"

पत्र लिखते समय भी तुम यही औजस-आज्ञा दे सकते हो। पत्रको अपने हाथमे पकड़ो, या अपने मस्तकके सामने लाओ और **इच्छा करो** कि इसका ऐसा ऐसा फल निकले।

तुम्हारा आकर्षण-शक्ति पैदा करनेवाला यंत्र तुम्हारे शरीरके भीतर ही है। अपनी इच्छाके आज्ञानुसार तुम इस शक्तिको उत्पन्न और विकीर्ण कर सकते हो।

इच्छा-शक्ति प्राणभूत विचार या मन है।

इस लिए औजस-शक्ति स्थूल आत्मा या प्रकृति और सूक्ष्म आकाशभूत आत्मा या प्रकृतिके बीच संलापका एक केन्द्र बन जाती है।

आत्मा सनातन और कर्मोद्युक्त प्राण-सूत्र है। यह सारी प्रकृति और **आत्माके विविध मण्डलों**में प्रकट हो रहा है।

संसारको दिलानेवाले बल, अर्थात् औजस-शक्तिका तुम्हारे मनमे एक शब्दसे निरूपण किया जा सकता है। वह शब्द है **उद्बोधन** या इच्छा-शक्तिकी आज्ञा। इसका अंत, उच्चरित शब्द या **समाहृत विचार**में होता है। यह एक ऐसा शस्त्र है कि जिसका उपयोग तुम्हें आजन्म करना चाहिए। तुम अपनी शक्तिके अनुसार **उद्बोधन** द्वारा एक मनुष्य या एक सहस्र मनुष्यों पर प्रभाव डाल सकते हो।

---

९ शरीर और प्राणोंके व्यायाम।

इन प्रकरणोमें जो मै तुम्हें **शारीरिक** अभ्यासकी बातें समझा रही हूँ जब तक उनके साथ **यथार्थ प्राणायामका अभ्यास** न किया जायगा तब तक कोई विशेष लाभ न हो सकेगा। केवल पट्ठे

ही ऐसी चीज नहीं कि जिन पर पहले विचार करना जरूरी हो। वास्तवमें पट्ठे व्यक्तिगत आकर्षण अथवा दिव्यशक्तिकी वृद्धिमें सहायता भी नहीं देते। मध्यम अवस्थामें वे सुन्दर प्रतीत होते है। पर अधिक वढ़ जानेसे वे एक पूर्ण सुंदर मनुष्यको भी एक ऐसी हास्यजनक ‘ वस्तु ’ वना देते है जिसे कि यथार्थ प्रमाणमें लानेके लिए वढईके रंदेसे छील कर कम करनेकी आवश्यकता है। तुम्हारे पट्ठे ईसपात और कोड़ेकी रस्सीकी भॉति कोमल और लचकदार होने चाहिए। तुम्हारे **फेफड़े** पूर्णतया परिवृद्ध हों ताकि शुद्ध लहू-रूपी जीवन-शक्तिको उत्पन्न कर सके। वे दोनों एक समान मिले हुए होने चाहिए।

भारी भारी डम्बलोंके साथ व्यायाम करनेसे निश्चय ही पट्ठे वढ़ते हैं। लेकिन ये पट्ठे भारी और निरर्थक ही है। पाशविक शक्तिको छोड़ कर इनसे और कोई लाभ नहीं होता। इस लिए पुरुपको २ पौण्ड और स्त्रीको एक पौण्डसे अविक भारी डम्बलोंके साथ व्यायाम न करना चाहिए।

पट्ठोंके लिए किसी भी प्रकारका व्यायाम आरम्भ करनेके पहले प्राणोंको वशमें करना सीख लो। वहुत गहरा सॉस लेना हानिकारक है। लेकिन वहुतसे लोग फेफड़ोका इतना कम व्यायाम करते हैं कि वे सूख जाते हैं, अर्थात् उपयोगके अभावसे क्षीण हो जाते है; क्योंकि उनको यथार्थ रीतिसे कभी भरा और खाली किया नहीं जाता। व्यायामके लिए सवसे अधिक महत्त्वकी वात आसन है। कंधोंको गोल करके और ठोड़ीको छाती पर गिरा कर तुम सॉस नहीं ले सकते। सीधे खड़े हो। कमर (मेरा अभिप्राय पेटसे है) अंदरको दवी हो। कंधे एकसे तुले और पीछेको हटे हों। छाती खूव वाहरको निकली

हो । सिर पीछेको गिरा हो । और ठोड़ी अंदरकी ओर गई हो । अव मुँह वंद करके शनैः शनैः गहरा साँस लो.। (**पर आरम्भमें वहुत गहरा सॉस न लेना चाहिए; क्योंकि प्रचंड श्वाससे फेफड़े केवल कोमल और चकनाचूर हो जाते हैं ।**) एक सेकण्ड तक उसे भीतर रोक रक्खो । फिर वैसे ही शनैः शनैः नासिका द्वारा उसे वाहर निकाल दो ।

सॉस लेनेकी तीन रीतियॉ हैं । एक पेट या मणिपूरचक्र (Solar Plexus) से, दूसरी पसलीसे और तीसरी ऊपरकी छातीसे। पहले सीधा पेटसे आरम्भ करो—परन्तु कृपया शनैः शनैः—और नासिकामेसे श्वास अन्दर खींचो जिससे पेट अंदर घुस जाये । (याद रहे कि पेट आमाशयका नाम नहीं है, आमाशय और पेट दो भिन्न भिन्न चीजें हैं । आमाशय उस थैलीका नाम है जिसमे मनुष्यका भोजन जाकर पड़ता है । और पेट मांसकी वह मोटी भित्ति है जिसके अंदर कि अँतड़ियाँ है ।) इस प्रकार अँतड़ियों पर जोर पड़नेसे वे काम करने लगती हैं । मणिपूरचक्र जाग उठता है और फेफड़े शनैः शनैः शुद्ध वायुसे भर जाते हैं। इससे ताजा लहू पैदा होता है और शरीरकी प्रत्येक नाड़ी और पेशी नव-जीवन—**औजस-शक्ति**—से भर जाती है । इस क्रियाके वहुत जियादा करनेसे तुम थक जाओगे । इस लिए आरम्भमें शनैः शनैः चलो, विशेषतः यदि तुम उन दीन, अभागे, हताश मनुष्योंमेंसे एक हो जो प्राणायामको—यदि उन्हें इसका कभी विचार आता भी है—केवल थोडीसी जल्दी जल्दी हॉपनेकी क्रिया समझ रहे हैं । इस प्रकार हॉपनेसे न फेफड़े भरते है और न खाली ही होते हैं । गालोंके पीले पड़ जाने, आँखोंके निर्जीव ज्योति-हीन हो जाने, मांसके लचक जाने और कबूतरके जैसी तंग—कठिन—छातियोके हो जाने आदि सवका मुख्य कारण यही हँापना होता है ।

यथार्थ क्रिया, यथाथ प्राणायाम, पूर्ण विकास, इच्छा-शक्ति पर अधिकार और इन साधनो द्वारा उत्तम स्वास्थ्य और औजस-शक्तिकी प्राप्ति आदि बातें सव लोगोको प्राप्त हो सकती हैं। कहा जाता है कि जिन लोगोके पास औजकी यह सूक्ष्म शक्ति है उनकी तन्दुरुस्ती अच्छी **नहीं** होती।

इस बातको मैं मानती हूँ, पर उनका **इच्छा-शक्ति** पर पूर्ण अधिकार होता है। नियम-रूपसे वे किसी एक या अधिक सिद्धियों-के पूर्ण अधिकारी होते है। उस सिद्धि या सिद्धियोंको छोड़ कर उनकी औजस-शक्तिके भाफ बन कर उड़ जानेकी भी बड़ी सम्भा-वना है। तनिक **सोचिए** कि जो ग्रंथकार, चित्रकार या संगीत-शास्त्री अपनी कृतियोंके कारण लोकप्रिय समझे जाते है, यदि उनकी कृति-यों पर ध्यान न दिया जाय तो फिर व्यक्ति-रूपसे उनमेसे कितने थोड़े मनोमोहक या आकर्पण रह जाते हैं।

यदि तुम औजस-शक्तिके मेरे आदर्शको प्राप्त किया चाहते हो तो तुम्हारा तन्दुरुस्त होना और संगठित शरीर तथा संगठित मन रखना परमावश्यक है। मान लिया कि तुम पापके समान कुरूप हो, तुम्हारी बुद्धि भी कोई विलक्षण नहीं है। फिर भी तुम्हारी शक्ति और तुम्हारी तन्दुरुस्तीके प्रता-पसे सब कहीं तुम्हारा स्वीकार होगा।

प्राणायामकी विधि सीखे विना शरीर और पट्ठोंके विकास पर लग पड़नेसे रत्ती भर भी लाभ नहीं होता। प्राणायामका निरन्तर अभ्यास करते रहो, जहाँ तक कि तुम्हारा इस पर अधिकार हो जाये। हो सके तो **खुली वायुमें** इसका अभ्यास करो। सबसे उत्तम तो यह है कि धूपमें अभ्यास किया जाये; क्योंकि वहाँ तुम न केवल शुद्ध

वायुको ही भीतर लेजाओगे, वल्कि हमारे विश्वके लिए औजस-शक्तिके केन्द्र सूर्यसे निकलनेवाले सूक्ष्म औजको भी प्रत्यक्ष-रूपसे लाभ करोगे।

पट्ठोंके व्यायाम हमे औजस-शक्तिको उत्पन्न करने तथा उसे **संग्रह** करनेमें सहायता देते हैं।

प्राणायामका भी यही फल है। मनकी **एकाग्रता** पर जो शिक्षाये मैं दे चुकी हूँ वे **इच्छा**-शक्तिको विकसित करनेमें सहायता देती है। इनके साथ ही तुम्हे **औजस टकटकीको** पूर्ण बनानेके प्रश्न पर विचार करना है।

औजस टकटकीका केवल यही अर्थ है कि जिन नाड़ियोके अधीन नेत्रोंकी दृष्टि है उन पर पूर्ण अधिकार हो। नेत्र-दृष्टिको बलवान् करके 'तीक्ष्ण' बना लेना चाहिए, जिससे वह दूसरे लोगोके नेत्रोंको उनकी इच्छासे या उनकी इच्छाके विरुद्ध पकड़ सके।

अब हम पट्ठोंके विकासके लिए शारीरिक व्यायामोंको लेते है। यह विकास औजस-शक्तिके सचयके लिए आवश्यक है।

याद रक्खो कि तुम्हें केवल पट्ठोंका ही व्यायाम न करना चाहिए, वल्कि साथ ही यथार्थ प्राणायामका भी अभ्यास करते रहना चाहिए। अन्यथा तुम्हारा सारा परिश्रम निष्फल होगा।

सीधे खड़े हो जैसा कि ऊपर बताया गया है। डम्बल लेकर हाथोंको अपने पार्श्वोंके साथ लगाओ। तब एक लम्बा, गहरा साँस—हौले हौले—लो, इसमें कोई आयास न होने पावे। साँसको भीतर खींचनेके साथ साथ अपनी भुजाओंको धीरे धीरे सिरके ऊपर ले जाओ, यहाँ तक कि डम्बल आपसमें टकरा जायें।

साँसको रोक कर मनमें पाँच तक गिनो। तव शनैः शनैः भुजाओंको अपने पार्श्वोंके पास पहलेकी भाँति ले आओ। भुजाओंको नीचे लानेके साथ साथ साँसको भी बाहर निकाल दो।

इस क्रियाको वीस वार करो। पर स्मरण रहे कि यदि तुम श्वासका खयाल भुला कर केवल व्यायाम पर ही ध्यान दोगे तो बहुत कम लाभ होगा। यह प्राणायाम और पट्ठोंका व्यायाम फेफड़ों और छातीको पुष्ट करता है। सादा प्रतीत होने पर भी यह बहुत अमूल्य है।

इस व्यायामको प्राणायामके साथ साथ नित्य किया करो।

अब मैं बताऊँगी कि प्रयोगके लिए औजस-शक्तिका कैसे संग्रह करना चाहिए।

प्रत्येक बार व्यायामके पश्चात्, सवेरे या सायंकाल या दोनो समय उपर्युक्त विधिसे साँसको भीतर खींचो। श्वास लेनेके साथ साथ बारी बारीसे एक एक भुजाको सीधा अपने आगेकी ओर बढ़ाओ। (डम्ब-लोंके बिना) हाथकी मुट्ठी खूब बंद रक्खो, यहाँ तक कि प्रत्येक पट्ठा तना हुआ और दृढ हो। प्रत्येक भुजाको बारी बारीसे अलग अलग ढीला करो। तब यही क्रिया दोनो भुजाओंके साथ करो। दोनोंको दृढ़ और कठिन बनाओ।

अब साँसको रोक कर, प्रत्येक टाँग, धड़ तथा रीढ़की हड्डी, और गर्दनको एक समान अकड़ाओ। तब साँसको बाहर निकालते समय अपने शरीरके प्रत्येक अंगको इतना ढीला कर दो कि तुम लचलचे बन जाओ। भुजाओंको अपने पार्श्वों पर गिरा दो। गर्दन और शरी-रको झुका दो। प्रत्येक अंगको छोड़ दो। चिथड़ेकी तरह कोमल हो जाओ और इस प्रकार आराम लेलो।

ढीला करनेकी यह क्रिया कोई सुगम नहीं है। इसके लिए तुम्हें मस्तिष्कको भी ढीला छोड़ना पड़ेगा, नहीं तो यह पट्ठों और स्नायु-ओंको पकड़े रक्खेगा और तुम्हारे प्रयत्नोंके होते हुए भी वे कठिन और अकड़े हुए रहेंगे।

एक समयमें एक ही भुजाके साथ अभ्यास करो। उँगलियोको ढीला और गति-हीन लटकने दो। इसके बाद कलाई इत्यादिको भी ऐसा ही करो। यहाँ तक कि सारा शरीर तुम्हारे वशमें हो जाये और इसे तुम स्वेच्छा-पूर्वक दृढ या शिथिल कर सको।

किन्तु जब तुम अपने पट्ठोंको **अकड़ाओ**—उन्हे कठिन बनाओ—तब **साँसको भीतर खींचो**। जब तुम अपने पट्ठोंको ढीला करो तब **साँसको बाहर निकाल दो**।

जिस समय, निकम्मी पड़ी हुई धौंकनीकी तरह तुम्हारे फेफड़े वायु-शून्य हैं उस समय कोमल बनना बहुत सुगम है। पर खाली फेफड़ोंके साथ शरीरको कठिन बनाये रखना कोई आसान बात नहीं। अगले प्रकरणमें मैंने एक चित्रमें प्रधान पट्ठे दिखलाये है और अपने वर्तमान उद्देशके लिए उन्हें विकसित करनेकी सर्वोत्तम विधियाँ भी दी हैं।

---

१० शारीरिक व्यायाम ।

पूर्व प्रकरणकी बातोको संक्षेपमें यहाँ फिरसे दुहराया जाता है। जिससे यह स्पष्टतया समझमे आ जाय कि औज अथवा व्यक्तिगत आकर्षण-शक्ति **क्या** चीज है और इसके लिए व्यायामोंकी **क्यों** आवश्यकता है। वे बातें निम्न शीर्षकोंमें आ जाती है।

१—औज अथवा व्यक्तिगत आकर्षण-शक्ति एक सूक्ष्म तत्त्व है। इसका स्वरूप मै पहले दिखला आई हूँ।

२—इसकी विशेष मात्रा अनेक लोगोंमे मिलती है। पर यह इतनी मंद और अविकसित होती है कि उन्हें इससे बहुत कम लाभ पहुँचता है।

३—**मनुष्य एक चम्बुक है**। उसका बल या निर्बलता, उसके इस सचाईके **ज्ञान** पर और उस ज्ञानके बाद उसके विचार तथा इच्छाशक्तिके विकास पर निर्भर है।

४—औजस-शक्ति **पूर्ण आत्म-निग्रह**की प्राप्ति और **इच्छाकी** परिवृद्धिसे विकासित होती है। साथ ही यह बहुत कुछ उत्तम स्वास्थ्य पर भी निर्भर है।

५—यह हिप्नोटिज्म (मूर्च्छना या वशीकरण) नहीं है।

६—इसके द्वारा पुरुप और स्त्री जनता और व्यापारको **आकर्षित** कर सकते हैं। जीवनका **कोई भी** व्यवहार हो उसकी सफलताकी यह सच्ची चाबी है।

नर-देहके पट्ठोंके जो चित्र इस प्रकरणमे दिये गये है उनसे औजस-शक्तिकी प्राप्तिके लिए दिये गये व्यायामोंके परिणाम भली भाँति विदित हो जायँगे। तुम्हे साफ देख पड़ेगा कि पिछले प्रकरणके व्यायामने चित्र १, २ में 'क' चित्रित सभी पट्ठो—छाती, पेट, भुजाओं और पीठके पट्ठों—पर कार्य किया है।
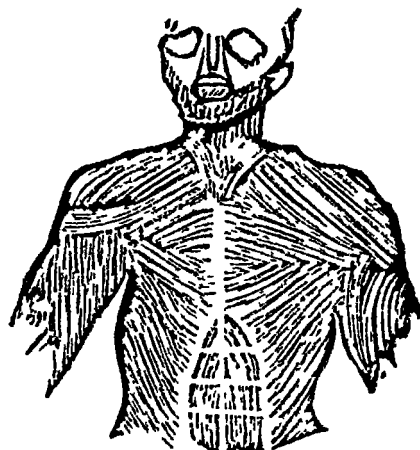
चित्र नं० १

इसके साथ साथ प्राणायाम करनेसे फेफड़े विकसित होते है और सारे शरीरमें नया रुधिर चलने लगता है ।

चित्र नं० २
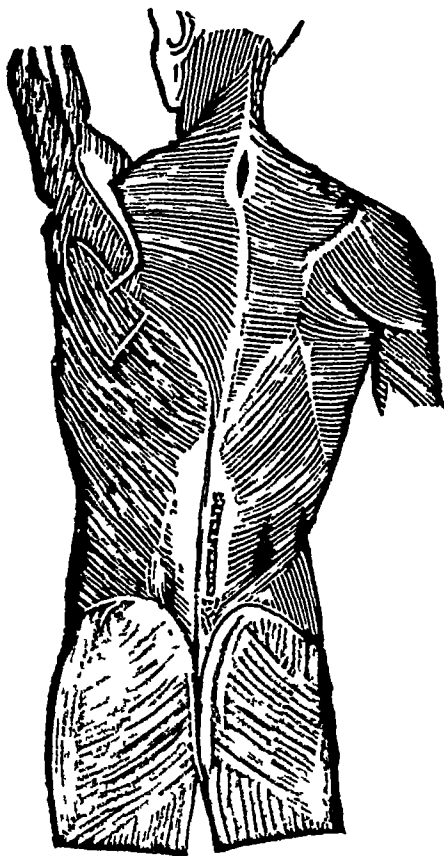
औजस-शक्तिका संग्रह करनेके लिए जो आज्ञाये पिछले प्रकरणमें दी गई है उनमें यह स्मरण रहना चाहिए कि शरीर और पट्ठोंके ढीला करनेसे **विश्राम** मिलता है । पट्ठोंको अकड़ानेसे उनमे **औजस-शक्ति भर जाती है** । यह औजस-शक्ति लहूके द्वारा चलती है और प्रत्येक अंगमें बराबर बँट जाती है । वहाँ यदि **यह चिंता, डर, चंचलता, आत्म-संयमका अभाव, या किसी प्रकारकी**

अतिमात्राके कारण नष्ट न हो जाय तो उपयोगके लिए सञ्चित रहती है।

दूसरा व्यायाम जो तुम्हें करना चाहिए वह अमरीकनोंका "सूखा तैरना" है। सीधे खड़े हो, अपने फेफड़ोंको (श्वास बाहर निकाल कर) खाली कर डालो, और हाथोंको पार्श्वों पर रख कर शनैः शनैः अपनी एड़ियों पर बैठ जाओ। तब शनैः शनैः अपनी भुजाओंको अपने सामने सम-भावसे ले आओ। अर्थात् उन्हें क्षितिज-कक्षाका समवर्ती कर दो।

तब शनैः शनैः साँस लो और साथ ही पाँवकी उँगलियोंके बल उठते जाओ। तुम्हारी भुजायें पीछेकी ओर गिरी हों मानों तुम तैर रहे हो; और क्रमशः पूर्ववत् अपनी एड़ियो पर पीछेकी ओर झुकते जाओ। इस क्रियाको बीस पचीस बार करो। इससे शरीरमें लहू झनझनाने और दौड़ने लगता है। लहूकी गतिके साथ औजस-शक्ति प्रत्येक रक्तवाहिनी शिरामें प्रवेश करती है। यह बहुत बड़े महत्त्वका व्यायाम है; क्योंकि इससे प्रत्येक पट्ठेको काम करना पड़ता है। दोनों चित्रोंमें 'ख' चिह्नित सारे पट्ठे अर्थात् फेफड़े, और यदि नौवें प्रकरणमें बताई हुई प्राणायामकी यथार्थ विधियोंके अनुसार कार्य किया जाय तो फेफड़ोंके अलावा तुम्हारे शरीरका प्रत्येक अंग अपना कार्य करने लगता है।

तुम तब तक औजस-शक्ति लाभ नही कर सकते जब तक कि तुम्हारे **मन** और शरीर पूरे तन्दुरुस्त न हों। शुद्ध व्यायाम ही सच्ची तन्दुरुस्तीका आधार है। चिन्ता आदिको दूर भगानेमें यह नाड़ी-मण्डलकी सहायता करता है; क्योंकि **मन** और **फेफड़े** दोनों मिल कर ही सारे शरीरको पूर्ण बनाते या हानि पहुँचाते है।

यदि **मन** शोकसे दब रहा है, चिन्तासे पीड़ित है, या निरुद्योगके विचारोंमें मग्न है तो सब शारीरिक व्यापार **निर्बल** हो जाते है, और औजस-शक्ति **स्वेच्छा-पूर्वक** उपयोगके लिए **संचित की जानेके** स्थानमें प्रत्येक लोमकूपसे **टपक** कर नष्ट हो जाती है। यथार्थ प्राणायामकी कितनी आवश्यकता है यह बताना मेरी शक्तिके वाहर है। सच तो यह है कि व्यायामों और अभ्यासोंसे पट्ठोंकी वृद्धिके सिवा औजस-शक्तिको कुछ भी लाभ नहीं, जब तक कि वे ठीक मेरी बताई विधिसे न किये जावें।

"सूखे तैरनेके" बाद अगला व्यायाम यह है—

सीधे खड़े हो, साँस भीतर खीचो, तब घुटनोंको सीधा रखते हुए आगेकी ओर झुको जहाँ तक कि तुम्हारे हाथोंकी उँगलियाँ पृथ्वीसे स्पर्श करने लगे। अब पुनः सीधे खड़े होनेके साथ साथ **साँसको बाहर निकाल दो।** तब इसी प्रकार बाईं ओरको झुको और साथ ही शनैः शनैः साँसको अंदर खींचो। फिर ऊपर उठते समय साँसको बाहर निकाल दो। और पुनः साँस अंदर ले जाते हुए शनैः शनैः दाईं ओर झुको।

यह सारी क्रिया शान्त और नियमित रीतिसे करनी चाहिए। प्रत्येक बार सॉस लेने और वाहर निकालनेके लिए पन्द्रह बल्कि बीस-सेकण्ड लगने चाहिए। तब आकर्षण-शक्तिका संग्रह करनेके लिए पट्ठोंको अकड़ानेके बाद, जैसा कि पिछले प्रकरणमें सिखलाया जा चुका है, आराम लो।

औजस-शक्ति और पूर्ण तन्दुरुस्तीके विलासके लिए तुम्हे इनके अतिरिक्त **किसी** और शारीरिक पट्ठोंके व्यायामका प्रयोजन नहीं। परन्तु देखना कहीं भूलसे यह न समझ बैठना कि तुम एक **सप्ताहमें**

ही विकासको प्राप्त कर सकोगे। यदि दोसे लेकर छः मास तक धैर्य और नियमसे व्यायाम करते रहोगे, और प्रति दिन **कमसे कम** तीस मिनट इस पर लगाया करोगे तब कहीं जाकर तुम्हें कुछ पात्रता प्राप्त होगी। इसके अतिरिक्त तुम्हे **मानसिक** प्रवेश-द्वारोंकी भी रक्षा करनी चाहिए।

मनको एकाग्र करना, इच्छा-शक्तिको विकसित करना, अपने मस्तिष्क और उसकी विचार-शक्तिको वशमे रखना सीखो। अगले प्रकरणमें मै **नाड़ी-मण्डल** और **औजस टकटकी**को अधिकारमे रखनेकी सर्वोत्तम विधि बताऊँगी।

---

११ औजस टकटकी—नाड़ी-निग्रह—व्यावहारिक उपयोग।

फेफड़ो और पट्ठोको परिवृद्ध करके स्वास्थ्य और औजस-शक्तिको सञ्चित करनेकी विधि मै पिछले प्रकरणमें बतला आई हूँ। इस प्रकरणमें हमें यह विचारना है कि दृष्टि तथा शरीरसे सम्बन्ध रखनेवाली नाड़ियों पर पूर्ण अधिकार कैसे प्राप्त हो सकता है। औजस या भावी औजस-व्यक्ति जो आँखोंको मिचमिचाये विना दूसरे मनुष्यके मुखकी ओर पूरी तरह ध्यान-पूर्वक देख नहीं सकता, उसमें उसकी शक्तिके परम निर्णायक प्रमाणका अभाव है।

आँखसे औजस-शक्तिका अनवरत प्रवाह बहता है। आँखो द्वारा ही "सिंहोंको पालनेवाले" सिंहोंको वशमें रखते हैं। हमारे साथ व्यवहार करनेवाले लोगोंको हम आँखोंके द्वारा ही प्रभावित करते हैं।

मनुष्य उस मनुष्य पर अपने आप ही विश्वास कर लेता है जो उसके साथ सुगमतासे आँखें मिला सकता है। फिर भी अनेक लोग केवल **मनकी दुर्बलता**के कारण ही आँखसे आँख नहीं मिला सकते।

मित्रोंके बीच या किसी और आरामकी अवस्थामें ही नाड़ियों (नर्वज) को वशमें रखना सुगम है। अपरिचित लोगों या कठिन अवस्थाओंमें नाड़ियोंको अपने अधीन रखना बड़ा मुश्किल होता है। इस लिए दिव्यशक्तिके अभिलाषीको चाहिए कि वह पहले कष्ट कर अवस्थाओंमे पट्ठों और नाड़ियोंकी क्रियाको वशमे रखनेकी निजी शक्तिको सञ्चित करनेकी योग्यता प्राप्त करे। फिर उसे सब प्रकारकी नाड़ी-संबंधी या ऐंठानेवाली क्रियाओ पर अधिकार प्राप्त हो सकेगा। दर्पणके सामने खड़े होकर उसमे अपने ही नेत्रोंको टकटकी बाँध कर देखनेका अभ्यास करो, यहाँ तक कि तुम जब तक चाहो निरन्तर स्थिरता-पूर्वक ऐसा कर सको। और साथ ही मनमें कल्पना करो कि औजस-शक्तिकी एक अनवरत धारा नेत्रोंसे बह रही है।

इसी भाँति दूसरोंके सामने देखनेका भी अभ्यास करो। उनकी दृष्टिके साथ दृढ़तासे अपनी दृष्टि मिलानेके लिए अपने आपको बाध्य करो। और इस बातको **कभी न भूलो** कि तुम प्रबल कार्यकर्त्ता हो, तुम्हारा काम दूसरे पर अपना प्रभाव डालना है, न कि उसका प्रभाव तुम पर पड़ जाय। आँखकी दृष्टिको बलवान् बनानेके लिए मैं अनेक व्यायाम बतला सकती हूँ; पर मै समझती हूँ कि औजस-टकटकीके लिए उपर्युक्त अभ्यास सर्वथा पर्याप्त है।

इन व्यायामोमेंसे कुछ एकका ही वर्णन वास्तवमें प्रयोजनीय है।

इस सारी शक्तिका आधार **विचार** और **इच्छा** है। व्यायामोंमें कई कई घण्टे नष्ट करनेका कोई प्रयोजन नहीं। दिनमें दो बार आधा आधा घण्टा लगाना ही बहुत है।

सारी ऐंठानेवाली नाड़ीगत क्रिया और तुच्छ स्वभावोंको वशमें करना सीखो। अपनी इच्छा-शक्ति द्वारा अपनी रचनाके प्रत्येक भागके स्वामी बनो। उपर्युक्त सभी व्यायाम आकर्षण-शक्तिको सञ्चित करनेमें सहायता देते है; क्योकि इनके द्वारा अधिकार प्राप्त हो जाता है। यहाँ तक कि न केवल शरीरके पट्ठे ही, वरन् **मन** भी, जो कि शरीरका **केन्द्रस्थली तारघर है,** प्रत्येक नाड़ीको पूर्ण वशमे रखता है। जब तुम प्रत्येक संकटका सामना करनेके लिए सदा तैयार और अपनी अवस्थाओ तथा अपने व्यक्तित्वके पूर्ण स्वामी हो तब तुम्हारे मार्गमे कोई भी चीज बाधा नहीं डाल सकती। तुम्हारी आकर्पण या औजस-शक्तिका अनवरत प्रवाह इसे दूर करता रहता है—**पर तुम्हारा उद्देश्य प्रशंसनीय होना चाहिए।**

लेकिन एक नियम और है। वह यह कि प्रत्येक व्यक्तिके हाथमें एक ऐसा स्थान है जो कि समग्र सत्ताका औजस-केन्द्र है। यह मांसका छोटा देवता या पर्वत, तीसरी "अँगूठी पहननेकी उँगली" के नीचे होता है। सामुद्रिक लोग इसे सूर्य या भगवान् आदित्य देवका पर्वत कहते है।

उस उँगलीका हृदयके साथ सबसे जियादह सीधा नाड़ी-गत सम्बन्ध है। मै कहती हूँ, औजस-शक्तिका यह एक प्रत्यक्ष केन्द्र है। इसके मूलमें जो मांसकी गद्दी है वह इसके चुम्बकीय ध्रुवका काम करती है। इस लिए जब लोग हाथ मिलाते हैं और उनकी औजस-शक्तिके केन्द्रोंका आपसमे निकट संसर्ग होता है, तब उनके बीच आकर्पणकी एक प्रबल धारा स्थापित हो जाती है।

यदि दूसरी उँगलियोंके मूलवर्ती पर्वतोंका भी यथा-सम्भव एक दूसरेके साथ संसर्ग करा दिया जाय तो यह प्रभाव और भी प्रचंड

हो जाता है; क्योंकि इस प्रकार छोटे चुम्बकीय ध्रुव भी इकट्ठे हो जाते हैं।

दो व्यक्तियोंके एक दूसरेके साथ हाथ मिलानेसे शरीर और नेत्रों-का औजस-प्रभाव भेजा जा सकता है। कारण यह कि जब हाथ मिलानेसे उनके औजस या चुम्बकीय परमाणुओंका संसर्ग होता है तब वे चुम्बकीय या औजस ध्रुव बन जाते हैं जिससे औजस-प्रवाह पैदा हो जाता है। औजस-शक्तिकी सहायतासे रोगोंको शान्त करने-वाले लोग भी ठीक रीतिका अवलम्बन करते हैं। निर्बल इच्छा मनुष्यके बुरा होनेका चिह्न नहीं और न बलवती इच्छा उसके अच्छा होनेकी निशानी है।

परन्तु एक निर्बल इच्छावाला मनुष्य आवश्यक तौर पर ऋणात्मक होता है। और ऐसा होनेके कारण नीतिके विषयोंमें उसका अस्थिर सङ्कल्प होना अधिक संभाव्य है।

दैव और परस्थितिका दास रहना तुम्हारे लिए अनिवार्य है; जन्म-समयकी प्रवृत्तियाँ तुम्हारे आचारको बनाती हैं; उनका उन्मूलन हो नहीं सकता; ऐसे विश्वासोंके अंदर तुम चिरकालसे पलते आये हो।

परन्तु 'नव-विचार' तुम्हें यह दिखाने आता है कि जो कुछ तुम स्वेच्छा पूर्वक बनना चाहो बन सकते हो और जो कुछ करना चाहो कर सकते हो। इसमें स्त्री, पुरुष और आयुका कोई विचार नहीं। भूत बीत गया—समाप्त हो गया; किन्तु वर्त्तमान और भविष्यत् तुम्हारे लिए मौजूद है। उन्हें तुम जैसा चाहो वैसा बना सकते हो। तुम्हें धनात्मक बन कर अपने पुराने ऋणात्मक विश्वासोंको दूर कर देना चाहिए; और तुम्हारा विश्वास ऐसा होना चाहिए कि—"जिस वस्तुका मुझे प्रयोजन है, मैं उसे अवश्य प्राप्त करूँगा।" यह आदर्श-

वाक्य तुम्हे जीवनमेसे सफलताकी सीमा तक—तुम्हारी सब आकांक्षाओंकी सिद्धि तक—ले जायगा। यह प्रमाणित हो चुका है कि साधारण चुम्बकके कणोंमें निर्वाचनकी शक्ति है, अर्थात् वे अपने परिमित क्रिया-क्षेत्रके अंदर अंदर किसी वस्तुको अपने पास आकृष्ट कर सकते है। इसके विपरीत मनुष्य-रूपी चुम्बकमें आकर्षणकी अनन्त शक्तियाँ हैं। जब एक बार वह अपनी याचनाओंको बाहर भेजना सीख जाता है तब माल सदा उसकी याचनाके समान ही मिलता है। पर साथ ही वह याचना संशय और भयसे रहित होकर साहस-पूर्वक करनी चाहिए।

मनुष्य बहुधा **अनावश्यक रीतिसे अपने आपको परिमित कर लेता है—वह पर्याप्त नहीं माँगता।** बड़े विचार कार्यमें परिणत होकर बड़े ही परिणाम पैदा करते हैं। अपने कार्य-क्षेत्रको जितना हो सके विस्तृत बनाओ। बड़ी बड़ी काँटेदार झाड़ियोंकी बाड़को फाँदनेसे बचनेके लिए जैसे मनुष्य उसके इर्द-गिर्द घूमा करता है, वैसे मत घूमो। दूसरा बड़ा दोष यह है कि लोग **दान** देनेमें बड़े कृपण हैं। वे कहते है कि हमारे पास अपने लिए तो पर्याप्त है; पर दूसरोंको देनेके लिए पर्याप्त नहीं है। वास्तवमें **उनको परमेश्वरके अनन्त भण्डारसे मिल रहा है।** इस भण्डारका माल माँगसे इतना अधिक है कि वे जितना उसमेंसे लेनेके लिए माँगे और आगे आप दूसरोंको दें उतना ही थोड़ा है।

सफलताके लिए सबसे अधिक घातक विचार मितव्ययताके है। ये प्रत्येक चीजको ठण्डा करके जमा देते है। प्रकृति अतिव्यय (फजूल खर्ची) की हद तक **खर्चीली** है। मनुष्य ही **नोच नोच**

कर बचाता है। वह डरता है कि जीवन-निर्वाहके लिए यह पर्याप्त न होगा, इस लिए अपनी दुर्गतिका वह आप ही कारण बन जाता है।

यदि तुम इस मॉग और मालके नियमके विषयमे अधिक जानना चाहते हो तो हेलन विल्मेनकी मानसिक शास्त्र पर लिखी हुई पुस्तकोंका अध्ययन करो।

---

१२ आहार।

यह बात मेरे पाठक शीघ्र ही समझ जायँगे कि **औजस-शक्ति**की प्राप्तिमें भोजन बहुत बड़ा काम करता है। मैंने **उत्तम स्वास्थ्य**की आवश्यकता पर इतना जोर दिया है और उत्तम स्वास्थ्यकी **प्राप्ति**का दारोमदार भोजन पर इतना अधिक है कि इस पर जितना विचार किया जाय उतना ही थोड़ा है।

स्वभावतः ही मै किसी भी रूपमें मासाहारकी पक्षपाती नहीं हूँ, और न मैं जिसे शाकान्न-भोजन कहा जाता है उसकी आज्ञा देती हूँ। जिस पूर्ण स्वास्थ्य, बल और दृढ़ताकी शेखी मासाहारी लोग मारा करते है उनके लिए फलाहारसे बढ कर और कोई पदार्थ नहीं। इसे प्रमाणित करनेके लिए हमें केवल जर्मनीके अंतर्गत व्हिटसनटाईड नामक स्थानमें १९०२ ई० में होनेवाली महान् अन्तर्जातीय पैदल दौड़के परिणामों पर विचार करनेकी आवश्यकता है। इसमें मुकाबला करनेवालोंने ड्रस्डनसे बर्लिन तक १२४३/४ मीलकी यात्रा की थी। मुकाबला करनेवाले बत्तीस जन, बुरे मौसिममें, १८ वीं मई (१९०२) को, सांढ़े साते बजे, ड्रूस्डन नगरसे चले। इन लोगोंमें कुछ फलाहारी और कुछ शाकान्नभोजी (इनमे बर्लिन-निवासी संसारका वीर पादचारी प्रसिद्ध कार्लमान भी था), और कुछ मासाहारी थे। **बर्लिनमें पहुँ-**

चनेवाले पहले छः फलाहारी और शाकान्नभोजी थे । तीसरा मनुष्य मार्टिन रेहान केवल बीस वर्षका था। स्वभावतः इन सबमें कार्लमान प्रथम था। उसने छब्बीस घण्टे और अट्ठावन मिनटमे यात्रा समाप्त की थी। दौड़की समाप्ति पर वह गुलाबकी तरह तरोताजा था। किन्तु मांसाहारी बड़े प्रसिद्ध और अनुभवी पहलवान थकावटसे बिलकुल चकनाचूर होकर पहुँच पाये थे।

सौ मील चलनेवाला अँगरेज (लीस्टर) जार्ज एलन भी शाकान्नभोजी है; और हम सब यूस्टेस माईल्जको जानते ही है। ये बातें राज-पुरुषो द्वारा प्रमाणित हैं। जो चाहे इनकी सचाईकी परीक्षा कर सकता है।

कार्लमान दिनमे केवल दो बार भोजन करता है। वह न कभी मांस, मुर्गा, मदिरा, कहवा, चाय, चाकोलेट आदि खाता है और न उसने अपने शिक्षाकालमें कभी अण्डा, दूध, पनीर, मक्खन और दाल आदि खाया है। हम स्वयं दिनमे दो बार भोजन करते हैं। पहला साढ़े बारह बजे दो पहरको, और दूसरा साढ़े छः बजे। हम प्रातराश (ब्रेकफास्ट या कलेवा) नहीं करते। मैंने इस रीतिको स्वास्थ्य और साफ़ मस्तिष्कके लिए बहुत लाभदायक पाया है।

फलाहार करना बहुत उत्तम है। घरके काम-काजमें आरामका तो कहना ही क्या, मुझे तो फलाहारके द्वारा शाक, अन्नकी अपेक्षा तृप्ति भी अधिक होती है। फलाहारके उपदेशसे तब तक कुछ भी लाभ नहीं हो सकता जब तक कि तत्सम्बंधी नियम, मात्रा, आदिके विषयमें कुछ क्रियात्मक शिक्षा न दी जाये। मैं कोई पंद्रह बीस अमरीकन मासिक पत्रोंमें भोजन आदिके गुणोंके विषयमे इतना कुछ पढा करती थी कि मेरा सिर चकरा जाता था। पर इनमें मतलबकी बात एक भी न होती थी। मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि लोगोंको केवल

आरम्भ करना आ जाय तो उनकी एक वड़ी संख्या मांसाहारका परित्याग कर देगी ।

साधारण मनुष्यकी प्रवृत्ति सातमेंसे छः दिन अपने वित्तसे जियादह खा जानेकी ओर रहती है । इस प्रवृत्तिको रोकनेके लिए मेरा उपदेश यह है कि रसोई तोलनेकी एक तराजू रक्खी जाय और यथार्थ मात्रा तोल कर ली जाय । वस्तुतः यह एक अलंघनीय आज्ञा है ।

स्त्री और पुरुप दोनोंके लिए मै आहारकी एक ही मात्राकी आज्ञा देती हूँ । पर साथ ही स्त्री-जाति अपने दिनके खानेमेंसे दो छटाँक सुखाये हुए फल और चार छटॉक ताजा फल, यदि आवश्यकता हो तो, कम कर सकती है । स्त्रियोके विषयमे सर्व-साधारणमें जो ये भाव पैदा हो गये हैं कि स्त्रियाँ पुरुषोंकी अपेक्षा कम खाती हैं, इसका कारण मै यह समझती हूँ कि वे भोजनोंके **बीचके समयमें** बहुत अधिक बार खाती है और पुरुषोको ऐसा करनेका प्रायः **मौका** नहीं मिलता ।

प्रत्येक युवकके लिए नित्य छःसे आठ छटाँक तक जल-रहित सूखे आहारकी दरकार है । इसके लिए दो छटाँक बादाम, अखरोट, चिलगोजा प्रभृति **छिलकेदार** फल और छः छटाँक कोई और सुखाया हुआ फल मिला देनेसे दिनके लिए पर्याप्त भोजन हो जाता है । इन सबको तोल कर दो बारके भोजनके लिए दो भागोंमें बाँट दो । ये वस्तुये एक पूर्ण परिवृद्ध युवकके उत्तम स्वास्थ्य और जीवन-शक्तिको बनाये रख सकती हैं । ग्रीष्ममे पके हुए ताजा फलकी मात्रा कुछ बढाई और साथ ही सुखाये हुए फलकी उतनी ही घटाई जा सकती है ।

आरम्भमें अनाजका खाना क्रमशः छोडो । रोटीकी मात्रा कम करते जाओ और दूध, मलाई, पनीर इत्यादि उतना ही बढाते चलो । स्ट्राबरी, रासपवरी, शहतूत, बलेक बरी, जरदालू, बेर, बेस, अनन्नास,

अनार, नाशपाती, खरबूजे, लोकाट, आडू, आम, अनार, अंजीर इत्यादि सबका ग्रीष्ममें सेवन किया जा सकता है; और अंगूर, सेव, अमरूद, नाशपाती, नारङ्गी, केला इत्यादि शीतकालमें मिल सकते हैं। सुखाये हुए फलोंके लिए किसमिस, मुनक्का, खजूर, अंजीर, वेर, और आलूचा है। परिवर्तन और चटपटेपनके लिए शफतालू विविध प्रकारकी नाशपातियाँ, सूखे सेव और केले मिल सकते हैं।

गिरियोंके भोजनके लिए वादाम, अखरोट, पिस्ता, नारियल, चिलगोजा, मूगफली इत्यादि हैं। ये सब चीजें इकट्ठी ले रखनी चाहिए। एक वार वहुत सी लेनेसे ये वहुत सस्ती पड़ती हैं। इससे एक मनुष्यके भोजनमें प्रति दिन छः या वारह आनेसे लेकर डेढ़ रुपये तक फलोंके गुणके अनुसार खर्च उठेगा। निश्चय ही जीवन-निर्वाहकी यह न केवल एक अधिक पवित्र और आरोग्यकारी विधि है, वल्कि खर्चका खयाल करनेवालोंके लिए वहुत सस्ती भी है।

सुखाये हुए फलोंके राँधनेकी विधि इस प्रकार है। पहले फलोंको साफ पानीमें खूव धो डालो। फिर उन्हें रकावीमें रख कर इतना पानी डालो कि वे उसमें डूव जायँ। दस पन्द्रह घण्टे तक उन्हें पानीमे भीगने दो। तव जिस पानीमें वे भिगोये गये हैं उसे चूल्हे पर चढ़ा दो; और मीठी मीठी आगमें पकने दो। जव करीव करीव वे पक चुके तो अपनी अपनी रुचिके अनुसार उनमें यथेष्ट मीठा डाल दो। इस प्रकार रँधे हुए फल स्वाद और गंधमें प्राय: ताजा फलके सदृश ही वन जाते है।

अँगरेज महिलायें सुखाये हुए फलोंको राँधना नहीं जानतीं। अँगरेज घरोंमें ये वनते भी कम है। उपर्युक्त अमरीकन नुसखा है। यह सव प्रकारके सुखाये हुए फलोंके लिए उपयोगमे लाया जा सकता

है। सुखाये हुए केले कच्चे या **भाफमें उबाल कर** ताजा मलाईके साथ भी खाये जा सकते है।

अनेक लोग भोजनोमे नियम-बद्ध होनेकी शिक्षा देते है। मैं दिनमें दो बार खानेकी आज्ञा देती हूँ, पर **सबसे अच्छी बात** यह है कि भूख लगने पर खाया जाय। कलेवा न करनेसे भूख खूब लगती है और स्वाभाविक भूखसे तुम्हारा स्वाभाविक आहार स्वादिष्ट बन जाता है।

मदिरा औजस-शक्तिको नष्ट कर देती है।

सादा पवित्र भोजन खानेसे तुम देखोगे कि तुम्हारी औजस और जीवनकी शक्ति दूनी बल्कि तिगुनी हो जायगी। तुम्हारी तन्दुरुस्ती ऐसी उत्तम हो जायगी कि वैसी तुमने पहले कभी न देखी होगी। तुम्हारी कार्य-शक्ति दूनी हो जायगी। तुम परमात्माके पुत्रोंके साथ बिना संकोचके ऑख मिला सकोगे।

---

१३ औजस रोग-शांति।

मैं दिखला चुकी हूँ कि औजस-शक्ति बहुत कुछ तन्दुरुस्ती पर निर्भर है। मैने यह भी दिखलाया है कि जो औज या बिजली हमारे शरीरमे और उस वायु-मण्डलमें है जिससे कि हम किसी हद तक औजस-शक्ति प्राप्त करते हैं, उसे बढ़ाने तथा संचित करनेकी ठीक ठीक रीति क्या है। पर यह समझ लेना चाहिए कि यह शक्ति हममें पहलेसे ही है।

अब तक पहले प्रकरणोंमे औजस अथवा सम्मोहिनी शक्तिका प्रयोग व्यक्तिगत उत्कर्षके लिए ही दिखलाया गया है, पर प्रश्नका एक

और पक्ष है। मेरी सम्मतिमें **रोगोंकी शान्ति**के लिए औजस-शक्तिका प्रयोग बहुत जियादह महत्त्व रखता है।

पीड़ाओको शान्त करनेके लिए औजस रोग-शान्ति (Magnetic healing) एक अद्भुत साधन है। चतुर चिकित्सक इसके द्वारा न जाने कितने इलाज कर सकता है।

नाड़ियोंके सब रोग और बहुतसे दूसरे भी रोग इस चिकित्सासे शान्त हो जाते है। यह कहनेका प्रयोजन नहीं है कि यह चिकित्सा केवल वही व्यक्ति कर सकता है जिसकी तन्दुरुस्ती अच्छी हो, जिसकी औजस-शक्तिका प्रवाह पूर्ण हो और जिसे भिन्न भिन्न रोगोकी दवा करनेका ज्ञान हो।

इसके लिए शिष्यको कुछ विशेष अध्ययनकी आवश्यकता है। उसे शरीर-व्यवच्छेद-विद्या (अनाटमी) का क्रियात्मक ज्ञान होना चाहिए। शरीर-शास्त्र पर एक अच्छी-सी पुस्तक बहुत प्रयोजनीय है। (Furneaux's Physiology) फर्नो कृत शरीर-शास्त्र एक अच्छी पुस्तक है।

कई लोग कहते है कि वैज्ञानिक विषयों पर मैं वक्रोक्ति करती हूँ, यह मुझे मालूम है। मै जानती हूँ कि जब तक विज्ञानको अध्यात्म-विद्याके साथ जोड़ा न जायगा तब तक सर्व-साधारण **नव-विचार**की परम युक्ति-सिद्ध शिक्षाओं पर ध्यान न देंगे।

मेरा तुम्हारे प्रति यही उपदेश है कि पट्ठों और नाड़ियोकी रचनाका सम्पूर्ण रीतिसे अध्ययन करो। शरीरके विविध अंगों तथा उनके व्यापारोंकी अच्छी काम-काजी जानकारी प्राप्त करो। और जो जो रोग प्रायः मनुष्य-शरीरको पीड़ित किया करते है उनमेंसे कुछ एकके लक्षणोंको जानो।

पहले प्रकरणोंमे तुमने शरीरमे औजस-शक्तिको पैदा करनेकी कला सीख ली है। यदि तुमने मेरी दी हुई शिक्षाओ और व्यायामोको पालन किया है तो तुम्हारे पास दूसरोको कल्याणके निमित्त " देनेके लिए " औजस-शक्तिका भण्डार होगा।

यदि तुम रोग-शान्तिके उद्देशसे औजस-शक्तिका प्रवाह पैदा करना चाहते हो तो अपने हाथोंको शंकुके आकार मिलाओ। उनमें हौले हौले फूँक मारो, यहाँ तक कि वे गीले हो जावें। तब उनको जल्दी जल्दी आपसमें रगड़ो। यह क्रिया तीन बार करो। अब तुम्हारे पास रोग-शान्तिके लिए पर्याप्त " प्रवाह " होगा।

पहले तुम स्नायु-पीड़ा (न्यूरलजिया), दन्त-पीड़ा, सिर-पीड़ा प्रभृति छोटे छोटे रोगोंकी चिकित्सा आरम्भ करो। इस लिए पहले मैं इनहीके इलाजकी विधि बताती हूँ।

अपने रोगीके साथ तुम सदा प्रसन्न-चित्त होकर बातें करो। अपनी विधियोंके विषयमें उसके मनमें विश्वास बिठलानेका प्रयत्न करो।

उसके पीछे खड़े हो और उपर्युक्त विधिसे पहले औजस-शक्तिका प्रवाह उत्पन्न करके अपना दायाँ हाथ उसके पेटकी जड़ पर और बायाँ हाथ उसके सिरके ऊपर रक्खो। अब बल-पूर्वक **इच्छा करो** कि औजस-शक्ति उसके सारे शरीरमेंसे बह निकले।

तब अपने हाथोंको उसके सिर ऊपर ले जाओ और उसे स्पर्श किये बिना नीचेकी ओर सिरसे पाँवकी तरफ लाओ, मानों तुम रोगोंको हाथ-रूपी झाड़ूसे साफ कर रहे हो। और प्रत्येक बार समाप्ति पर हाथोको नीचे लाकर " झाड़ दो "।

हाथोंको फेरते समय उन्हें खोलो ताकि उँगलियाँ एक दूसरेसे थोड़ी थोड़ी अलग और अंदरकी ओर झुकी रहे।

तब रोगीको आराम-कुर्सी पर बैठाओ। उसका सिर कुरसीकी पीठसे न लगे, नही तो तुम उस तक पहुँच नही सकते, उसके पीछे खड़े नहीं हो सकते और जिन्हें हम "संसर्ग-संचार" कहते हैं उनसे उसकी दवा नहीं कर सकते।

जितने समय तक रोगी तुम्हारे हाथमे है तुम्हें दृढता-पूर्वक इच्छा करनी चाहिए कि तुम्हारी उँगलियोसे निकलनेवाला औजस-प्रवाह पीड़ाको उठा ले जावे और उसे व्याधिसे मुक्त कर दे।

पहले याद रक्खो कि तुम्हारे दोनों हाथ उस समयके लिए सूक्ष्म यंत्र बन गये है और वास्तवमें तुम्हारी उंगलियाँ वैद्युत-चुम्बकीय बैटरी (electro-magnetic battery) का काम कर रही है।

दाये हाथको इस बैटरीका धन ध्रुव (Positive pole) और बायें हाथको ऋण ध्रुव (Negative pole) बनाओ। चिकित्सा करते समय इसे मत भूलो; क्योंकि यह बड़े ही महत्त्वकी बात है।

अब पहले अपना दायॉ हाथ रोगीके सिर पर और बायाँ हाथ उसके सिरके पीछे रक्खो। लेकिन ध्यान रहे कि हथेलीके मध्यवर्ती भागसे दोनों नेत्रोंके बीचका भाग दबाया जावे। अब सयत्न इच्छा करो कि तुम्हारा औजस-प्रवाह उसके सारे शरीरमें संचरित हो जाय। तुम अपने धन हाथसे, जो कि औजस-शक्ति पैदा करता है, इस प्रवाहको मस्तिष्कमेंसे अपने ऋण हाथ तक भेजते हो। ऋण हाथ-को मस्तिष्कके मूलमें रखनेसे औजस-शक्तिकी लहर रीढकी नालीमेंसे सीधी उतर कर मस्तिष्क तथा रीढकी नालियों द्वारा शरीरके सभी मुख्य मुख्य अंगो तक जा पहुँचती है।

जब इतना कर चुको तब अपने दोनों हाथोंको दृढ़ता-पूर्वक उसके माथे पर रक्खो। और दोनो ऑखोंके मध्यमेंसे हाथ फेरना आरम्भ

करके उन्हें कानोंके ऊपरसे गर्दनके पीछे तक ले जाओ । अब हाथोंको उठा लो और प्रत्येक बार जल्दीसे झाड़ो मानो कोई लसदार चीज उँगलियोंसे चिमट रही है ।

यह "झाड़ना" कहलाता है । इसके द्वारा पीड़ासे लदी हुई औजस-शक्ति दूर हो जाती है और पीड़ाके शरीरके एक भागसे निकल कर दूसरे भागमें चले जानेका डर नहीं रहता ।

जब तक औजस-शक्ति जाती न रहे तब तक इस चिकित्साको जारी रक्खो । और अन्त तक दृढताके साथ यह इच्छा करते रहो कि पीडा नष्ट हो जाय । याद रक्खो, मनुष्यका औज एक **बल है** । यह अध्यात्म-विद्याके थोड़ेसे मूढ विश्वासियोंकी कल्पना-शक्तिका आयास नहीं है । यह एक शक्ति है जिसे फ्रांसीसी, जर्मन, अमेरीकन और अँगरेज वैज्ञानिकोंने, जिनके नाम विज्ञान और विद्यामें बहुत ऊँचे है, माना है ।

इसके अलावा वे इसे एक **अनुमान मात्र** ही नहीं समझते; क्योकि मानव-शरीरसे औजस-शक्तिके प्रवाहका **चित्र लेने**में सफलता प्राप्त हो चुकी है । फोटोग्राफीके कैमेराने उस चीजको **प्रकाशित** कर दिया है जिसे कि मनुष्यके नेत्र देख नहीं सकते थे ।

प्रयोगने यह दिखला दिया है कि यह शक्ति ऐसे ऐसे रोगोंको शान्त कर सकती है जिनको ओषधियोसे बल्कि साधारण मानसिक चिकित्सासे भी कुछ फायदा नहीं होता ।

शरीरसे निकलनेवाली औजस-शक्तिका सिरकी पीड़ाको शान्त करनेके लिए किस प्रकार उपयोग करना चाहिए, इसकी मै सरल विधि बता चुकी हूँ । अब मैं दिखलाऊँगी कि नाड़ी-मण्डलके अन्य रोगोंको कैसे शान्त करना चाहिए ।

यह बात स्पष्ट समझ लो कि औजस रोग-शान्ति टूटी हड्डियोंको नहीं लगा सकती। उदाहरणार्थ, जिस मनुष्यकी रानकी हड्डी टूट गई है वह केवल यह समझ कर कि मेरी हड्डी नहीं टूटी है, उसे ठीक़ कर नहीं सकता। यही बात औजस रोग-शान्तिकी है। लेकिन याद रक्खो, **डाक्टरके एक बार हड्डीको ठीक स्थान पर बाँध देनेके बाद औजस-चिकित्सा उसे दूनी शीघ्रतासे चङ्गा कर देगी;** क्योंकि औजस-प्रवाहके प्रभावसे नवीन प्राणभूत रुधिर पीड़ित भागकी ओर बहने लगता है। मेरे पाठकोमेंसे जो इस व्यवसायको रोटी कमानेका साधन बनाना चाहते है उन्हे यह बात अवश्य याद रखनी चाहिए। साथ ही उन्हें डाक्टरके गुणों और भूलोका भी स्वीकार करना चाहिए।

शरीरकी नाड़ियोंका केन्द्र **मणिपूरचक्र** है। इसका मनके आवेगोंके साथ बहुत सीधा सम्बन्ध है। चक्रका अर्थ नाड़ियों और रक्त-वाहिनी शिराओका जाल है। मणिपूरचक्र पेटमे आमाशयके ठीक पीछे है। इसे कई बार **पेटका मस्तिष्क** भी कह देते हैं, पर कहीं अँतड़ियोंको ही मणिपूरचक्र न समझ लेना। नाड़ियोंके इस समूहके मूल्यका पहचानना औजस-चिकित्सकके लिए परम आवश्यक है। क्योंकि शरीरके इस भागमे कोई दस मिनट तक औजस-प्रवाह उत्पन्न कर देनेसे रोगीका कोई भी रोग ऐसा नहीं जो ठीक न हो जाय। दायाँ हाथ आमाशय पर सामनेकी ओर और बायॉ हाथ उसके अनुरूप स्थान पर पीछेकी ओर रक्खो और एकसे दूसरे तक बीचो बीच औजस-प्रवाह बहा दो।

यह भी याद रहे कि जल और दूधमें भी औजस-शक्ति भरी जा सकती है। यह जल या दूध रोगीको पिलाने या उसके द्वारा पीड़ित अंगको धोनेसे बहुत आराम, बल्कि पूरी तन्दुरुस्ती हो जाती है।

मैंने भयङ्कर विर्सप (Erysipelas) के एक रोगीको औजस-शक्तिसे भरा हुआ दूध पिला कर और उससे उसका मुँह धुला कर चङ्गा कर दिया था।

इसके करनेकी विधि सुनिए। पानी या दूधको एक अत्यन्त स्वच्छ बर्तनमें डालो। पूर्वोक्त विधिसे औजस-प्रवाह पैदा करो और प्यालेके ऊपर दोनों हाथ फेरो। तब दायाँ हाथ प्यालेके मुँह पर रख कर बाँहको अंकड़ाओ और ऊपरकी बाँहके पट्ठोंसे हाथको थरथरा कर (इसके लिए अभ्यासकी जरूरत है) उस जलमें स्थिरता-पूर्वक औजस-शक्तिकी लहरोंको प्रविष्ट करो।

रोगीकी दवा करनेके पहले यदि उसे औजस-शक्तिसे भरा हुआ रस पिला दिया जाय तो उसके साथ तुम्हारा अधिक अच्छा "स्पर्श" हो सकता है। कई एक व्याधियोंमें जलका प्रयोग करना चाहिए।

नाड़ियोंसे प्रत्यक्ष उत्पन्न होनेवाले दुःखोंकी शान्ति करते समय अपने हाथोंको पीड़ाके स्थान पर रख कर सीधे बीचों बीच, एक ओरसे दूसरी ओर तक लहरें भेजो। स्नायु-पीड़ा (न्यूरलजिया) दन्त-पीड़ा, कर्ण-पीड़ा इत्यादि व्याधियोंमें पहले हाथोंको जितना हो सके गरम कर लो।

रुग्ण अंगकी दवा करनेका यत्न करते समय सबके पहले रोगीकी प्रायः व्यापक चिकित्सा की जाती है। इसकी रीति यह है।

औजस-प्रवाह तैयार करो। रोगीके सब वस्त्र उतरवा कर उसे एक हलके और ढीलेसे कपड़ेमे लपेट दो। तब अपना दायाँ हाथ उसके मस्तिष्ककी जड़ पर रक्खो और बायें हाथको रीढ़ पर नीचे तक हौले हौले फेरो। हाथकी उँगलियाँ इसे नर्म नर्म स्पर्श करें।

लेकिन अपनी सारी औजस-शक्तिको रीढ़में भेज दो और अपनी सारी इच्छा-शक्तिको इस काम पर लगा दो।

रोगीको चाहिए कि इस क्रियाके समय पेटमेंसे लम्बे और गहरे सॉस ले।

अब अपने हाथोंको उठा लो और सिरसे पॉंव तक फेरो। अर्थात् हाथ ऊपर ही फिरें, रोगीके साथ उनका स्पर्श न हो। तब मणिपूर-चक्र, छाती और फेफड़ोके साथ भी ऊपर कही हुई रीतिसे बर्ताव करो।

अब पेट या पाखानेकी ॲंतड़ियोंको साफ रखनेके लिए अपना बायॉं हाथ मणिपूरचक्र पर सामनेकी तरफ और दायॉं हाथ मस्तिष्कके मूल पर रक्खो। शरीरमेंसे प्रबल धारायें भेजो और इच्छा करो कि कब्ज (बद्ध-कोष्ठता) न होने पावे।

इसके बाद **पित्ताशय**की चिकित्सा पर पॉंचसे दस मिनट तक लगाओ। इस इन्द्रिय पर दायॉं हाथ रक्खो। और तब जैसा जलमें औजस-शक्ति भरनेके विपयमे कहा गया है, इस हाथको **थरथराओ**। केवल अभ्यास ही तुम्हें इसमें सहायता दे सकता है। इसे बार बार करनेका उद्योग **करते रहो**, यहॉं तक कि तुम इसे यथार्थतः कर सको। किन्तु यह एक अति प्रबल क्षोभ है जिसका कि तुम प्रयोग कर सकते हो।

आजीविकाके अभिलाषियोंके लिए **औजस रोग-शान्ति** धन कमानेका एक साधन बन सकती है। इसके द्वारा बहुतसे ऐसे रोग और दुःख शान्त हो सकते हैं जिन्हें औपधियाँ दूर नहीं कर सकतीं।

मैं शस्त्र-वैद्यों (जर्राहों) की अनिवार्यताको स्वीकार करती हूँ, किन्तु भिपगाचार्य अपने रोगियोंमें ओपधियाँ ठोंसनेके स्थानमें युक्ति-संगत स्वास्थ्य-चिकित्साके द्वारा अधिक रोगोंको शान्त कर सकता है।

मेरे पाठकोंमेंसे जो लोग औजस-शक्तिसे अपनी रोटी कमाना चाहते है उन्हे इसका निरन्तर अभ्यास रखना चाहिए और जो भी मनुष्य उन्हें मिले उसका इलाज करना चाहिए ।

१४ दिव्यशक्ति पर अतिरिक्त अध्याय ।

पिछले प्रकरणोंमे मैने दिव्य शक्तिको बढान और उससे केवल एक विशेप हद तक काम लेनेकी विधि बताई है ।

यदि तुमने मेरे बतलाये हुए नियमोंका सावधानीके साथ पालन किया है तो तुम कमसे कम अपने मनको एकाग्र करना तो थोड़ा बहुत सीख गये होगे, और सबसे बढ कर यह कि तुम्हारा अपने आपमें और अपनी शक्तिमे विश्वास हो गया होगा ।

जिस प्रकार क, ख, ग भाषाकी भित्ति है वैसे ही ठीक ये नियम भी औजस-शक्तिकी नींव हैं, लेकिन मेरी बात पर विश्वास करो, ये नींवसे बढ कर और कुछ नहीं है । वही मनुष्य सच्चा ओजस्वी है जो इस दिव्यशक्तिसे काम ले सकता है। मै नहीं समझती कि मेरे हजारों शिष्योंमेंसे एक भी केवल पहले प्रकरणमें बताये हुए नियमोंको जान कर ही इस शक्तिसे कोई काम ले सकता है। तुमने शरीर-रूपी रचनाको समझ लिया है । तुम्हें यह विश्वास हो गया है कि एक मन दूसरे मन पर प्रभाव डाल सकता है । दूसरे शब्दोमे तुमने हारमोनियम बाजे पर सातो स्वरोंके बजाने और पाँचों उँगलियोंके चलानेका अभ्यास कर लिया है । अब तुम वास्तवमें राग निकालनेके लिए, " सरगम " पर पहुँचनेको तैयार हो !

सारा औजस-आकर्षण औजस-शक्तिके दो केन्द्रोंके बीच अदल बदलसे ही पैदा होता है । जब सब शक्ति भीतरसे निकल कर बाहर

हो जावे और वाहरसे भीतर कुछ भी न आवे तव प्रयोग-कर्तामें परम रिक्तता और जिस पर प्रयोग हो रहा है उसमे तेजो-हीनता पैदा हो जाती है। इसके अलावा जव तक कुछ वने वनाये विशेष नियमोंका पालन न किया जाय तव तक दूसरे मनुष्यके मन पर वुद्धि-पूर्वक किसी प्रकारका प्रभाव पैदा कर देना एक अतीव असम्भव वात है। नियत सफलताकी प्राप्तिके लिए इन नियमोंको अनिवार्य आज्ञायें समझनी चाहिए। इसमें सदेह नहीं कि तुम दूसरे मनुष्यको अपने सदृश वना सकते हो और छोटी छोटी युक्तियोंको पूरा कर सकते हो। लेकिन यह अभी मानसिक आकर्पणकी केवल साधारण शक्तिका ही प्रयोग है, सच्चे औजस आकर्षणका नहीं। सच्चे औजस आकर्पणसे तभी काम लिया जा सकता है जव इसके साथ—

१—दृढ संकल्प;

२—मनके चित्रोंको आगे वढानेकी शक्ति;

३—ध्रुवत्व * (polarity) के सच्चे नियमोंका (काम चलाऊ) ज्ञान और

४—जिन्हें मैं औजस या चुम्वकीय यंत्रोंके नामसे पुकारती हूँ उनका यथार्थ ज्ञान हो।

इससे यह वात स्पष्ट हो जाती है कि औजस-शक्ति वंदरोंके-से खेल दिखलानेके लिए (अमेरिकामें एक एक गिनी फीस लेकर जो पाठ पढाये जाते हैं उनमे इन वानर-लीलाओका वहुत ढोल वजाया

* ध्रुवत्व एक वैज्ञानिक परिणाम है जिसका अर्थ दो विपरीत ध्रुव रखनेकी अवस्था है। कई ऐसी चीजें हैं जिनमे एक ऐसी अवस्था होती है कि जिसके अनुसार उनके विशेष गुण अपनी व्यवस्था इस प्रकार करते हैं कि विपरीत शक्तियाँ विपरीत दिशाओंमें रहती हैं, जैसे कि चुम्वकके दो विपरीत ध्रुव।

जाता है।) वास्तवमे बहुत लाभदायक न होगी और न पूर्णतया सुसगठित मस्तिष्कवाले व्यक्तिके सिवा इसका कोई प्रयोग ही कर सकता है। इस सुसंगठनके अंदर आत्म-संयम भी आ जाता है। दूसरोंको आकर्षित करनेके लिए तुम्हारा उदासीन पर तुम्हारे संकल्प और इच्छाका दृढ़ होना परमावश्वक है।

जो कुछ करो धैर्यके साथ करो। सारा समय तुम्हारे हाथमें है। शीघ्रताका कोई प्रयोजन नहीं है। पर यह जरूर समझ लो कि जब एक बार तुमने संकल्प कर लिया तब फिर यह संकल्प चाहे कैसा ही क्यों न हो, इसे छोड़ देनेसे इच्छा-शक्ति निर्बल हो जाती हैं। यह ऐसी ही बात है जैसे कि कक्षाके श्रेष्ठ छात्रको प्रथम स्थानसे उठा कर सबसे पिछली जगह पर बैठा दिया जाय और उसके सिर पर दण्डके तौर पर कागजकी हास्य-जनक टोपी रख दी जाय। याद रक्खो, मनुष्यका संकल्प अपने आगे सब वस्तुओंको उठा कर ला सकता है, पर इसके साथ श्रद्धा और दृढ़ता भी होनी चाहिए। किसी बातके केवल सोचते रहनेसे ही कुछ नहीं होता, **कर्म** करना भी आवश्यक है। विचारोको कार्योंमे परिणत करना चाहिए। निकम्मी बातों पर अपने परिश्रमको नष्ट न करो। अपनी शक्तियोंको व्यर्थ बरबाद करना मूर्खता है।

इस विषयको चौथी संख्यासे आरम्भ करते हैं। पुराने नियमके अनुसार प्रथम नियम अन्तिम होगा और अन्तिम नियम प्रथम। सच्चे औजस-यंत्र ये है—

पहला—**मन**।

दूसरा—मानसिक क्रिया पर अधिकार रखनेवाली **इच्छा-शक्ति**।

तीसरा—**नेत्र**।

चौथा—संसर्ग या स्पर्शकी शक्ति।

पॉचवॉ—मनुष्यकी वाणी।

इस विषयके सामान्य प्रकरणोंमे अन्तिम बात अर्थात् मनुष्यकी वाणी पर विचार नहीं किया गया। मगर यह अपने कार्य-क्षेत्रमे किसीसे कम नही है। वाणी ओजस-शक्तिको ले जा सकती है, घृणा या प्रेम उत्पन्न कर सकती है और आत्मामे अनुराग या उदासीनता पैदा कर सकती है। यह एक ऐसा यंत्र है जिससे सबसे जियादा आसानीके साथ काम लिया जा सकता है। मगर मैं चाहती हूँ कि तुम यह बात भली भाँति समझ लो कि सचेतन मस्तिष्कका प्रयत्न सबसे जियादा जरूरी है; क्योंकि मस्तिष्क प्रधान यंत्र है और बाकी सब इसके बिना अधूरे है। मस्तिष्कका भूरे रंगका सूक्ष्म उपादान विचार-चित्रोंको लिखता और उनकी सूची रखता है। **ये विचार-चित्र ऐसे हैं जिनको लम्बा बढ़ा कर दूसरे मनुष्यके मस्तिष्कके भूरे रंगके उपादान तक भेजा जा सकता है; और जिनको वह मस्तिष्क अपनी निजी सम्पत्तिकी तरह ग्रहण करके अपनी सूचीमें मिला सकता है।** ये विचार-चित्र दूसरेके मस्तिष्कको तुम्हारा एक अचेत सेवक, **तुम्हारी** आज्ञाओं और इच्छाओंका पालन करनेवाला और तुम्हारी कामनाओंको पूरा करनेवाला बना देते हैं।

और ये सब काम बिना किसी शब्दोच्चारणके या वशीकरणके होते हैं।

इच्छा-शक्ति वह यंत्र है जो इन चित्रोंको बढा कर आगे भेजनेमे सहायता देता है, जो नेता है और जीवन-रूपी जहाजका कप्तान है।

कई कठिन अवस्थाओंमे शुद्ध कामना वही कार्य सम्पादित कर देती है जो कि सचेत इच्छाका प्रयत्न करता है । किन्तु सच्ची प्रयोजन-सिद्धिके लिए विचारका संगठित इच्छाके अधिकारमें होना आवश्यक है । पर वास्तविक प्रबल परिणामोंकी प्राप्तिके लिए कृतकार्य बननेके दृढ सङ्कल्पके साथ साथ उदासीनता भी होनी चाहिए ।

उदाहरणार्थ मान लीजिए कि कोई स्त्री किसी पुरुषके साथ भक्तिभावसे प्रेम करती है और वह पुरुष उसकी रत्ती भर भी परवा नहीं करता कि वह मर गई या जीती है; तो वह स्त्री उस पुरुषकी दासी है । आकर्षणका केन्द्र वह पुरुप है, स्त्री नहीं । वह पुरुष धन ध्रुव है जिसकी कि वह स्त्री एक बहुत निर्बल ऋण ध्रुव है ।

अब ऐसी स्त्री अपने विचारको बढा कर उस मनुष्यके मस्तिष्कतक पहुँचनेका चाहे लाख यत्न करे वह कभी भी उस तक पहुँच नहीं सकती । उसकी स्थिति आरम्भमे ही अनुचित है । वह अपने आपकी स्वामिनी नही, बल्कि उसकी मनो-वृत्तियाँ उसकी स्वामिनी हैं । इसका परिमाण यह है कि वह उस पुरुषको प्रभावित करनेमे सर्वथा अशक्त है, चाहे उसकी आकाक्षा कितनी ही प्रबल क्यो न हो ।

भली भाँति समझ लो कि उदासीनतासे मेरा अभिप्राय यह है कि तुम्हें उस कामनाका स्वामी होना चाहिए जो कि तुम्हारे औजस कार्यकी प्रवर्तक है; वह कामना तुम्हारी स्वामिनी न हो ।

उदासीनताकी अवस्थामें तुम अभेद्य हो ।

जो पुरुष युद्धमे मृत्युके लिए प्रार्थना करके जाता है वह सकुशल घर लौट आता है ।

जिस मनुष्यके पास प्रचुर धन है वह घुड़-दौड़में जाकर खुले दिलसे शर्तें लगा सकता है। लेकिन एक निर्धन भिखारी जिसका कि सारा दारोमदार ही जीतने पर है, अपनी सारी सम्पत्ति खो बैठता है।

इच्छा-शक्ति एक डण्डी है जो सारी कलको चलाती है। परन्तु दूसरे यंत्रोंके बिना इच्छा-शक्ति केवल एक पशु-बल है, औजस-शक्ति नहीं।

बलकी दृष्टिसे नेत्र दूसरे दरजे पर हैं। ये सदा औजस केन्द्रोको प्रत्यक्ष रीतिसे हिलाते है। परन्तु बहुत थोड़े लोग कभी दूसरेकी आँखसे आँख मिलाते है।

औजस-शक्तिके प्रकरणोंमें शिष्योंको समझानेके लिए इस बात पर विशेप जोर दिया जाता है कि लोगोसे मिलते समय वे सदा उनसे आँखसे आँख मिलावें।

मेरे कथन पर विश्वास करो कि औजस-शक्ति केवल उसी समय दूसरोंमें प्रवेश करती है जब कि तुम ठीक उनकी आँखकी पुतलीमें टकटकी लगाते हो। यह बात सम्भवतः केवल प्रेमी और प्रेमिकाके बीच ही होती है। संसर्गसे जिस रोमाचका वे अनुभव करते हैं उसका कारण भी बहुत कुछ यही आँखसे आँख मिलाना है।

अधिकतर लोग तुम्हारी आँखसे आँख तो मिलाते हैं, पर उनमे एकटक देखते रहनेकी शक्ति नहीं होती। जब किसी पर प्रभाव डालना हो तब सीधा उसकी आँखोंकी ओर एकटक देखो। बहुत थोड़े लोग ऐसे निकलेंगे जो इस दृष्टिको सहन कर सकें। सब औजस व्यवहारोंकी भाँति इसका भी कभी दुरुपयोग न होना चाहिए।

मेरे बहुतसे शिष्य और दूसरे लोग भी संसर्गके मूल्यको—जहाँ तक संसर्गका सम्बंध है—जानते है, अतः इस विपयकी व्याख्या करनेकी मुझे आवश्यकता नहीं जान पड़ती।

मनुष्यके कण्ठ-स्वर या वाणीका यह हाल है कि इसमें प्रत्यक्ष रूपसे औजस-शक्ति भर दी जा सकती है। इससे उत्पन्न होनेवाले शब्द-तरंग हमारे सन्देशको दूसरेके पास अच्छी तरह पहुँचा सकते है। इसके लिए उन्हें किसी वाक्य-कार्यका आश्रय लेनेकी आवश्यकता नहीं पड़ती।

उदाहरणार्थ, कोई दूकानदार वाजारके मन्दा होनेके विपयमें चाहे कितना ही वकवाद करता हो, फिर भी वह उन निरर्थक शब्द-तरङ्गों पर कोई प्रवल औजस वल या कोई प्रचंड औजस चित्त-क्षोभ भेज सकता है। परन्तु प्रवल परिणामके लिए चित्त-क्षोभ और शब्द एक समान होने चाहिए। जहाँ इच्छा-शक्तिके द्वारा भेजी हुई मानसिक तसवीरें सव प्रकारके संस्कार—उत्तम स्वास्थ्यके संस्कारसे लेकर मृत्युके संस्कार तक, घृणासे प्रेम तक, इत्यादि, वल्कि विशेप नियत और निश्चित कार्यों तक—ले जा सकती हैं, वहाँ वाणी केवल चित्त-क्षोभको ही ले जा सकती है। परन्तु यह औजस चित्त-क्षोभ, यथार्थ रीतिसे चलाने पर ऐसी आँधी, अनुरूप चित्त-विकारका ऐसा अवाधित तूफान, एक मनुष्यमें या दस सहस्र मनुष्योंमे पैदा कर सकता है कि अदीक्षित मनुष्य चकित रह जाता है।

अव मै अपने पाँचों औजस साधनों या यंत्रोके उपयोगको संक्षेपमें फिरसे दुहराती हूँ। मन मानसिक चित्र पैदा करता है। इच्छा शक्ति उन मानसिक चित्रोंको दूसरे मनुष्यके मस्तिकके भूरे रङ्गके उपादान तक पहुँचानेका काम देती है। नेत्र उस दूसरे मनुष्यके

तेजस्क औजमें औजस-संक्षोभ या धमाके पैदा करनेका काम करता है। संसर्गका प्रयोग भी अधिकतर इसी प्रयोजनके लिए है और वाणीका प्रयोग किसी असाधारण चित्त-क्षोभके भेजनेके लिए होता है।

अब हम तीसरी संख्या अर्थात् ध्रुवत्वके सच्चे काम चलाऊ नियमोंके ज्ञानके सम्बन्धमें विचार करते हैं।

मेरे बतलाये हुए पिछले प्रकरणोंसे तुम यह जान गये होगे कि ध्रुवत्वसे मेरा अभिप्राय औजस धाराओंकी धनात्मक तथा ऋणात्मक अवस्थासे है। यह बात हम सब जानते हैं कि शिष्यको सङ्गीत सिखलाते समय उसके हाथके पट्ठोंको लचकदार बनाने और उन पर उसका पूर्ण अधिकार जमानेके लिए उससे 'सरगम' बजवाना होता है।

पहले प्रकरणोंमें मैंने धनात्मक बननेकी आवश्यकता पर जोर दिया है। इसकी आज्ञा **धनात्मक** मनकी क्रियाके लिए है।

अब मैं कहती हूँ कि जो मनुष्य केवल धन ध्रुवत्व (Positive Polarity) का ही प्रयोग करता है वह शीघ्र ही खाली हो जाता है। यह नियम मानव-हृदयका है जिसमें कि लहू अन्दर आता और बाहर निकलता है; सागरके ज्वार भाटेका है जो कि आता और जाता है; वर्षाऋतुका है; और दिन तथा रातका है। **ऐसा हो नहीं सकता कि तुम सब कुछ देते ही जाओ और लो कुछ भी नहीं।**

और ध्रुवत्वका नियम यह है—पहले **ऋणात्मक** अवस्थायें अर्थात् अंदर लाना; फिर **धनात्मक** अर्थात् बाहर देना।

ग्रहण करनेकी योग्यता पहले और संस्कार उसके पीछे होते हैं। यदि तुम प्रकृतिके साधारण नियमोंको देखोगे तो यह सर्वथा

युक्ति-सिद्ध मालूम होगा । हम बीज बोकर पीछेसे हल नहीं चलाते; किन्तु पहले भूमिमें हल चला कर पीछेसे बीज डालते है ।

ग्रहण-योग्यता शब्दको " **बाहरसे लेने** " की क्रिया या शक्तिको साँसकी तरह अन्दर खींचनेका पर्यायवाची समझना चाहिए ।

' **संस्कार** ' से अभिप्राय बाहर निकलना अर्थात् जो शक्ति तुम बाहरस लेते हो उसका देना समझना चाहिए ।

मै चाहती हूँ कि तुम इसे खुलसा समझ लो; क्योंकि औजस-शक्तिके सारे **प्रयोग**का दारोमदार इसी नियम पर है । लोग इसको यथार्थ तौर पर बहुत कम बल्कि बिलकुल ही नहीं समझते है ।

जिस प्रधान विषयका प्रचार औजस-शक्तिके सभी शिक्षक करते हैं वह है **संस्कार डालो, संस्कार डालो, संस्कार डालो !**

यह बात मुझसे समझो कि संस्कारके केवल बाहर भेजनेसे उदासीनता पैदा होती है । इससे न कोई शक्तिका सच्चा प्रकाश होता है, न कोई नियत फल होता है, और न कोई रङ्ग दिखाया जा सकता है । इसका रङ्ग भूरा या फीका होता है ।

सारा भूरा या उदास औजस निर्जीव होता है । इसमें रंगका वह भड़कीला रस नहीं रहता जो आँखोको पकड़ कर तुम्हारी सारी सत्ताको गरम कर देता हो ।

इसके साथ स्वभावतः तुम्हारा दूसरा प्रश्न यह होगा कि मै उसे **किस प्रकार** ग्रहण करूँ और **किस प्रकार** संस्कार डालूँ ? मुझे **कब** एक क्रियाका और कब दूसरीका प्रयोग करना होगा ? बहुत अच्छा, इस विषय पर मै पीछेसे आऊँगी । इसके पहले मनको एकाग्र करनेके लिए तुम्हें जो शिक्षायें दी गई है यदि तुम उनका अनुभव

कर लोगे तो वर्तमानमें तुम्हारे लिए उतना ही पर्याप्त है। विश्व ब्रह्माण्ड सार्वत्रिक आकर्षणकी शक्तिसे उमड़ रहा है।

सार्वत्रिक आकर्षण क्या है? कोई कुछ बताता है और कोई कुछ। रोजीक्रूशियन लोग इसे एक महान् श्वेत अदृश्य अग्नि बताते हैं। यह सार्वत्रिक रस तारामय प्रकाश, गानमय बल, प्राचीनोका सजीव और धड़कनेवाला ईथर कहलाता है। केवल इतना समझ लेना ही पर्याप्त है कि इस शक्तिमें, चाहे इसका कुछ ही नाम रक्खो, सारा संसार डूब रहा है। यह तुममें है, मुझमें है और हमारे बीचके शून्यमय स्थानमें है; चाहे यह स्थान एक गज है और चाहे हम दोनोंके बीच आधी पृथ्वी है।

मेरा खयाल है कि जिस बात पर मैं जोर देना चाहती हूँ उसे तुम सब जानते हो; और वह यह है कि यह शक्ति शरीरमें विशेष सजीव केन्द्रों पर इकट्ठा हो जाती है। इन केन्द्रोंमेंसे एक मणिपूरचक्र है। इसका स्थान शरीरके उन केन्द्रोंमें है जो कि कमरमें हैं।

किसी मनुष्यमें इस शक्तिकी मात्रा बहुत अधिक है और किसीमें इसका अभाव है। जैसा कि मैं पहले कह आई हूँ यह एक माध्यम है जो कि हमारे मानसिक सन्देशोंको एकसे दूसरे तकले जाता है।

मै चाहूँ तो अपनी इच्छा-शक्ति, श्वास, वाणी, स्पर्श और कटाक्ष मात्रसे अपनी शक्तिको तुम्हारे पास भेज सकती हूँ। और इन्हीं साधनों द्वारा तुम्हारे पाससे तुम्हारी शक्ति खींच कर अपने पास ला सकती हूँ।

यदि मै तुमसे तुम्हारी शक्ति केवल लेती ही रहूँ तो तुम पशुकी भाँति मूढ, निश्चेष्ट और निद्रालु हो जाओगे। और यदि अपनी शक्ति

तुम्हारे पास केवल भेजती ही रहूँ तो मैं शिथिल, जड़, जीवन-शून्य और क्लान्त हो जाऊँगी।

किन्तु **कल्पना करो** कि मै पहले तुम्हारी शक्ति तुमसे अपने पास खींचती हूँ और **फिर** अवस्थाओंके अनुसार रीतिको बदल कर, किसी नियत समय पर तुम पर अपनी शक्तिका संस्कार डालना आरम्भ करती हूँ तो इसका परिणाम यह होगा कि तुम अपने आपको सावधान, नवजीवनसे भरे हुए, विचित्र रूपसे उत्तेजित किसी विलक्षण और अज्ञात चित्त-क्षोभ द्वारा रोमांचित अनुभव करोगे।

तुम ग्रहण-योग्य हो, मेरे सेवक हो। तुम मेरे विचारोंको स्वीकार करते हो, पर तुमको यह पता नहीं कि वे मेरे विचार हैं। तुम मेरे साथ एक हो जाते हो। तुम उतने समयके लिए मेरे सेवक हो। और मै चुपचाप अपनी इच्छाके उपदेशसे तुम्हारे अन्दर अपनी औजस-शक्ति भर रही हूँ। किन्तु मुझमें वह शून्यता पैदा नहीं होती जो मुझ पर उस अवस्थामें आक्रमण करती जब कि मैं केवल अपनी इच्छाको ही तुम पर ढकेलती।

तुम निम्न लिखित रीतिसे केवल प्राणायामके साथ **एकान्तमें** अभ्यास आरम्भ कर सकते हो यथार्थ शारीरिक संस्कृतिकी अवस्थामें सीधे खड़े हो। कमर अन्दर हो और छाती खूब ऊपरकी और तनी हुई हो। अब शक्ति प्राप्त करनेके लिए या तो एक व्यक्तिकी कल्पना करो, या केवल सार्वत्रिक भण्डारसे ही प्राप्त करनेमे सन्तुष्ट रहो। पहले धीरे धीरे **साँसको अंदर खींचो**। इस क्रियाके साथ साथ **इच्छा करो** कि तुम बाहरसे औजस-शक्तिको खींच कर अपने अन्दर ला रहे हो। यदि तुम चाहो तो इसे एक चिमट जानेवाली चीज या कोई ऐसा वस्तु समझ कर, जिसे तुम्हारे पास जानेके लिए किसी कदर **पट्ठोंका**

प्रयोजन है, अपने हाथोंके साथ भी खींच कर अपने भीतर ला सकते हो। दूसरे शब्दोंमें, केवल एक हलकीसी चेष्टा शुद्ध संस्कारको तुम्हारे मस्तिष्कके केन्द्रों तक नहीं पहुँचा सकती।

तब धीरे धीरे श्वासको बाहर निकालो। श्वासके निकालते समय इच्छा करो कि तुम्हारी औजस-शक्ति तुममेंसे निकल कर उस दूसरे कल्पित केन्द्र पर जाय। यह केवल अभ्यासके लिए है।

दूसरे लोगोंके साथ बात-चीत करते समय (भाव-भंगीके बिना) भी तुम यह काम कर सकते हो। इसका उन पर कुछ अधिक प्रभाव न पड़ेगा; क्योंकि यह औजस-रीतिसे साँस लेने और साँस छोड़नेकी केवल क्रिया मात्र है। इसके साथ मस्तिष्क अर्थात् तुम्हारे व्यक्तित्वके कल्पनात्मक पक्षकी - सहायता नहीं है। मेरा खयाल है कि ऊपरका विषय अब तुम्हारी समझमें आ गया है। इस लिए हम इसे कुछ कालके लिए छोड़ सकते हैं। परन्तु यदि तुम चाहो तो इसका यथाविधि अभ्यास कर सकते हो और तुम्हारे लिए इस अभ्यासका करना आवश्यक भी है।

× × × ×

औजस-शक्ति द्वारा लोगोंकी चिकित्सा करनेकी दो रीतियाँ हैं। एक तो यह कि जिसे कोई और अच्छा नाम न मिलनेके कारण दूरकी चिकित्सा कहते हैं और दूसरी यह कि जिसका उपयोग तुम मनुष्य या मनुष्योंके आमने सामने होकर करते हो। विलक्षण बात यह है कि पहली चिकित्सा दूसरीकी अपेक्षा अनन्त-गुनी अधिक प्रबल है। यद्यपि इन दोनों अवस्थाओंमें कार्य-पद्धति कुछ न कुछ मिलती जुलती है। पहले मैं पहली चिकित्साका ही वर्णन करूँगी।

बैठ कर यह इच्छा करना कि अमुक मनुष्यको ऐसा ऐसा करना होगा, बल्कि इच्छाकी सम अवस्थाओंके अलावा औजस श्वास लेना भी पर्याप्त नहीं है। जो संस्कार तुम डालना चाहते हो पहले उसकी सर्वथा स्पष्ट कल्पना तुम्हारे मनमें होनी चाहिए। **वह संस्कार चित्त-क्षोभके जैसा हो और चित्त-क्षोभ सार्वत्रिक होना चाहिए। तुम्हारे संदेशका यह मूलाधार और प्राणभूत सार है। इसके बिना वह अवश्य अनुत्तीर्ण होगा।**

जिस चीजके भेजनेका तुम्हे प्रयोजन है उसे तुम उस चित्त-क्षोभके साथ जोड़ सकते हो। लेकिन चित्त-क्षोभ एक आधार है जिस पर तुम अपना भवन खड़ा करते हो। यह एक कागज है जिस पर तुम अपना चित्र चित्रित करते हो।

इस चित्त-क्षोभका कोई चित्र भेजनेके पहले तुम्हें इसे अपनेमें मूर्तिमान कर लेना होगा। निगूढ रीतिसे इसका विचार मात्र करना पर्याप्त नहीं है। ऐसा करनेसे कुछ लाभ नहीं।

तुम्हें सर्वथा चित्त-क्षोभके जैसा बन जाना चाहिए। और अपनी सत्ताको उसमें इस भाँति मिला देना चाहिए जिससे किसी दूसरे ज्ञानके प्रवेश करनेकी जगह ही न रहे।

इस प्रकार उस दूसरे मनुष्यमें जो बोध या इन्द्रिय-वृत्ति तुम जाग्रत करना चाहते हो फिर उसके जाग्रत होनेकी आशा हो सकती है।

एकान्तमें शान्ति-पूर्वक बैठो, और अपनी कल्पना-शक्तिकी सहायतासे अपने चित्त-क्षोभके सदृश बन जाओ। प्रत्येक चित्त-क्षोभ सार्वत्रिक और सर्व बंधनोंसे मुक्त होना चाहिए।

चित्त-क्षोभ एक ऐसी वस्तु है जो न किसी सूक्ष्म स्वीकृत मतके और न मापाके अधीन है; और जिसका सभ्य और असभ्य दोनों एक-सा अनुभव करते और जिसे समान समझते हैं। प्रेम, घृणा, लोभ, दानशीलता, भय, धीरता, स्वास्थ्य, व्याधि, मनोवृत्ति, शक्ति, भक्ति ये सब सार्वत्रिक चित्त-क्षोभ हैं। अपनी कामनाओंके अनुसार इनमेंसे किसी एकके रङ्गमें ऐसे रँग जाओ कि उस समयके लिए तुम केवल उसीकी ही एक मूर्ति बन जाओ। तुम इस चित्त-क्षोभके स्वामी हो। तुमने इसे कोटकी तरह पहन लिया है। तुम इसे बड़ी आसानीसे उतार सकते हो। तुम वस्तुतः उदासीन हो।

दूसरी समवस्थाके लिए स्वप्न और सत्य घटना-रूपी चित्रोंको चित्रित करनेवाली कल्पना-शक्ति-रूपी विचित्र चित्रकारका और भी अधिक आश्रय लेना पड़ता है। जिस मनुष्यको तुम प्रभावित करना चाहते हो उसे देखना इसके आगेकी सीढ़ी है। कितने लोगोंके लिए तो यह कठिन नहीं है, और कितनोंके लिए इसकी प्राप्ति पहाड़के जैसी भारी है। किन्तु यदि तुमने मनको एकाग्र करनेका अभ्यास किया है तो तुम उस मनुष्य पर बड़ी अच्छी तरह अपना प्रभाव डाल सकोगे। तुम्हें उसको मानसिक नेत्रोंसे ऐसा साफ साफ देखना चाहिए मानों वह तुम्हारे सामने बैठा है। उसके रूप, रंग, नेत्र आदि सभी चीजे तुम्हारें मानासिक दर्शनमें स्पष्ट देख पड़नी चाहिए। अपने चित्त-क्षोभका गाढ़ा रंग तुम पर चढ़ चुका है, मानासिक दर्शन तुम्हारे सामने है, अब तुम उसे (पुरुष या स्त्रीको) नाम लेकर पुकारो। जिस समय तुम्हारी आवाज बाहर जावे उस समय उस व्यक्तिकी ओजस-शक्तिको बड़े जोरसे अपने पास खींचो

जिस प्रकार कि तुम्हें सिखलाया गया है। किन्तु इतना याद रक्खो कि अभ्यासके समय जहाँ तुम साँस लेनेके साथ शक्तिको भीतर ले जाते थे वहाँ इस अवस्थामें तुम्हें इसे उस समय अंदर खींचना है जब कि तुम्हारी आवाज बाहर गूँज रही हो। इसे दो तीन बार दुहराओ, मानों तुम सचमुच ही उसे पुकार रहे हो और उसके उत्तरकी प्रतीक्षामें तुम्हारे कान लग रहे हैं।

अब तुम्हें यह ज्ञान हो गया कि तुम तीन भिन्न भिन्न अवस्थाओंमेंसे निकल गये हो। पहली अवस्थामें तुमने चित्त-क्षोभ पैदा किया है; दूसरी अवस्थामे मानसिक चित्र तैयार किया है; और तीसरी अवस्थामें जिस मनुष्य पर तुम प्रयोग कर रहे हो उसकी औजस-शक्ति तुमने अपनेमें भर ली है। अतः ग्रहण-योग्यताकी अवस्था तुममें पैदा हो गई है।

यदि इस समय भौतिक शरीरके साथ तुम उसके पास होते तो देख सकते कि वह व्याकुल और थोड़ासा उत्तेजित है, और उसके विचार **तुम्हारे** इर्द-गिर्द इकट्ठे हो रहे हैं। यह एक विचित्र बात है कि ज्यों ही तुम किसी व्यक्तिकी मानसिक प्रतिमा तैयार करते हो उसी वक्त उस व्यक्तिके पास भी तुम्हारी मानसिक प्रतिमा पहुँच जाती है।

अब तुम अपनी कामनाको उस व्यक्तिके पास भेजनेके लिए तैयार हो; किन्तु यह मत भूल जाना कि यह कामना सार्वत्रिक चित्त-क्षोभके सदृश हो और सन्देश **अवश्य** ही उसके अनुरूप हो। जब तुम अपने संदेशका—उच्च स्वरसे—संचालन करो तब अपनी औजस-शक्तिको अपनी सारी इच्छाके साथ उस व्यक्तिकी ओर भेजो जहाँ तक संदेशका सम्बंध है। तुम्हें समझ लेना चाहिए कि यह भी

विशेष बने बनाये नियमोंके अधीन है। यथा-सम्भव सन्देश सरल होना चाहिए। वह इस योग्य हो कि उसका मानसिक चित्र बन सके। आवश्यक समय तक दृढ़ता-पूर्वक उसे दुहराते रहना जरूरी है।

इसका बहुत कुछ दारोमदार अपने स्वरूप पर निर्भर है। इससे तुम्हें पता लग जायगा कि मनःसंयोग (टेलीपेथी) औजस-शक्तिको ले जानेके लिए साधनका काम देता है। किन्तु मनःसंयोगका जो अर्थ प्रायः समझा जाता है, जहाँ तक विचार-चित्रोंका सम्बन्ध है उसे छोड़ कर, चिकित्साकी यह रीति वस्तुतः उससे **सर्वथा भिन्न है।**

रोग-शांतिके लिए कितना समय दरकार है, यह तुम्हारी स्वाभाविक योग्यता पर निर्भर है। अपना संदेश पहुँचाते समय "मैं चाहता हूँ" यह कभी न कहो। यह सर्वथा अनुचित है। किन्तु यह कहो कि "तुम चाहते हो;" क्योंकि इस नियमका पालन करना औजस-शक्तिका तत्त्व है। दूसरे **मनुष्यके मस्तिष्क पर अपने विचार ऐसे रूपमें डालो कि वे उसे अपने ही प्रतीत हों।** शायद मुझे इस विषय पर ऐसी स्वतंत्रतासे बोलना न चाहिए था; किन्तु मैं भली भाँति जानती हूँ कि बहुत थोड़े लोग इन शर्तोंको पूरा कर सकते हैं या इतना लम्बा उद्योग कर सकते हैं; इस लिए मैं नहीं समझती कि मेरे इस कार्यसे बहुत हानि हुई है। यदि तुम किसी ऐसे व्यक्तिको जानते हो जो कि बहुत दुखी, हताश और निराश्रय है; और तुम उसे सुखी, आशासे परिपूर्ण बनाना चाहते हो, तो अपने आपको आशाके चित्त-क्षोभसे इतना भर लो कि जीवन और आनन्दके कारण तुम्हें अपना व्यक्तित्व हलका और प्रमुदित मालूम होने लगे। और फिर जिस व्यक्तिको तुम प्रभावित करना चाहते हो उसके चित्रको बुलाओ और औजस श्वासके साथ उसका नाम लेकर पुकारो।

इसके बाद उसके पास अपनी औजस आशाका संदेश भेजो । कहो— "**तुम हर्षित होना चाहते हो । तुम अपने आपको सुखी अनुभव करना चाहते हो । तुम्हारा हृदय आशासे परिपूर्ण है । तुम गा सकते हो और अपनी सत्तामें भावी सफलताके आनन्दके उमड़े हुए समुद्रका अनुभव कर सकते हो ।**" इसका परिणाम उस परिणामसे सर्वथा भिन्न होगा जो कि मानसिक चिकित्सा या औजस-शक्तिके साधारण साधनों द्वारा इसी चिकित्सासे उत्पन्न होता है ।

मैने यह एक उदाहरण मात्र दिया है । औजस-शक्ति केवल इसी प्रकारका ही काम नहीं देती । तुम इससे माँग सकते हो कि अमुक व्यक्ति तुम्हारी परवा करे, किसी दूसरे व्यक्तिकी परवा न करे । तुम माँग सकते हो कि अमुक व्यक्ति तुम पर कृपा करे जब कि तुम नौकरीकी तलाशमें हो । इससे सहस्रों काम लिये जा सकते हैं, लेकिन रीति सदा वही और उसी क्रमके अनुसार रहती है ।

व्यक्तिगत संसर्गकी अवस्थामे मुख्य बातोंके एक ही-सी रहते हुए भी उनके विस्तारमें भेद है । और इस बात पर जोर देना भी आवश्यक है कि यह रीति व्यक्तियों और श्रोतृ-समाजों दोनों पर एकसी लागू है ।

नट और नटियाँ, वक्ता और उपदेशक, गवैये और किस्सागो, वकील और बैरिस्टर, वास्तवमे साधारण जनतासे व्यवहार रखनेवाला **कोई भी मनुष्य** इसका प्रयोग कर सकता है ।

व्यक्ति या श्रोतृ-समाजके साथ संसर्ग करनेके पहले अपने आक्रमणकी युक्तिका स्पष्ट विचार कर लो कि वह क्या बात है जो कि तुम

करना चाहते हो ? और तुम्हारी युक्तियाँ क्या क्या हैं ? इस विषयमें मैं अपने ही शिष्यका एक उदाहरण देती हूँ। वह एक बहुत बड़ा व्यापारी है। उसका व्यापार चाहे कैसा ही है; परन्तु इसमे सन्देह नहीं कि वह उसमें बहुत होशियार है। एक बार उसे अपने ही सदृश अन्य चार व्यापारियोंसे व्यवहार करना पडा। उसमें मेरा शिष्य कई नई बातें प्रविष्ट करना चाहता था, पर ये लोग वर्षोंसे उसका घोर विरोध कर रहे थे। इस कारण वह किसी प्रकार भी उन पर अपना प्रभाव न डाल सका था। अन्तमें निरुपाय होकर वह मेरे पास आया और मैंने उसे वही बातें सिखलाईं जो तुम्हें अभी सिखला चुकी हूँ। आरम्भमें मैंने उसे, उनमेंसे प्रत्येक मनुष्य पर अलग अलग पहले दूरसे असर डालनेके लिए कहा और साथ ही शक्तिके चित्त-क्षोभसे अपने आपको भर लेनेको कहा। इसके बाद उसने मेरी शिक्षाके अनुसार मानसिक चित्रके रूपमें उनमेंसे प्रत्येक मनुष्यके पास अपनी कामनाका नमूना भेजा। फिर वह एक एकसे मिलनेके लिए गया। प्रत्येकके आफिसमें प्रवेश करनेके पहले उसने उस मनुष्यसे औजस-शक्ति खींच कर अपने आपमें भर ली। और फिर वह उसके साथ शान्ति-पूर्वक बात-चीत करते हुए उसके मस्तिष्क पर उज्ज्वल मानसिक चित्र डालता रहा।

एक मनुष्यने तो मेरे शिष्यसे कोई विशेष पूछ-ताछ किये बिना ही अपनी इच्छासे अपने आपको उसके हाथोंमें समर्पण कर दिया। कुछ दिन बाद एक सार्वजनिक सभा हुई। उसमें बाकी तीन मनुष्योंने भी अपने हठको छोड़ कर मेरे शिष्यकी बातोंको मान लिया। इस प्रकार औजस-शक्तिके यथार्थ प्रयोग द्वारा उसने एक ऐसी विजय लाभ की जिसके लिए कि वर्षोंसे वह व्यर्थ-यत्न हो रहा था।

मेरी बताई हुई औजस रोग-शान्तिकी विधिमें बहुतसे लोगोंको यह सबसे बड़ी कठिनाई मालूम होगी जिसे कि मैं अपने आपको चित्त-क्षोभसे भर लेना कहती हूँ।

वायोलट वेम्बर्ग और ईथल आइर्विङ्गके जैसी निपुण नटियोंके लिए चित्त-क्षोभके गाढे रङ्गमें अपने आपको रँग लेना उनके जादूका एक भाग है और साथ ही वह बहुत सुगम भी है। किन्तु एक साधारण अँगरेज पुरुप या स्त्रीके लिए चित्त-क्षोभका इस प्रकार ग्रहण कर लेना कठिन है; क्योंकि वे लोग पहलेसे ही चित्त-क्षोभको दवाते हैं और अपने सच्चे भावको इतना छिपाते रहते हैं कि कई वार ऊपरसे ऐसा प्रतीत होने लगता है मानों वे चित्त-वृत्तियोंसे शून्य हैं।

चित्त-क्षोभको ग्रहण करनेका काम दूध और पानीकी रीतिसे करना निष्फल है। मान लो कि तुम धर्म्मका चित्त-क्षोभ ग्रहण करते हो। इसके लिए तुम्हें अपनेमें संभ्रान्त पूजाका प्रचंड अनुभव लाना चाहिए। मानों तुम वस्तुतः परमात्माके सामने वैठे हो। यदि तुम प्रेमका चित्त-क्षोभ ग्रहण करते हो तो तुम्हारी सारी सत्ता उस कोमल मनो-भावसे धड़क उठनी चाहिए। तुम्हें प्रेमकी मूर्ति वन जाना चाहिए। प्रेमका प्रकार सत्ताकी दशा है। इसका विचार करना भी आवश्यक है।

माताका जो स्नेह अपने वालक पर है; एक वलवान् पुरुषका जो प्रेम उसकी प्रियतमाके लिए है; या एक लंपट पुरुषकी आसक्ति उसकी काम-तृष्णाको तृप्त करनेवाली किसी स्त्रीके लिए है; इनका आपसमें भारी भेद है। इन सव विभिन्नताओंका भली भाँति खयाल रखना आवश्यक है। चित्रकारकी भाँति तुम्हे इनके हलके और गाढ़े रङ्गोंको देखना चाहिए। तुमने उस चित्त-क्षोभको केवल ग्रहण ही

नहीं किया, बल्कि उस समयके लिए तुम उसीके सदृश—उसी रूप—बन गये हो। तुम्हारे शरीरकी प्रत्येक नाड़ी और प्रत्येक तंतु तुम्हारी कल्पना-शक्तिके प्रत्येक प्रश्नका उत्तर देता है। इतना होने पर भी तुम जब चाहो तब प्रशान्त हो सकते हो और अपनी स्वाभाविक अवस्था लाभ कर सकते हो। तुम्हारा मस्तिष्क क्षणभरमे सब प्रकारके तूफानोंसे राहित हो सकता है। मै नहीं कहती कि उपर्युक्त क्रिया तुममेंसे कुछ निकाल न ले जायगी; परन्तु यदि तुम औजस श्वासके नियमों पर चलोगे और अपने यत्नोंको बढानेके पहले अपने आपमें यथार्थ औजस-शक्ति भर लोगे तो वास्तवमें तुम्हारी बहुत थोड़ी क्षति होगी। फिर चित्त-क्षोभकी आँधियाँ भी तुम्हें स्पर्श कर नहीं सकतीं। इसी कारण मैंने अपनी शिक्षाओंमें औजस श्वास और औजस ध्रुवत्वके यथार्थ प्रयोग पर इतना जोर दिया है। यह युक्ति-सिद्ध है कि यदि तुम ग्रहण-योग्यता पैदा करना नहीं जानते, या तुम्हें यह मालूम नहीं कि संस्कार किस समय डालना चाहिए, तो इस अद्भुत शक्तिके प्रयोगमें तुम्हें भारी दिक्कत होगी। सच यह है कि किसी एक विषयको छोड़ देने, या विषयोंके क्रमको बदल डालनेका परिणाम विफलता होगा। सबके पहले धैर्य और श्रद्धा, अर्थात् फल-प्राप्तिका निश्चय सफलताके आवश्यक अंग हैं। श्रद्धा पर्वतोंको हिला सकती है।

अब हम फिर लोगोंके साथ व्यवहारकी यथार्थ रीतिकी ओर आते है। " संसर्ग-कार्य " अर्थात् व्यक्तिगत दर्शनके लिए औजस-शक्तिका प्रयोग करते समय यह सदैव स्मरण रहना चाहिए कि चाहे किन्हीं विपयों पर बात-चीत छिड़े तुम सारा समय अपनी भाव-प्रधान औजस-शक्तिके रंगमें ही रँगे रहो, यहाँ तक कि वायु-मण्डलमे भी मानों तुम्हारे संकल्पसे ही वैद्युत (या औजस) हो जाये।

किसी महान् चित-क्षोभका अनुभव करते समय हौले हौले बात करना सीखो। साथ ही उस समय **बात-चीत करना** सीखो जब कि तुम्हारा मस्तिष्क (बिना बोले) उन शब्दोंकी व्यवस्था कर रहा है, जो कि तुम्हारी गुप्त इच्छाके सन्देशको ले जाते हैं। लेकिन ऐसा करना कोई आसान काम नहीं, जब तक कि तुम्हारा चित्त पहलेसे ही उस मनुष्यमें लीन न हो। पर न यह उचित भाव है और जिस मनुष्यके साथ तुम्हें व्यवहार करना है उसके लिए न कोई प्रशंसाकी बात है।

मैं जानती हूँ कि एक समय एक ऐसा मनुष्य हुआ करता था जिसने अनुचित समय पर जमुहाई लेनेसे ही बहुतसी सम्पत्ति खोदी थी। तुम्हारी सावधानतासे यह सावधानी चाहे किसी भी प्रकारकी हो तुम्हें इतनी क्षति पहुँचा सकती है जिसका कि तुम अनुमान भी नहीं कर सकते।

जब तुम्हारा शरीर औजस-शक्तिकी आँधीसे खौल रहा हो और तुम्हारा मस्तिष्क उस अनवरत हठके साथ, जो कि प्रायः सूचनाकी विशेषता है, अपने मूल सन्देशोंको घड़ रहा है, ऐसे समयमें तुम मुसकराना, दिलचस्पी लेते दिखाई पड़ना और प्रचलित प्रसंगों पर आनन्द-पूर्वक बात-चीत करना सीखो। औजस-शक्तिके प्रयोगको उद्‌बोधनसे बड़ी सहायता मिलती है। एक शब्दके इस प्रकार रख देनेसे इच्छित फलमे भारी प्रभेद हो जाता है।

कई लोग ऐसे हैं जिनसे यह कहना कि "**मैं चाहता हूँ कि तुम ऐसा ऐसा करो**" उनसे उसके करनेसे इनकार कराना है। सूक्ष्म रीतिसे उन्हें यह सुझा देनेसे कि कोई निर्दिष्ट कार्य करना उनकी ही

अपनी विशेष कामना है, वे प्रायः विश्वास करने लगते है कि हॉ यह उन्हींकी कामना है।

सूक्ष्म और उपयोगी प्रकारकी औजस-शक्तिका सारा उपयोग इसके सिवा और कुछ नहीं कि अपनी कामनाओंके पौधोंको उखाड़ कर दूसरेके मस्तिष्कमें इस प्रकार गाड़ा जावे कि वह उन्हे अपने ही लगाये हुए समझने लगे। लगातार अभ्याससे इसकी सिद्धि शीघ्र ही सुगम हो जाती है।

परन्तु लोग प्रायः इस क्रियाको वित्तसे बढ कर करने लग जाते है और थक जाते है। तुम कभी ऐसी भूल न करना। औजस-शक्ति **प्रयोजनके समय** उपयोगके लिए है। इसका वित्तसे वढ़ कर प्रयोग हो सकता है जिससे फल नष्ट हो जाता है। गरमीके बाद सरदी आती है; रातके वाद दिन होता है; इसी प्रकार चित्त-क्षोभकी औजस ऑंधीके वाद **निश्चलता** पैदा होती है।

मेरी एक वहुत प्यारी शिष्या—देवी—का पति जो कि अब इस संसारमे नहीं है, पशुके सदृश था। वह सदा उसे छोड़ कर आवारा फिरा करता था। मैंने उसे उसके वशीभूत करनेकी विधि बताई; पर मै उसे कभी इस वातका निश्चय न करा सकी कि इस विधिमें कुछ आराम लेनेकी भी जरूरत है। वह दुवारा उसके वशीभूत हो गया, और पन्द्रह वर्षकी उदासीनता और क्रियात्मक परित्यागके बाद व्यग्र प्रेमीकी भॉति उससे प्रेम करने लगा। परन्तु मैं कभी उससे उसकी चिकित्साभे परिवर्तन न करा सकी। इसका परिणाम यह हुआ कि एक वर्ष तक नये विवाहका-सा आनन्द लूटनेके वाद वह फिर ऊब गया और उसे छोड़ कर आवारा फिरने लगा।

औजस-शक्तिका प्रेमियो और प्रेमिकाओं पर भारी असर होता है, इस लिए मेरी उनसे प्रार्थना है कि वे इस नियमको याद रक्खें कि 'किसी स्त्री या पुरुषको अपने प्रेम-पाशमे फँसा लेना तुम्हारी शक्तिमे है; परन्तु यदि तुम उनके मस्तिष्कमे प्रेमको खोदते ही जाओगे तो वह मस्तिष्क **रसिकता-हीन**, सपाट, तोतेके सदृश और निकम्मा वन जायगा। जब तुम्हारा कार्य सिद्ध हो चुके तब इसे आराम दो। औजस-शक्तिका खयाल मत करो। सदा मीठे ही मीठे न वने रहो। उस पुरुष (या स्त्री) का कुछ कालके लिए पीछा छोड़ दो। वल्कि थोड़ीसी सुविवेचित उदासीनता या उपेक्षाके साथ अपनी चिकित्साको बदल डालो। इसके वाद जब कोई कष्ट जान पड़ने लगे, जब तुम्हारी प्रीतिका विषय संदिग्ध हो जाय, वल्कि पीड़ा-रूप वन जाय तब यदि तुम चाहो तो फिरसे अपनी चिकित्साको दुवारा जारी कर सकते हो। जो व्यक्ति इस औजस ध्रुवत्त्व (Polarity) के नियमको समझता है वह किसी स्त्री या पुरुषको सदाके लिए अपना अनुरागी दास वनाये रख सकता है। इसमें रूप, आयु, योग्यता आदि किसीका भी कुछ खयाल नही है। परन्तु **गरमी और सरदीके मारे** हुए और उदास **कभी** न देख पड़ो। यदि तुम जोशमें आये बिना रह नहीं सकते तो फिर चाहे तुम ठण्डे हो या गरम, और चाहे उदासीन, जीवनको आनन्दमय समझो। जो मनुष्य जीवनयात्रामें हँसता खेलता और गाता बजाता चलता है उसके पास एक स्थिर औजस प्रवाह है। रोना-धोना और उदासीनता उस प्रवाहको तोड़ डालते है। शोकके समय तुममें ठीक उसी वस्तुकी प्राप्ति होगी जो कि तुमने उसे दी है। इस लिए बुद्धिमान् बनो, सहानुभावी वनो, आनन्दकी मूर्ति बनो और **बलवान्** बनो।

बाहरसे तुम चाहे कैसे ही देख पडो इसकी कुछ परवा नहीं; परन्तु भीतर अपराजेय इच्छाकी धारा तुम्हे तुम्हारे मनो-वाञ्छित पदार्थ तक ले जा रही हो। जब एक बार तुमने हलको हाथमें ले लिया तब फिर पीछे मत मुडो—चलते चलो, हो सके तो शीघ्रतासे चलो, नही तो धीरे धीरे ही सही, पर **चलते जरूर चलो**। यदि तुमने कोई कामना बना ली है तो इसे पहलेसे ही अपनी समझ रक्खो; क्योंकि तुममें इसे जारी रखनेकी धीरता है तो यह वास्तवमे तुम्हारी ही है। व्यक्तिगत संसर्गके क्रमको संक्षेपमे फिरसे दुहराया जाता है।

पहला—अपने औजस चित्त-क्षोभसे अपने आपको पूर्णतया भर लो। उसके रंगमे रँगे जाओ।

दूसरा—जब तुम उस मनुष्यके सामने जाने लगो तब कृपया **भरे हुए फेफड़ोंके साथ** जाओ और उसे साधारण भावसे अभिवादन करो। फिर अपनी इच्छाके यत्नसे, अपनी वाणीके शब्द-तरङ्गों द्वारा उस मनुष्यकी औजस-शक्तिको अपने पास खींच कर उससे अपने आपको भर लो।

तीसरा—अपनी सारी शक्तिके साथ अपनी कामनाओंको मूक शब्दोंमें प्रकट करो।

चौथा—प्रकट करनेके साथ ही उस मनुष्यको अपनी औजस-शक्ति या वापसी लहरसे भर दो।

पाँचवाँ—जब तुम अपने लक्ष पर पहुँचो (यह जरूरी नहीं कि यह सदा वास्तविक शब्दोंमें ही हो। प्रायः अपनी कामनाओंके शब्दोंको बोलकर प्रकट करना अनावश्यक होता है। पर यदि यह मान लिया जाय कि शब्द बोलने ही हैं) तो तुम्हारे अनुरोधका उपोद्घात इस

प्रकार होना चाहिए। पहले औजस-शक्तिको भीतर खींचो, अर्थात् जब तुम्हारी वाणी शब्द-तरंगोंके साथ साथ बाहरकी ओर चलती है तब यह तुम्हारी इच्छा-शक्तिको उत्पन्न करती है। जिस मनुष्यसे तुम बातें कर रहे हो उससे यह औजस-शक्तिकी आवश्यक मात्रा खींच कर तुम्हारे भीतर ले जा रही है। और जब तुम निर्णयके अवसर पर पहुँचो तब अपनी वाणी, इच्छा और मस्तिष्क-चित्रको अपनी निजकी औजस-शक्तिसे अच्छी तरह लद कर जिस मनुष्यके साथ तुम व्यवहार कर रहे हो उसके पास बाहरकी ओर भेजो। तुम इसके असरको देख कर चकित रह जाओगे। यदि बिजलीके एक शक्तिशाली यंत्रका उस पर प्रयोग किया जाता तो भी उस पर इससे जियादह असर न होता। ऐसा आक्रमण बहुत कम निष्फल जाता है।

सार्वजनिक वक्ता और ऐसे ही और लोग इस शक्तिका इसी प्रकार प्रयोग कर सकते हैं। हाँ, यह ठीक है कि बहुत कुछ उनके विषय पर भी निर्भर है। परन्तु जब तक वे पहलेसे ही यथार्थ औजस चित्त-क्षोभसे न भरे हों इससे कुछ भी लाभ उठा नहीं सकते। यह चित्त-क्षोभ तुम्हारा आधार है। तुम्हारे बाहरके शब्द या कर्म चाहे कुछ ही प्रकट करे, तुम्हें एक क्षणके लिए भी इसे दृष्टिसे ओझल न होने देना चाहिए। इसका अनुभव करना चाहिए। तुममेंसे इसकी ऐसी तीक्ष्ण किरणें निकलें कि तुम्हारे उद्देशको समझानेके लिए किसी क्रिया या वक्तृताकी आवश्यकता न हो। सब लोग उसे समझ सकें और उसका अनुभव कर सकें। जैसा कि मेरा बच्चा टाँगोंको ऊपर करके सिरके बल उलटनेके खेल करते समय कहा करता है—' जो मनुष्य इसको कर सकता है वह एक ऐसी शक्तिका स्वामी है जिससे बढ़ कर विज्ञानको अभी तक और कोई मालूम नहीं

हुई, उसके पास एक ऐसा बल है जिसका प्रयोग करनेसे मनुष्य हिचकिचाता है । ' इसका प्रयोग केवल भलाईके लिए ही करो, अन्यथा विश्वास रक्खो यह मुड़ कर तुम्हे नष्ट कर डालेगी !

ओ हण्णु हारा ।

---

१४ प्राणायामकी एक सरल विधि ।

प्राणायामः परं तपः ।

श्वासको बल-पूर्वक बाहर फेंक कर यथाशक्ति उसे बाहर रोकना, और फिर धीरे धीरे प्राणको भीतर खींचते जाना, जब फेफड़े भर जायँ और प्राण अधिक अन्दर न जा सके तब प्राणको सामर्थ्यके अनुसार अन्दर ही रोक रखना यह एक प्राणायाम हुआ । प्राणको बाहर फेंकनेका नाम रेचक, प्राणको बाहर रोकनेका नाम बाह्य कुंभक, प्राणको भीतर भरनेका नाम पूरक और भीतर रोकनेका नाम अभ्यन्तर कुम्भक है ।

अभ्यासीको चाहिए जो स्थान ऊँचा नीचा न हो, सम हो, कंकर-कण्टक-रहित हो, कीट आदि क्षुद्र जन्तुओसे विवर्जित हो ऐसे शुद्ध, और शान्त भूमिभाग पर कुशादिका आसन बिछा कर पद्म आदि आसन लगावे, अथवा जिस प्रकार सुखसे बैठ सकता हो बैठे । मेरु-दण्ड (रीढकी हड्डी) सर्वथा सीधा होना चाहिए । छाती, गर्दन और सिर एक रेखामें हो । आँखोंको बिना ऊपर नीचे किये सामने किसी ऊँची वस्तुको देखनेसे माळूम हो सकता है कि काया सम और सीधी है । इच्छासे देहको अकड़ाना नहीं चाहिए; किन्तु ढीला और सीधा रखना आवश्यक है। मुँहसे न साँस लेना चाहिए और न प्राणायाम ही करना चाहिए । मुँह अन्न-जल भीतर ले जानेके लिए है । प्राणको

लेने और अपानको छोड़नेके लिए विधाताने नाकको बनाया है। मुँहसे साँस लेना भारी भूल है। कारण यह कि—

(१) खुले मुँहसे मर्यादासे अधिक साँस भीतर चला जाता है और इससे हानि होती है।

(२) मुँहके रास्ते शीतल पवन एकदम ही फेफड़ोंमे चला जाता है। इससे निमोनिया आदि भयङ्कर रोगोंके पैदा हो जानेका डर रहता है।

(३) वायु-मण्डलमे बड़े बड़े भीषण रोगोके असंख्य सूक्ष्म जन्तु मौजूद है। वे मिट्टीके छोटे छोटे कणों और तिनकोंकी तरह इधर उधर डोलते फिरते है। मुँहसे साँस लेनेसे कभी कभी धूल-कण और तिनके बल्कि मच्छड़ और मक्खी तक अकस्मात् भीतर चले जाते है। ऐसी अवस्थामे हम समझ सकते है कि उपर्युक्त रोग-जन्तु, जो अतीव सूक्ष्म होनेके कारण बिना सूक्ष्म-दर्शक यंत्रकी सहायतासे देख नहीं पड़ते, कितनी भारी संख्यामे पवनके साथ मुख-द्वारसे तन-मन्दिरमे घुस जाते होंगे।

नासिका-द्वारसे ही साँस लेना और प्राणायाम करना उचित है। नाकको विधाताने पवनको साफ करनेके सभी साधन दिये है। उसकी रचना ही ऐसी है कि जिससे प्रमाणसे अधिक पवन भीतर नहीं जा सकता। नासिकाके भीतरी भाग बड़े कोमल है। वे इतने चेतन है कि सूक्ष्म धूलके प्रवेशका भी उन्हें ज्ञान हो जाता है। छोटीसे छोटी प्रतिकूल वस्तुको भी भीतर नहीं जाने देते। यदि ऐसी कोई वस्तु अन्दर जाने लगे तो वे झट घबरा (उत्तेजित हो) उठते है और उस प्रतिकूल वस्तुको बड़े जोरसे बाहर निकाल फेकते हैं। नासिकाके अभ्यन्तर भागकी त्वचा अति सूक्ष्म है। उसके पीछे गरम लहूका

आना जाना बराबर बना रहता है। शनैः शनैः पान किया हुआ प्राण-वायु शीतकालमें चाहे कितना ही ठण्डा क्यो न हो, नासिकाके भीतरकी त्वचाको स्पर्श करते ही कवोष्ण होने लगता है। सारा रास्ता तय करके जब वह फेफड़ोंमे पहुँचता है उस समय वह ठण्डा नहीं रहता।

नासिका-द्वारमे बालोका जाल लगा हुआ है। इस लिए यदि नासिकाहीसे प्राण-पवन पिया जाय तो वह पोनेसे छने हुए पानीकी तरह छन कर फेफड़ोंमें जायगा। धूल, तिनके, रोग-जन्तु आदि सब इसी रोमराजीमें अटके रहेगे। नासिकासे साँस लेनेसे श्लेम-रोग भी नहीं होता। इससे कण्ठ-रोग भी प्रायः नष्ट हो जाते हैं और स्वरमें कोमलता और माधुर्य्य आ जाता है।

प्राणायामके अभ्यासीको चाहिए कि प्राणको अन्दरसे बाहर निकालते समय नाभीके नीचेके दोनों चक्रों (मूल-चक्र और गुदा-चक्र) में ऊपरकी ओर आकर्षण उत्पन्न करे। प्राण भीतर ले जाते समय भी आकर्षण करना उपयोगी है। सीधे बैठ कर जब 'रेचक' करते है तब पहले दोनों स्कन्ध नीचेको झुकते है, उनके बाद ऊपरकी पसलियॉ और फिर नीचेकी पसलियाँ; अन्तको नाभीके पासका उदर-भाग मेरुदण्डकी ओर खिंच जाता है। नाभीके आप-पासका उदर-भाग जितना अधिक अन्दरकी तरफ खींचा जायगा उतना ही अधिक अपान-पवन भीतरसे बाहर निकलेगा और फेफड़े सर्वथा पवनसे खाली हो जायॅगे। नाभि-प्रदेश सॉस लेनेके लिए एक पंखा है। उसे जितना अधिक भीतरको खींचा जाय उतना ही अधिक अपान बाहर निकल कर प्राण-पवन अन्दर जायगा। बाहर कुम्भक करके धीरे धीरे प्राण-वायुको पान करना चाहिए। प्राण-भीतरको लेते समय पहले पीछेको खिंचा हुआ नाभीके आसपासका उदर-भाग आगे बढेगा,

फिर नीचेकी पसलियाँ और अन्तको दोनों स्कन्ध ऊपरको उठेंगे। इस प्रकार फेफड़े प्राण-पवनसे भरपूर हो जाते है । साधारण साँस लेते समय फेफड़ोंका कोई छठा भाग काम करता है; परन्तु पूर्ण प्राणायाममें वे प्रायः सारेके सारे काम करने लगते हैं ।

कुम्भकमें जब घबराहटका किञ्चित भी चिन्ह उत्पन्न हो तब फौरन रेचक या पूरक करने लग जाना चाहिए। बाह्य कुम्भक हो तो पूरक करने लग जाना चाहिए। हठ-पूर्वक प्राणको रोकनेसे न तो लाभ ही होता है और न सिद्धि। हठसे प्रकृतिका विरोध करना सफलताके मार्गसे विपरीत चलना है। एक बार ही किसी इतनी भारी वस्तुको उठाना कि जिससे उसे दूसरी बार उठानेकी शक्ति ही न रहे, बलवान् बननेका साधन नहीं है। किसी हलकी वस्तुको बार बार उठाने, हिलाने और घुमानेसे ही पट्ठे बलवान् बनते है और शरीरमे शक्ति और स्फूर्ति आती है। इसी तरह बार बार रेचक, पूरक, कुम्भक आदि करनेसे प्राण वशमें हो जाता है। एक बार ही बहुत देर तक प्राणको रोक कर थक जाने, हाँपने, पसीना पसीना हो जाने और निर्जलता आदिका अनुभव करनेके स्थानमें थोड़ी थोड़ी देर तक कुम्भक करके कुम्भकोंकी संख्या अधिक बढ़ाना विशेष उपयोगी, पुष्टिदायक और सफलताका सरल मार्ग है। इस विधिसे कुछ समयके उपरान्त बार बार सधाये हुए घोड़ेकी भाँति प्राण आप ही स्थिर हो जाता है।

रेचक और पूरकमे जितना अधिक समय लगे उतना ही अच्छा है। इन दोनोंमें समयकी लम्बाई सुख और प्रसन्नताकी देनेवाली है। इससे चित्त शान्त और स्थिर होता है। जैसे कमल-नाल सरोवरके जलको शनैः शनैः खींचती है वैसे धीरे धीरे चिरकाल तक प्राण-पवनका पान करना सर्वथा शुभ है।

पूर्ण प्राणायाममें 'रेचक' करते समय जो नाभि-प्रदेशको भीतरकी ओर खींचा जाता है और 'पूरक' करते समय जो इसे बाहरकी ओर उभारा जाता है इससे जहाँ एक तरफ प्राणायाम करनेमें पूरी पूरी आसानी होती है वहाँ साथ ही इससे जठराग्नि बलवान् होकर पाचन-शक्ति भी बढ़ जाती है। इससे संग्रहणी तकका नाश हो जाता है। मैं जानता हूँ, एक मनुष्यको कई बरसोंका पुराना डिस्पेपसिया था। आठ पहरमें उसे अनेक बार शौच जाना पड़ता था। दूध और घी उसने बहुत दिनसे छोड़ रक्खा था। फल भी वह डर डर कर खाता था। मिर्च-मसालेको तो वह अपने लिए विष समान समझता था। विवश किसी महाभोजमें उसे जाना पड़ता तो उसके सिर पर एक विपत्ति आ जाती। परन्तु तीन मासके प्राणायामने उसके सारे दुःखोंको दूर कर दिया। अब वह भोज्य पदार्थोंको खाता है और क्या मजाल जो उसके पेटमें कोई गड़बड़ हो जाय।

प्राणायाम करते समय भावना करनी चाहिए कि मै ब्रह्माण्डकी प्राण-शक्ति और जीवन-शक्तिको अपने आत्मामे भर रहा हूँ। सारे ब्रह्माण्डके जीवनके साथ मेरी समता और सम्बन्ध हो रहा है। अविद्याकी ग्रंथियाँ खुल रही हैं। मुझमें अनन्त चेतन सत्ताका प्रकाश होने लगा है। परमात्म देव मेरे हृदय-उद्यानमें अपने आनन्द और दयाकी बदली बरसा रहे है। मै उनमें हूँ और वे मुझमें हैं। हमारा अटूट सम्बन्ध है।

इस भावनासे भगवान्के भक्ति-भावकी जागृति होती है। और अपनेमें आत्म-सत्ता प्रबल होने लगती है।

पूर्ण प्राणायामके अभ्यासी कुछ कालके उपरान्त इस बातका स्वयं अनुभव करने लगते है कि उनके विचार निर्मल हो रहे हैं। समय

पर उनमे नई स्फूर्ति और नई उपज होती है; वह उपज प्रायः सच्ची होती है। प्राणायामसे प्रतिभा भी जाग उठती है। चबा कर खाया हुआ अन्न आमाशय आदि स्थानोंमें अनेक रस-मिश्रित होकर अंतड़ि-योंमें जाता है। अँतड़ियाँ उसका सार निकाल कर ऊपर भेज देती हैं और असार नीचेको धकेल दिया जाता है। वही रस कई परिवर्त-नोंके बाद हृदयमे आकर शुद्ध होता है। इसी स्थानसे शुद्ध रक्तवा-हिनी नाड़ियाँ सम्पूर्ण शरीरमे रक्त ले जाती है। मनुष्य-देहका कोई आठवाँ भाग रक्त होगा। हृदयसे निकल कर यह पानीकी छोटी छोटी कूलोंकी तरह नाड़ियोंमें दौड़ लगाता है और सब अङ्गमे प्रत्यङ्गोंको यथायोग्य रीतिसे अपना भाग देकर फिर हृदय-देशकी ओर लौट आता है। एक मिनटमें इसके दो चक्कर सारी देहमें लगते हैं। जब यह अपने स्थानसे प्रस्थान करता है तब स्रोत-जलकी तरह शुद्ध, निर्मल और लाल होता है। पर जब अशुद्ध रक्त-वाहिनी नाड़ियो द्वारा लौट कर आता है तब नगरकी गंदी नालीके पानीकी भाँति देहके सड़े-गले मृत पट्ठोंसे लदा होनेके कारण मैला होता है। परन्तु ज्यों ही वह मैला लहू अपने स्थान पर आकर नवीन प्राण-वायुकी गङ्गामे होता लगाता है फौरन ही मल और दोप धोकर पूर्ववत् निर्मल और लाल हो जाता है।

यह पहले कहा जा चुका है कि पूर्ण प्राणायामसे सम्पूर्ण फेफड़े कार्य करने लग जाते है। इस लिए जितना प्राण-वायु रक्तमे प्राणा-यामसे पहुँचाया जा सकता है उतना अन्य किसी प्रकारसे पहुँचाया जा नहीं सकता। साधारण रीतिसे जितना प्राण-वायु मनुष्य एक मिनटमें लेता है उससे कई गुना अधिक एक प्राणायाममे लिया जाता है। कुम्भकमें भरा हुआ प्राण रक्तके एक एक परमाणुमें रम

जाता है। जैसे चिर काल तक रंगमें भींगे हुए वस्त्रमे रंग व्याप्त हो जाता है वैसे ही प्राण-वायु कुम्भक कालमे, रक्तमे व्याप्त हो जाता है।

जितना अधिक रक्त होगा उतनी ही नीरोगता और प्रसन्नता बढ-गी। प्राणायामके बिना ऐसा कोई साधन नहीं जिससे इतना अधिक रक्त शुद्ध हो सके। इस लिए प्राणायामको प्रसन्नताका स्रोत और नीरोगताका देनेवाला समझना चाहिए। प्राणायामको करनेवाला प्रसन्न-मुख, विकसित-नेत्र, प्रशान्त-चित्त और नीरोग रहता है। उसकी बुद्धि शुद्ध हो जाती है।

वैद्य लोग स्वीकार करते है कि लम्बे सॉस लेनेसे क्षय-रोग तकके जन्तुओंका नाश हो जाता है। पूर्ण प्राणायामसे बहुत ही शुद्ध प्राण-वायु अधिक मात्रामे पान किया जाता है, इस लिए रक्त-रोगोकी वृद्धि नहीं होने पाती। फेफड़ोंके रोग तो अभ्यासीके पास तक नहीं फट-कते। प्राणायामका अभ्यासी उदर और अँतड़ियोंके रोगोको भी जीत लेता है। एक साधुने मुझे कहा है कि "मेरे जोड़ोंमे प्रायः सदा पीड़ा रहा करती थी। मैने कुछ काल तक पूर्ण प्राणायाम किया। अब मै उस रोगसे मुक्त हो गया हूँ।" अर्श भी इस पूर्ण प्राणाया-मसे नष्ट हो जाता है। एक भक्तने मुझे बताया कि पूर्ण प्राणायामसे उसका चिर कालका बवासीर रोग, जो औषधियोंसे शान्त न होता था, सर्वथा जाता रहा। यह बात निस्सन्देह सिद्ध है कि प्राणायाम यदि विधिसे किया जाय तो यह रोगोंके लिए रामबाण और स्वास्थ्य-का समुद्र है।
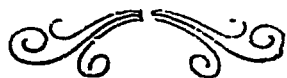
परिशिष्ट ।

आत्म-तेज ।

मनुष्यकी उन्नत मानसिक शक्तिका ही दूसरा नाम आत्म-तेज है । वेदमें तेज-स्वरूप परमात्मासे इसी तेजके लिए प्रार्थना की गई है । आत्म-तेजकी महिमा शास्त्रों और पुराणोंमें जगह जगह पर वर्णित है । ऋपियोंके ब्रह्म-तेजके सामने बड़े बड़े पापात्मा अत्याचारी भी चूं तक न कर सकते थे। हिंसक जन्तुओं और राक्षसोंसे भरपूर वनोंमें उसी तेजके प्रतापसे महर्पियोंके आश्रम स्वर्गधाम बने रहते थे और उनकी छत्र-छायाके नीचे सिंह और गाय एक घाट पानी पीते थे । मैलीसे मैली आत्माएँ भी तपोधन ब्राह्मणोंके दर्शनोंमे निर्मल और पवित्र हो जाती थीं । आज भी ऐसे महात्माओंका अभाव नहीं जिनके कि दर्शनोंसे मनुष्य पाप-तापकी शान्तिका अनुभव करने लगता है और जिनकी संगतिसे मनकी सब कुचेष्टायें दूर होकर उसमें दैवी गुणोंका संचार होने लगता है । जिन लोगोंने ऋपि दयानन्द, परमहंस रामकृष्ण और स्वामी रामतीर्थजीके दर्शन किये हैं, वे कहते हैं कि इन पुण्यात्माओंके निकट जानेसे मनुष्य एक विशेप प्रकारका आनन्द और पाप-वृत्तियोंसे मुक्ति लाभ करता था । आत्म तेज एक ऐसी शक्ति है जिसके सामने बड़े बड़े बली और धनाढ्य भी थर-थर कॉप उठते है । तेजस्वी मनुष्यके सामने सिंह और चीते आदि हिंसक जन्तु दुम दवा कर भाग जाते है । उसके मुख-मण्डल पर एक विशेप प्रकारका ओज रहता है । उसके शरीरसे आकर्पण-शक्तिकी सूक्ष्म तरङ्गें निकलती रहती हैं । इस लिए जो भी व्यक्ति उसके पास आता है और जितनी देर तक उसके निकट रहता है कमसे कम उतनी देरके लिए तो अवश्य ही वह उसके प्रभावके नीचे रहता है । ऐसे सैकडों उदाहरण मिलते है जहॉ एक ही तेजस्वी मनुष्यने हजारों लाखों उपद्रवियोंको काबूमें रक्खा है ।

रोमके सम्राट् जूलियस सीजरके विपयमें प्रसिद्ध है कि नौ-जवानीके दिनोंमें एक बार उसका जहाज समुद्री लुटेरोंके हाथ पड़ गया । उन्होंने सीजरको ले

जाकर न्होड्ज द्वीपमें कैद कर दिया और उसे छोड़नेके लिए वे उसके नातेदारोंसे बहुतसा धन मांगने लगे । प्लूटार्च लिखता है कि सीजर उन पर इतना दबाव रखता था कि बन्दी होते हुए भी उनका शासक प्रतीत होता था। जब उसे सोनेकी इच्छा होती थी तब वह उन्हें प्रभावशाली शब्दोंमें आज्ञा देता था कि देखो हम सोने लगे हैं, किसी प्रकारका शोर न हो । वे बराबर उसकी आज्ञाका पालन करते थे । वह उन्हें फटकारता था और सेवकोंकी तरह उनसे काम लेता था । परन्तु किसीको उसकी आज्ञाका उल्लङ्घन करनेका साहस न होता था । यहाँ तक कि वह उन्हें धमकाया करता था कि याद रक्खो, जब मैं कैदसे छूटूंगा तब तुम सबको फांसी पर लटका दूंगा । परन्तु उनमेंसे कोई भी चूं तक न करता था। अन्तको वहांसे छुटकारा पाकर उसने वैसा ही किया । यह सीजरका आत्म-तेज ही था कि जिसके बलसे वह कैदी होते हुए भी उन सागर-दस्युओं पर शासन करता था ।

एथन्सनगर-निवासी एलसिबियेडीजके विषयमें कहते हैं कि उसने एक बार एथन्सके कतिपय नवयुवक रईसोंके सामने यह शर्त लगाई कि मैं इस नगरके प्रतिष्ठित और माननीय व्यक्ति हिप्पेनिकोसको सबके सामने बाजारमें थप्पड़ लगा कर दिखलाऊंगा । केवल इतना ही नहीं, बल्कि इसके कुछ दिन बाद मैं उस वृद्ध बुजुर्गको अपनी पुत्रीका विवाह मेरे साथ कर देनेके लिए सहमत कर लूंगा । अगले दिन जब हिप्पेनिकोस बाजारमें आया तो एलसिबियेडीजने उसके निकट जाकर उसकी कनपटी पर दो थप्पड़ लगाये । बेचारा वृद्ध चकरा गया और दुखित होकर घरको वापस लौट आया। बाजारमें एक भारी कोलाहल मचा और सब नगर-निवासियोंने उस युवकको फटकारा और दुत्कारा । लेकिन दूसरे ही दिन एलसिबियेडीजने हिप्पेनिकोसके घर जाकर कहा कि आप मुझे निस्सन्देह दण्ड दीजिए; मेरी पीठ आपके कोड़ोंके लिए तैयार है; मुझे क्षमाकी भिक्षा दीजिए । इस तरहकी बातें बना कर उसने वृद्धके कोपको दूर कर दिया और उससे क्षमाका दान पाकर उसकी प्रसन्नता प्राप्त कर ली । यह प्रसन्नता इसके बाद दिन पर दिन बढ़ती गई और अन्तको वृद्ध उस नवयुवकसे इतना प्रसन्न हुआ कि उसने उससे अनुरोध किया कि वह उसकी कन्यासे विवाह कर ले । एलसिबियेडीजने उसकी प्रार्थनाको स्वीकार किया । जो मनुष्य एथन्स-निवासियोंकी प्रकृतिको जानता है वह समझ सकता है कि यह कैसी विलक्षण घटना होगी ।

दुनियाके जितने बड़े बड़े सेनापति हुए हैं उन सबमें यह आत्म-तेज थोड़ा बहुत अवश्य मौजूद था। इसीकी बदौलत वे अपनी सेनाओंको काबूमें रखते थे। सीजर, बड़ा सिकन्दर, शिवाजी, गोविंदसिंह, नेपोलियन, बड़ा फ्रेडरिक ये सब अपनी सेनाओंको इसी गुप्त शक्तिसे मुग्ध रखते थे। सेनाके सिपाही एक प्रकारसे उन्हें देवता समझ कर पूजा करते थे और उनकी आज्ञा पर सहर्ष मृत्युके मुंहमें कूद पड़ते थे। एक ही घटनासे नेपोलियनके अद्भुत तेजका परिचय मिल जायगा। नेपोलियन अलबासे वापस आ रहा था। बोर्बोन सेनायें उसे पकड़नेके लिए बन्दूकोंका निशाना बांधे पंक्ति-बद्ध खड़ी थीं। नेपोलियन पैदल था। वह आते ही जान-बूझ कर सेनाओंकी ओर बढ़ा। उसके पांव खास अन्दाजसे पड़ते थे। उसकी आंखें सिपाहि-योंकी आँखोंसे लड़ रही थीं। सेनापतियोंने गोली चलानेका हुक्म दिया। उस समय एक ही गोली नेपोलियनका काम तमाम कर सकती थी और उस गोलीके चलानेवालेको बोर्बोन राजाकी ओरसे मुंह मांगा इनाम मिल सकता था। परन्तु सिपाहियों पर नेपोलियनके जादूका इतना असर था कि उनमेंसे एकने भी अपने अफसरोंकी आज्ञाका पालन न किया। गोली चला-नेके स्थानमें वे सहर्ष 'हमारे सम्राट्,' 'हमारे सम्राट्' की ध्वनि करते हुए नेपोलियनकी ओर दौड़े। उनके अफसर भाग गये और नेपोलियन जनरल बन कर पेरिसकी तरफ चला। ज्यों ज्यों वह आगे बढ़ता था त्यों त्यों सेनायें भी, जो वास्तवमें उसे पकड़ लाने या मार डालनेके लिए भेजी गई थीं, उसके साथ मिलती जाती थीं। यहाँ तक कि जब वह पेरिसके दरवाजे पर पहुँचा तब उसके साथ असंख्य सिपाही आ मिले थे। इस अद्भुत व्यक्तिका आत्म-तेज अतीव अपूर्व था। यहाँ तक कि आज भी उसके चिह्न मालूम होते हैं। नेपोलियनका नाम लेते ही मनुष्यका लहू जोश मारने लगता है। हमारे यहाँ सरदार हरिसिंह नलवाका भी काबुलके पठानों पर ऐसा ही प्रभाव था और आज तक भी कुछ न कुछ पाया जाता है।

लिङ्कोलनके बिशप ह्यूगोके जीवनके विषयमें फौडर गिल एक अतीव अद्भुत घटनाका वर्णन करता है। सिंहके समान हृदयवाला राजा रिचर्ड नार-मंडीमें युद्ध कर रहा था। उसने अपने मंत्रि-मण्डलको कुमक भेजनेके लिए हुक्म भेजा। परन्तु बिशपने और सेना भेजनेसे साफ इन्कार कर दिया। रिचर्ड कोई साधारण मनुष्य न था। उसकी आज्ञाको न मानना कोई हँसी

न थी। विशप ह्यूगो आज्ञा-भंग करनेका कारण बताने नारमंडी आया। उस समय उसके दो मित्रोंने उसे परामर्श दिया कि राजासे मिलनेके पहले राजी-नामा करानेके लिए उसके पास अपने प्रतिनिधि भेज दो। विशपने इस परामर्श पर कार्य करनेसे साफ इन्कार कर दिया। राजा भोजन कर रहा था जब कि विशप टप टप करता हुआ उसके पास जा खड़ा हुआ। राजाकी अप्रसन्नताके होते हुए भी उसने जाते ही कहा—"माई लार्ड किङ्ग! मुझे चुम्बन करो।" राजाने मुह फेर लिया। ह्यूगोने उसे पकड़ कर हिलाया और दुबारा वही प्रार्थना की। राजा झुंझला कर बोला, तुम अब इसके अधिकारी नहीं हो। विशपने उत्तर दिया—"मैं अधिकारी हूं," और राजाको और भी जोरसे हिलाया। राजा नरम हो गया। उसने ह्यूगोका चुम्बन किया। इसके बाद संस्कारमें भाग लेनेके लिए विशप शान्ति-पूर्वक आगे चला गया।

केवल मृत्युसे बे-परवा हो जानेसे ही इतनी दलेरी न हो सकती थी। इसके अतिरिक्त विशपमें कोई और भी शक्ति थी। विशप ह्यूगो न केवल निडर ही था, बल्कि अपनेमें असाधारण इच्छा-शक्ति भी रखता था। इसके बाद कौन्सिलके कमरेमें उसने कुमक न भेजनेको उचित सिद्ध किया और साथ ही राजाको अपनी रानीके साथ विश्वासघात करनेके लिए फटकारा भी। अति साहसी राजा उस वक्त दुम दबा कर बैठ गया। यद्यपि उसने दोषको स्वीकार न किया, परन्तु साथ ही अपने क्रोधको काबूमें रक्खा। और बादको ये शब्द कहे कि "यदि सब विशप ह्यूगोक जैसे ही हों तो कोई भी राजा उनके सामने सिर न उठा सके।" इतना होते हुए भी, जैसा कि सारा इतिहास प्रकट करता है, रिचर्ड अतीव कठोर आदमी था और किसी भी प्रकारकी धृष्टताको सहन नहीं कर सकता था!

वैदेशिक उदाहरणोंको छोड़ कर अब हम स्वदेशकी ओर आते हैं। ऋषि दयानन्द एक बार मूर्ति-पूजनके निषेध पर व्याख्यान दे रहे थे। श्रोतागणमें कर्णसिह नामक एक कट्टर मूर्ति-पूजक राजपूत भी मौजूद था। प्रतिमा-पूजनका खण्डन सुन कर उससे न रहा गया। वह झट तलवार खींच कर ऋषिकी तरफ लपका और बोला—ओ साधु! आज यह तलवार तेरा सिर तनसे जुदा करेगी! ऋषिने एक बार अपने तीक्ष्ण नेत्रोंसे उस पर दृष्टिपात किया। फिर क्या था, वह राजपूती लहू फौरन ठण्डा हो गया। उसके

हाथसे तलवार गिर पड़ी और वह सत्ता-हीन होकर बैठ गया। ऋषिने तब उच्च स्वरसे गरज कर कहा—" शोक है कि जो राजपूती तलवार म्यानसे निकल कर शत्रुका रुधिर गिराये विना बन्द न होती थी, आज मैं उसे चुप-चाप बंद होते देख रहा हूं। मैं संन्यासी हूं। गर्दन कट जाने पर भी सत्य कहनेसे नहीं टल सकता। तुम राजपूत हो, आओ अपने क्षात्र-धर्म्मका पालन करो। " ऐसे उत्तेजना-जनक शब्द सुन कर भी कर्णसिंह चूं तक न कर सका। ब्रह्म-तेजके सामने राजपूती जोश मिट्टीमें मिल गया।

ऋषि दयानन्दके जीवन-चरित्रमें लिखा है कि एक समय वे अकेले जङ्गलमेंसे जा रहे थे। एकाएक सामनेसे एक रींछ आ निकला। वह पहले तो सीधा उनकी तरफ बढ़ा; परन्तु ज्यों ही उन्होने उसकी आँखोंसे आँखे मिलाई कि चीखें मारता हुआ भाग गया।

इसी तरह आपके जीवनकी एक और घटना बताई जाती है। एक दिन आप रेल पर सवार होनेके लिए प्लेटफार्म पर टहल रहे थे। इन दिनों आप केवल एक कोपीन पहनते और शरीरमें विभूति रमाते थे। उसी समय एक अँगरेज अफसर सपत्नीक उसी गाड़ीमें सवार होनेके लिए आ गया। वह एक कोपीन-धारी, नंग-धड़ंग संन्यासीको स्टेशन पर टहलते देख कर मनमें बहुत क्रुद्ध हुआ और स्टेशन मास्टरसे जाकर कहने लगा कि उस फकीरसे जाकर कह दो कि यहाँ नंगा न फिरे। स्टेशन मास्टर स्वामीजीको जानता था। उसे ये शब्द कहनेका साहस न हुआ। परन्तु अफसरकी आज्ञाका पालन करना भी आवश्यक था। स्वामीजीके पास जाकर बड़ी हिचकिचाहटके साथ वह बोला—"महाराज, मैं आपके लिए उस कमरेमें कुर्सी रख देता हूं। आप उस पर आराम कीजिए।" दयानन्द उसी समय बोले—" सच क्यों नहीं कहते कि साहब नाराज होते हैं! उनसे जाकर कह दो कि हम उस समयके मनुष्य हैं जब कि तुम्हारा बाबा आदम और अम्मा हौआ नङ्ग-धड़ंग बहिश्त (स्वर्ग) के बागोंमें फिरा करते थे। " स्टेशन मास्टर बेचारा अपना-सा मुँह लेकर वापस आ गया। साहबने पूछा—क्यों कहा? स्टेशन मास्टरने सारी बात कह सुनाई। तब साहब बोले वह कौन है। जब उन्हे मालूम हुआ कि वे स्वामी दयानन्द हैं तब उन्होंने कहा—Is he the great Dayanand? क्या वे महान् दयानन्द हैं? और फौरन उनके पास जाकर क्षमा माँगी। जो लोग भारतवासियोंकी अवस्थाको जानते हैं कि

ये लोग अँगरेजोंके नामसे ही कैसे घबराते है वे इस घटनाके महत्त्व और उस महान् आत्माकी उच्चताका भली भाँति अनुभव कर सकते हैं।

जिन लोगोंने ऋषिके व्याख्यान सुने हैं वे बताते हैं कि व्याख्यान आरम्भ करनेके कुछ मिनट पहले आप आँखे बंद करके बैठ जाते थे । फिर एकदम आँखे खोल कर श्रोतागण पर एक तीव्र दृष्टि डालते थे। इस दृष्टिके साथ ही सबके अन्दर एक बिजलीसी दौड़ जाती थी और लोग चित्रवत् हो जाते थे। प्रायः सुननेमें आया है कि बड़े बड़े पण्डित घरसे शास्त्रार्थ करनेके लिए लम्बी-चौड़ी युक्तिया सोच कर आये, परन्तु सामने आकर एक शब्द भी मुंहसे न निकाल सके और बब बब करके ही रह गये।

एक और जीवित उदाहरण लीजिए। जिला लाहोरमें वलटोहा एक रेलवे स्टेशन है। वहाँ फतेहसिंह नामक एक महाबली जाट रहता है । उसके शारीरिक बलके विषयमें सारे माझे प्रान्तमें धूम मच रही है। कूएँके रहटको उठाना उसका प्रसिद्ध और मनभाता व्यायाम है। जो काम दस मनुष्य मिल कर मुश्किलसे कर सकते हैं उसे वह अकेला ही कर डालता है। इस व्यक्तिकी आँखें सिंहके सदृश चमकती है। बहुत थोड़े मनुष्य उसके नेत्रोंसे नेत्र मिला सकते हैं। उसके अपूर्व शारीरिक बलके खेलोंका वर्णन करनेके लिए तो एक अलग लेखकी जरूरत होगी। परन्तु यहाँ हम उसके जीवनकी एक घटना सुनाते हैं। कई वर्षोंकी बात है कि वलटोहामें एक बड़ा शक्तिशाली सॉड़-भैंसा था।.वह सारे दिन लोगोंकी खेतियाँ खाता फिरा करता था। जो कोई उसे खेतसे बाहर निकालने जाता तो वह उसे मारने दौड़ता। एक दिन यही भैंसा फतेहसिहके खेतमें घुस गया और खेती खराब करने लगा। यह देख फतेहसिहका बाप उसे हटाने गया। ज्यों ही वह भैंसेके पास पहुंचा कि भैंसेने उसे अपने सींगों पर उठा कर खेतसे बाहर फेंक दिया। बेचारा बड़ी मुश्किलसे जान बचा कर घर आया। घर आकर उसने फतेहसिंहसे कहा—बेटा, तुझे लोग बड़ा बलवान् कहते हैं। तूने बड़े बड़े पहलवानोंको पछाड़ा है। मै तो आज भैंसेके हाथों मरते मरते बचा हूँ। क्या तू उसे खेतसे बाहर न निकाल आयेगा? फतेहसिंह उसी वक्त उठ कर खेतकी तरफ गया। देखता क्या है कि भैंसा खेत खा रहा है। फतेहसिंह बे-धड़क उसकी ओर बढ़ा। ज्यों ही वह उसके निकट पहुँचा, भैंसेने एक बार उसकी आँखोंकी तरफ देखा और सिर नीचा करके वह वहींका वहीं खड़ा रह गया। फतेहसिहने तब फौरन

उसकी नाक पकड़ चुपचाप छेद करके उसमे रस्सी डाल दी और उसे छोड़ दिया । तबसे सुना है कि उसने किसीको नहीं मारा । यहाँ रक्त-पिपासु भैंसेका अपनेसे बलवान् मनुष्यको देख कर चुपचाप अधीन हो जाना साफ प्रकट करता है कि फतेहसिंहके बलको पशुने सूक्ष्म दृष्टिसे भाँप लिया होगा और फतेहसिंहका व्यक्तिगत प्रभाव उस पर अनायास ही पड़ गया होगा ।

उपर्युक्त मोटी मोटी घटनाओंके अतिरिक्त हम प्रति दिनके जीवनमें भी आत्म-तेजका प्रयोग होते देखते हैं । कई लोग ऐसे हैं जो बातों बातोंमे ही दूसरोको मोहित कर लेते हैं और जो चाहते हैं उनसे करा लेते हैं । दूकानदार, बीमा कम्पनियोंके एजन्ट और संस्थाओंके लिए धन एकत्र करनेवाले लोग, जिनका सर्व-साधारणसे जियादा वास्ता पड़ता है, इस औजस-शक्तिसे काम लेना खूब जानते है; यद्यपि स्वयं उन्हे अपनी इस शक्तिका ज्ञान नहीं होता । यूरोप और अमेरिकामें कई ऐसे स्कूल खोले गये है जिनमें कम्पनियोंके मालिक अपने एजन्टोंको सर्व-साधारणको प्रभावित करनेकी विधियाँ सिखलाते हैं । जब दो व्यक्ति आपसमे गम्भीरतासे बाते करते हैं तब जानते हुए या न जानते हुए एकका दूसरे पर प्रभाव पड़ जाता है और उनमेसे एक अपने आपको दूसरेसे नीचा अनुभव करने लगता है । वह प्रत्येक बातमें उसके अधीन रहता है ।

तेजस्वी मनुष्य एक चुम्बकके सदृश है । उसमेंसे आकर्षणकी तरङ्गें हर वक्त निकलती रहती हैं । जो व्यक्ति उसके पास आता है उस पर मुग्ध हो जाता है और उसके विचारोंकी लहरमें बह जाता है । बहुत बार देखा जाता है कि एक प्रभावशाली व्याख्याता अपने व्याख्यानमे श्रोता-गणको ऐसी ऐसी बातें मनवा देता है जो कि बादमें बिलकुल लचर और बोदी मालूम होती है । सुननेवाले हैरान होते हैं कि उस समय हमने ऐसी बातें कैसे मान लीं। आपने अनेक बार सुना होगा कि जोश एक संक्रामक चीज है। वह एकको देख कर दूसरेमें पैदा हो जाता है । परन्तु क्या आपने इसका कभी कारण भी सोचा ? क्या आपने कभी विचारा कि अभिनय-गृहमे यदि थोड़े मनुष्य बैठे हों तो तमाशेका आनन्द क्यों कम आता है ? यदि वक्ता एक बात एक व्यक्तिको एकान्तमें सुनाये तो सुननेवालेको उतना जोश क्यों नहीं आता जितना कि वही बात सहस्रों मनुष्योंमें बैठ कर व्याख्यानमें सुननेसे आता है। इसके अलावा स्वयं वक्ताको भी थोड़े मनुष्योंमे वक्तृता देते समय इतना

जोश नहीं आता जितना कि वहुत लोगोंमें आता है। इसका कारण केवल यही है कि सुननेवालोंकी औजस-शक्ति एक दूसरेके साथ मिल कर वहुत वढ़ जाती है और वोलनेवालेके प्रभावको दूना कर देती है।

जंव कि एक मनुष्य दूसरेके प्रभावके नीचे होता है तव वह ठीक तौर पर सोचने या समझनेमें सर्वथा असमर्थ होता है; क्योंकि उसकी इच्छा-शक्ति "छुट्टी" पर चली जाती है। उसकी तर्क प्रभावशाली मनुष्यकी आकांक्षाओं, भावो और उमङ्गोंकी लहरोंमे वह जाती है। वह अपनी स्वतंत्र इच्छासे कुछ कर नहीं सकता। कई वार ऐसा भी होता है कि यदि एक प्रवल मानसिक शक्ति-सम्पन्न मनुष्य एक निर्वल व्यक्तिको वल-पूर्वक कहे कि तुम्हारा हाथ जल रहा है तो सचमुच ही वह व्यक्ति हाथके जलनेके जैसा अनुभव करेगा। आत्म-तेजकी महिमा अपरम्पार है। मनुष्य अपनी औजस-शक्तिको अभ्यास द्वारा वढ़ा कर ऐसे ऐसे अद्भुत कार्य कर सकता है जिन्हे साधारण मनुष्य प्राकृतिक नियमोको न जाननेके कारण 'करामत' या 'चमत्कार' कहने लग जाते हैं। परन्तु वास्तवमे 'करामत' कोई चीज नहीं, मानसिक शक्तिके ही सब निकृष्ट खेल हैं।

मानसिक चमत्कार ।

मनकी शक्ति वड़ी तीव्र है। हजारों घोड़ोंकी शक्ति रखनेवाला रेलका अञ्जन भी इतनी तेजीसे नहीं दौड़ सकता जितनी तेजीसे कि मन दौड़ता है। किसी समय भी वह चुप-चाप नहीं वैठता। मनकी चंचलता शास्त्रोंमें प्रसिद्ध है। हमारे प्राचीन ऋपियोंने मनकी शक्तिका अच्छी तरह अनुभव किया था। उन्होंने उससे काम लेनेका तरीका भी निकाल लिया था। योगाभ्यास क्या है? मनको अपने वशमे लाना और उससे अपनी इच्छाके अनुसार काम लेना ही योगाभ्यास कहाता है। महामुनि पतञ्जलिने योगका लक्षण इस प्रकार किया है—'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः'। अर्थात् चित्तकी वृत्तियोंको रोके रखना योग है। योगकी सिद्धियोंकी प्राप्तिसे मनुष्य क्या नहीं कर सकता? एक ओर योगी ब्रह्ममें लीन होकर अनिर्वचनीय आनन्दका अनुभव करते हैं और दूसरी ओर यदि वे चाहें तो थोड़ा ही-सा चमत्कार दिखला कर संसारको चकित कर सकते हैं। पर योगी ऐसा चम-

त्कार बहुत कम दिखाते हैं। योग-बलके द्वारा वे दूसरे मनुष्यों पर अपना प्रभाव डाल सकते है और साथ ही उनकी निर्बल मानसिक शक्तियोंको अपने अधीन कर सकते हैं। मेस्मेरिजम, हिप्नाटिजम आदि योगहीके क्षुद्र खेल हैं। योगके अत्यल्प अभ्याससे जब कुछ शक्ति प्राप्त हो जाती है तब लोग मदारी बन कर उसके चमत्कार दिखाते फिरते हैं। इससे उनकी यह शक्ति नष्ट हो जाती है। उसे वे आध्यात्मिक उन्नतिमें नहीं लगाते। यही कारण है कि उनकी शक्ति और आगे नहीं बढ़ने पाती। योग-विद्याका स्रोत इसी भारतमें प्रकट हुआ था। आज भी सिवा भारतके और कहीं प्रकृत योगीका मिलना असम्भव है। मिस्रके प्राचीन निवासियों और ईरानियोंने योग-विद्या यहींसे सीखी थी। योग-विद्यासे सम्बंध रखनेवाले कुछ चमत्कारोंका वर्णन हम यहाँ पर करते है। इन चमत्कारोंकी सत्यताके विषयमें किसी प्रकारका सन्देह नहीं हो सकता। यूरोपके एक सज्जनने भारतमें आकर इस प्रकारका एक चमत्कार अपनी आँखों देखा था। वे चमत्कारोंकी सत्यता पर विश्वास न करते थे। इन्हें वे केवल हाथकी सफाई समझते थे। एक रोज उन्होंने जो कुछ देखा उसका वर्णन वे इस प्रकार करते है:—

एक हिन्दू मदारी (ऐन्द्रजालिक) था। उसकी आकृति बड़ी प्रभावशालिनी थी। उसके चारों ओर उसके साथी बैठे थे। मदारी अपने सामने जमीन पर बहुतसे प्याले, डिब्बे और इसी प्रकारकी कितनी ही और और चीजे रक्खे था। पहले उसने एक डिब्बेमेंसे कितने ही साँप निकाले। उन साँपोंको सबके सामने रख कर वह दर्शकोंसे कहने लगा कि सब लोग इन्हें अच्छी तरह देख कर अपनी तसल्ली कर लो। ये सचमुच ही साँप हैं, और कोई चीज नहीं है। दर्शकोंमें प्राणि-शास्त्रका जाननेवाला एक अंगरेज भी मौजूद था। उसने साँपोंकी अच्छी तरह जाँच करके कहा कि ये सचमुच ही देशी जातिके साँप हैं। इसके बाद मदारी कुछ देर तक धीमे स्वरसे "उम, म, म, म, म, म, म, म," की आवाज करता रहा। उसकी यह आवाज ठीक वैसी ही थी जैसे मक्खी भिनभिनाती है।

मदारीके ऐसा करते ही वे सब साँप अपनी अपनी पूछोंके सहारे खड़े हो गये और अपने अपने फणोंको हिलाने लगे। मदारी कभी कभी अपने डण्डेसे उनके फणोंको धीरेसे छू देता था। कुछ देर बाद दर्शकोंको मालूम होने लगा कि वे छोटे छोटे साँप धीरे धीरे बढ़ने लगे। यहाँ तक कि बढ़ते

बढ़ते वे बड़े भयानक अजगरसे हो गये। यह दृश्य देख कर सारेके सारे दर्शक—क्या अँगरेज और क्या हिंदुस्थानी—बड़े भयभीत हुए। इस पर मदारीने चिल्ला कर सबसे कहा—चुपचाप बैठे रहिए। डरनेकी कोई बात नहीं है। इसके बाद उसने उलटी क्रिया आरंभ की। सब साँप फिर धीरे धीरे छोटे होने लगे। अन्तमें वे इतने छोटे हो गये कि एकदम अदृश्य ही हो गये।

मदारीने एक और भी खेल किया। वह भी ऐसा ही आश्चर्य-जनक था। उसने अपने साथियोंमेंसे एक लड़केको सामने बैठा कर उसके चारो तरफ जमीन पर एक लकीर खींच दी। इसके बाद वह जादूके कुछ मंत्र पढ़ने लगा। कुछ देरमें लकीरके भीतरका वह लड़का लट्टूकी तरह जल्दी जल्दी घूमता हुआ दिखाई दिया। फिर धीरे धीरे वह आकाशकी ओर उड़ा। अन्तमें घूमते ही घूमते वह लोप हो गया। तब मदारीने फिर उलटी क्रिया प्रारम्भ की। लड़का आकाशसे नीचे उतरने लगा। पहले वह एक छोटेसे गोलेकी तरह दिखाई दिया। अन्तमें ज्यों ज्यों वह नीचे आता गया त्यों त्यों बड़ा होता गया। पृथ्वी पर आकर खड़े होते ही उसने मुसकुरा कर दर्शकोंको प्रणाम किया।

इसके बाद एक और खेल हुआ। मदारीने आमकी कुछ गुठलियाँ लेकर एक छोटेसे रेतके ढेरमें उन्हें गाड़ दिया। गुठलियोंको गाड़नेके बाद वह मंत्र पढ़ पढ़ कर रेतके उस ढेर पर हाथ फेरने लगा। थोड़ी ही देरमें उस ढेरसे एक अंकुर निकल आया। देखते देखते वह बढ़ कर वृक्ष बन गया। वृक्ष पर डालियाँ और पत्ते भी निकल आये। अन्तमे उस पर मौर भी दिखाई दिये और पल भरमें आमके पके हुए फल तैयार हो गये। ये पके हुए आम तोड़ कर दर्शकोंको बाँटे गये। अब मदारीने फिर उलटी क्रिया आरम्भ की। वृक्ष धीरे धीरे लोप हो चला। अन्तमें उसने ढेरमेंसे अपनी गुठलियाँ निकाल लीं और वृक्ष भी अन्तर्हित हो गया। गुठलियाँ निकाल कर उसने सब लोगोंको दिखा दीं।

एक और भी आश्चर्य-जनक खेल मदारीने किया। उसने रस्सीका एक लपेटा हुआ बंडल बाहर निकाला। दर्शकोंके हाथ पर रख कर उसे भली भाँति देख लेनेके लिए उसने उनसे कहा। उसके बाद उसने रस्सीके सिरे पर एक गाँठ देदी और उस गाँठवाले सिरेको आकाशमें उछाल दिया।

रस्सीकी लपेट खुल गई और वह ऊपर आकाशकी ओर जाने लगी। धीरे धीरे साराका सारा बंडल खुल गया और उसका सिरा वायुमें इस तरह लटकता हुआ दिखाई देने लगा मानो गाँठको किसीने कई सौ फिट ऊँचे आकाशमे बाँध दिया हो। इतनेमे मदारीका एक साथी रस्सीके पास गया और नीचे लटकते हुए उसके छोरको पकड़ कर मदारीके हुक्मसे वह रस्सीके सहारे ऊपर आकाशमें चढ़ने लगा। बहुत ऊपर जाने पर वह एक चिह्नसा दिखाई देने लगा। अन्तमे वह वहीं अन्तर्धान हो गया। इस पर मदारीने अपने मुँहसे कुछ और शब्द बोले। उसके साथ ही रस्सी उड़ कर आकाशमें इतनी ऊपर जा पहुँची कि उसका नजर आना भी कठिन हो गया।

इस खेलके साथ तमाशा समाप्त हुआ। उस समय एक अँगरेज कैमेरा हाथमें लिये वहीं खड़ा था। जब आदमी रस्सी पर चढ़ने लगा तब उसने उसका फोटो ले लिया। पर जब विगेटिव-प्लेटको उसने धोया तब उस पर उसे न उस आदमीकी तसबीर नजर आई, न उस दृश्यकी और न उस रस्सीकी ही। केवल मदारीकी तसवीर शीशे पर उतरी हुई दिखाई दी। पर वह बड़ी विचित्र थी। मदारी अजीब तरहसे मुसकुराता हुआ बैठा दिखाई दिया। बात यह थी कि वास्तवमें यह खेल किया ही न गया था। ये सारे खेल केवल दृष्टि-भ्रमके कारण दर्शकोंको दिखाई दिये थे। चिर कालके अभ्याससे मदारीको दूसरेका मन अपने वशमें करनेकी शक्ति प्राप्त थी। इसी शक्तिके द्वारा उसने दर्शकों पर अपना प्रभाव डाल दिया था।

एक और लेखकका बयान सुनिए। वह अमेरिकाके एक समाचार-पत्रका सम्वाददाता था। उसके कथनका सारांश उसीके शब्दोंमे हम नीचे देते हैं—

भारतवर्षकी एक बड़ी नदीमें मैं जहाज द्वारा यात्रा कर रहा था। जहाज जब बन्दर पर पहुँचा तब एक हिन्दुस्थानी केवल एक लङ्गोटी लगाये हुए फुर्तिसे जहाज पर चढ़ आया। तैरते समय डूबनेसे बचनेके लिए उसने गलेसे एक लाल रंगकी गठड़ी बाँध ली थी। उसने आनेके साथ ही अपने गुणोंका परिचय देना आरम्भ कर दिया।

जहाजके तख्ते पर पैर रखते ही उसने वहाँ पर पड़ी हुई रस्सीका एक गोल बंडल उठा लिया। उसका एक सिरा खोल कर उसमें उसने गाँठ लगा दी। गाँठको उसी दम उसने बड़े जोरसे आकाशकी ओर उछाल दिया। गांठ ऊपरको चढ़ती जाती थी और रस्सीका गोला खुलता जाता था। खुलते खुलते

सारी रस्सी खुल कर आकाशमे चढ़ गई और वहीं वह लोप हो गई। उस समय जहाज पर एक मल्लाह एक टूटा हुआ नारियल लिये खड़ा था। साधुने उससे नारियल ले लिया और खड़े होकर उसका पानी वह एक डोलमें गिराने लगा। एक डोल भर गया तब नारियलके नीचे दूसरा डोल रक्खा गया। वह भी शीघ्र ही भर गया। इसी प्रकार उस नारियलके पानीसे कोई बारह डोल भर गये। डोलोंके भर चुकने बाद उसने उनमेंसे एकको हाथमें उठा लिया और मंत्र पढ़ कर शीघ्र ही उसे वहाँसे लोप कर दिया। थोड़ी देर बाद उसके हाथमें एक चिन्हसा देख पड़ा। यह चिन्ह क्रमशः बढ़ते बढ़ते पानीका लबालब भरा हुआ ढोल बन गया। मदारीने उसे जहाजके तख्ते पर उलट दिया।

इस खेलको एक युवती भी देख रही थी। कुछ दूर उसका बच्चा उसकी "आया" के पास खड़ा था। एकाएक माता क्या देखती है कि आयाने हाथों पर बच्चेको उठा लिया और शीघ्र ही ऊपर आकाशमें उड़ कर वह वही अन्तर्द्धान हो गई। माता बे-सुध होकर पागलकी तरह चिल्लाने और आकाशकी ओर टकटकी लगा कर देखने लगी। आकाशकी ओर मुँह उठाये वह थोड़ी ही देरमे क्या देखती है कि एक बादल धीरे धीरे आयाके रूपमें बदल गया जैसे जैसे आया नीचे आती गई वैसे वैसे ही उसका आकार बड़ा होता गया। अन्तमे वह जहाजके तख्ते पर खड़ी हो गई। जहाज पर खड़ी होते ही आयाने बच्चेको उसकी माताके हाथोंमें दे दिया। माताने बच्चेको छातीसे लगा कर आयासे कहा—तुम मेरे बच्चेको क्यों ले गई थीं? आयाने उत्तर दिया—मेम साहब, बच्चा तो सोया हुआ था, उसे कहीं नहीं ले गई थी। यह सुन कर माता बड़ी चकित हुई। इस पर साधु बोला—मेम साहबा विचित्र वस्तुओंका केवल स्वप्न देख रही थीं। यह खेल साधुकी मानसिक कल्पनाका फल था। उसने उसका चित्र मेमके मन पर अङ्कित कर दिया था।

इस खेलके बाद साधुने लाल कपड़ोंकी गठड़ी खोली। उसमेसे एक नारियल निकाल कर उसने उसे सब यात्रियोंको दिखाया। जब सब लोग देख चुके तब उसने उसे बाँसकी एक लाठीके सिरे पर रख कर आज्ञा दी कि फव्वारेकी तरह जल-धारा गिराओ। साधुकी आज्ञा पाते ही नारियलसे पानीकी धारा बह कर जहाजके तख्तों पर गिरने लगी। कुछ देर बाद उसने आज्ञा दी बन्द करो। जल-धाराका गिरना फौरन ही बन्द हो गया। फिर

उसने आज्ञा दी कि चलो। बस वह चलने लगी। इसी तरह उसने कई वार किया। इसके अनन्तर उसने एकाएक एक अजगर पैदा कर दिया। इस अजगरको देखते ही लोग बहुत डरे। तब साधुकी आज्ञा पाते ही वह एकदम लोप हो गया। अजगरके बाद उसने सूर्य्यके प्रकाशमें सबके सामने कितनी मनुष्य-मूर्तियाँ पैदा कर दीं। ये मूर्तियाँ धीरे धीरे भाफके बादलोंकी तरह वहीं अन्तर्द्धान हो गईं। इन अद्भुत तमाशोंके बाद उसे काफी दान मिला। उसे लेकर वह वहाँसे चलता बना।

ऊपरके सब खेल मानसिक प्रभावके ही फल हैं। जो लोग मानसिक प्रभावका विरोध करते हैं और उसे अपने ऊपर नहीं पड़ने देते उन्हें इस प्रकारके दृश्य बहुधा नहीं देख पड़ते। अन्य दर्शक जब मानसिक भ्रममें पड़े हुए इस प्रकारके स्वप्न देखते रहते है तब प्रभाव न पड़े हुए लोगोंको सिर्फ मदारी एकाग्र-चित्त होकर अपनी कल्पना-शक्तिका प्रयोग करता हुआ देख पड़ता है। इस तरहके और भी अनेकानेक खेल किये जा सकते हैं। अभी कुछ दिनों पहले सुना था कि मद्रासमे एक साधु आया है। वह रुपयोंकी वर्षा करता है। यह भी मानसिक भ्रमका ही फल है। कैमेरेसे लिया हुआ इस तरहका कोई भी चित्र फोटोग्राफीके प्लेट पर मानसिक एकाग्रतासे बैठे हुए केवल मदारीका प्रतिबिम्ब दिखाई देता है। मदारी अपने भीतर एक ऐसी शक्ति प्राप्त कर लेता है जिसके द्वारा वह एक ही समयमें बहुतसे लोगोंको कई तरहकी वस्तुयें दिखा सकता है, सुना सकता है और चखा भी सकता है। वास्तवमें ये वस्तुयें विद्यमान नहीं होतीं।

एक भारतीय सज्जन लिखते हैं कि जब मैंने पहले पहल ऐसे खेल देखे तब मुझे उन पर बड़ा आश्चर्य हुआ। अन्तमें मैंने अपने मनमें उनकी परीक्षा करनेका निश्चय किया। मदारीके चारों ओर दर्शकोंकी बड़ी भीड़ थी। जब दर्शकोंके साथ मैं खड़ा हुआ तब मुझे ये सब अद्भुत दृश्य एक एक करके दीखने लगे। पर जब मैं दर्शकोंसे अलग होकर एक दूसरे स्थानसे देखने लगा तब मुझे मदारीके सिवा और कोई दृश्य वहाँ न देख पड़ा। इसके बाद मैं मदारीके पास गया। तब भी मुझे कोई तमाशा न देख पड़ा। इससे सिद्ध हुआ कि मदारीका प्रभाव एक विशेष सीमा तक ही था। इन सज्जनने आमके फलवाले और रस्सीवाले (जिनका वर्णन ऊपर हो चुका है) दोनों तमाशोंकी खूब परीक्षा की। अन्तमें उन्हें निश्चय हुआ कि ये

बातें प्राकृतिक नियमोंके कारण नहीं, किन्तु मानसिक भ्रमोंके कारण दिखाई देती है । मदारी इन्द्रजालके खेल दिखलाते समय पालथी लगा कर बैठता है । वह मुंहसे उम, म, म, म, म, के सदृश धीमी आवाज करता हुआ अपने धड़को इधर उधर घुमाता रहता है । इसी लिए कितने ही मनुष्य समझते हैं कि उसकी इस क्रियाका सम्बंध जादूसे है, पर उनकी यह भूल है । शारीरिक चेष्टाका उसके कार्योंसे कोई सम्बन्ध नहीं रहता । अच्छा अभ्यास किये हुए लोग कभी अपने शरीरको नहीं हिलाते डुलाते । वे पद्मासन मार कर समाधिस्थ हो जाते हैं । खेलके समय शरीरका हिलाना-डुलाना दर्शकोंकी उत्कण्ठा बढ़ानेके लिये है ।

तमाशा देखनेवालोंके मन पर प्रबल मानसिक कल्पनाका चित्र अङ्कित करनेके लिए प्रायः नीचे लिखी हुई विधिका अवलम्बन किया जाता है ।

मदारी युवा अवस्थासे अपने मनमें मानसिक चित्र बनानेका अभ्यास करता है । कल्पना कीजिए कि पहले उसने किसी सुपरिचित वस्तु, जैसे गुलाबके फूलका स्पष्ट चित्र अपने मन पर खींचना चाहा । इस चित्रके खींचनेके लिए उसने अपनी इच्छा-शक्तिसे काम लिया । मदारी इतना अभ्यास कर लेता है कि उसके मानसिक नेत्रोंके सामने कल्पित वस्तु ठीक वैसी ही दीखने लगती है जैसे किसी व्यक्तिका मुख-मण्डल देखने पर किसी चित्रकारके मनमें उसका चित्र ज्योंका त्यों उतर आता है और फिर बिना देखे ही वह उसे अङ्कित कर लेता है । इसके अनन्तर मदारी बड़ी बड़ी वस्तुओंका, वस्तुओंके समूहका और बढ़ते बढ़ते अधिकाधिक अद्भुत दृश्योंका चित्र अपने मन पर अङ्कित करता है । कितने ही दिनोंके अभ्यासके बाद सौमें दो ही एक ऐसे निकलते हैं जो अपने मनमें वस्तुओंका स्पष्ट चित्र खींच कर उसके खेल दिखा सकें । जब इतनी शक्ति प्राप्त हो जाती है तब मदारी अपनी अत्यन्त विकसित इच्छा-शक्तिके द्वारा अपने आस-पासके लोगोंके मनमें पूर्वोक्त प्रकारके मानसिक भ्रम पैदा कर देता है । इस शक्तिकी प्राप्तिमें बहुत समय लगता है । दो चार वर्षोंमें यह नहीं प्राप्त हो सकती ।

आध्यात्मिक दृश्य ।

पश्चिममें यद्यपि इस समय विकासवाद और अनात्मवादका राज्य बताया जाता है; परन्तु वहाँ ऐसे वैज्ञानिकोंकी भी अब कमी नहीं रही जो बड़े बड़े विज्ञान-विशारद होते हुए भी भूत-वेतालके अस्तित्वमें विश्वास रखते है । बहुत समय तक अनात्मवादी वैज्ञानिक लोग आध्यात्मिक घटनाओंको देखते हुए भी उनको सुलझानेके स्थानमे उन पर परदा ही डालते रहे हैं । परन्तु अन्तको उन्हें इन पर विचार करना ही पड़ा । जैसे हम बाल्यावस्थामें वेतालोंकी कहानियाँ सुन कर डरा करते थे वे अब वैसे अज्ञात त्रास और भयानक वस्तु नहीं रहे ।

वर्तमान समयमें जिसे ' भूत ' कहा जाता है उस पर पश्चिमके बड़े बड़े विज्ञान-विशारद वैज्ञानिक रीतिसे विचार कर रहे हैं । परन्तु उसका सबसे बड़ा अनुशीलन " आध्यात्मिक अन्वेषण-सभा " की ओरसे हो रहा है । यह सभा गुप्त दृश्य चमत्कारों पर वैज्ञानिक रीतिसे विचार करनेके लिए १८८२ ई० में स्थापित हुई थी । सभाके प्रधान पदको राईट आनरेबल ए० जी० बैल्फोर एफ० आर० एसविलियम क्रूक्स, और सर आलीवर लाज जैसे विद्वान् सुशोभित करते रहे हैं । ये लोग ऐसे विद्वान् हैं कि इनके कारण सभाकी पदवी ब्रिटिश एसोसियेशनके बराबर हो गई है, बल्कि एक बार ऐसा मनोरञ्जक संयोग हुआ कि सर विलियम क्रूक्स एक ही कालमें इन दोनों सभाओंके प्रधान पद पर विराजते थे । सभाने अन्वेषण द्वारा जहाँ कई और परिणाम निकाले हैं, वहाँ इस बातका भी प्रतिपादन किया है कि आध्यात्मिक अन्वेषणमें जिज्ञासुको देहधारी मनुष्योंके अतिरिक्त और भी कई अमूर्त प्राणी मिलते हैं और कितने ऐसे पर्याप्त प्रमाण हैं कि जिनसे देह छोड़नेके पीछे भी व्यक्तिके जीवनका जारी रहना सिद्ध होता है । उनमेंसे एकका वृत्तान्त यह है ।

प्रार्थनाका आश्चर्य-जनक प्रत्युत्तर ।

इस समाचारके भेजनेवाले डाक्टर.जौसफ स्मिथ हैं । वे कई वर्षोंसे वारिङ्गटनमे एक प्रधान डाक्टर हैं । उनके ही शब्दोंमें यह कहानी इस प्रकार है । कोई चालीस वर्षोंकी बात है कि मैं पैंकथमें रहा करता था । एक दिन

शामके वक्त बैठा हुआ पुस्तक पढ़ रहा था कि मुझे यह आवाज सुनाई दी— ' जेम्जगैंडीके घर रोटी भेजो । ' परन्तु मैंने उस पर कुछ ध्यान न देकर पढ़ना जारी रक्खा । इतनेमें फिर आवाज आई—' जेम्जगैण्डीके घर रोटी भेजो '। ' इस पर भी मैंने पुस्तकको न छोड़ा; परन्तु फिर तीसरी वार बड़े जोरसे आवाज आई कि ' जेम्जगैण्डीके घर रोटी भेजो । ' इस वार आवाजके साथ ही मेरे मनमें एक आकस्मिक वेग उत्पन्न हुआ । इसे मैं रोक न सका और उठ खड़ा हुआ । उठ कर मैं ग्राममें गया और मैंने रोटी मोल ली । दूकानके द्वार पर एक लड़का खड़ा था । मैंने उससे पूछा कि तुम जेम्जगैण्डीका घर जानते हो ? उसने उत्तर दिया—हाँ मैं जानता हूँ । तब मैंने उसको दो पैसे देकर उसके हाथ जेम्जगैण्डीके घर रोटी भेज दी और कहला भेजा कि एक सज्जनने यह रोटी भेजी है । श्रीमती गैंडी वेजलियन मैथोडिस्ट चर्चके सम्बन्धमें मेरी ही श्रेणीकी सभासद थीं । मैं दूसरे दिन प्रातःकाल देखने गया कि इसका क्या परिणाम हुआ । मेरे जाने पर उसने बतलाया कि कल शामको एक विचित्र ही घटना घटी । वह कहने लगी कि " मैं बच्चोंको सुलाना चाहती थी; परन्तु वे रोटी मांगते और रोते थे । मेरे पास रोटी नहीं थी: क्योंकि मेरे पतिको तीन चार दिनसे काम नहीं मिला था । तब मैं ईश्वरसे प्रार्थना करने लगी कि हे पिता, हमारे खानेके लिए कुछ भेजो । आश्चर्य है कि मेरी प्रार्थनाके थोड़ी ही देर बाद एक लड़का रोटी लेकर मेरे द्वार पर पहुँचा । " मैंने श्रीमती गैण्डीसे भली भाँति पूछने पर पता लगाया कि उसके प्रार्थना करने और मेरे आवाज सुननेका समय बिलकुल एक ही था ।

निस्सन्देह यह एक प्रकारका आध्यात्मिक संलाप था । अब हम वेतालों (मृत आत्माकी छाया) का उल्लेख करते हैं । यह मामला पादरी डब्ल्यू० जे० बाल्से सम्बंध रखता है । वे ६, पेम्बर्टन टैरेस, केम्ब्रिजमे रहते हैं । उनका कथन है कि जिन दिनों मैं कालेजमे पढ़ता था मेरा एक अत्यन्त प्यारा सुहृद् था । उसका नाम था डी० एफ० डोम्ब्रेन । उसे एक वार सख्त बुखार आया; परन्तु वह आराम हो गया और वह वापस डब्लिनको चला गया । १४ एप्रिल १८५३ के प्रातःकाल मुझे एक सुस्पष्ट स्वप्न हुआ । मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि मैं नवयुवक डोम्ब्रेनके साथ मनोहर तथा रम्य स्थानोंमें भ्रमण कर रहा हूं । इतनेमे सहसा मेरे सामने एक ज्योति प्रकट हुई और मै जाग कर झटपट बिछौने पर उठ बैठा । बैठते ही क्या देखता हूँ कि मेरा

मित्र मेरे सामने खड़ा है। ऐसा मालूम होता था मानों मर्त्यलोकसे वह ऊपर आकाशकी ओर जा रहा है। तब मैंने बिछौने परसे छलाङ्ग मारी और बड़े जोरसे "राबर्ट, राबर्ट" कह कर आवाज दी। परन्तु छाया चली गई। मैंने अपनी घड़ी देखी तो उस समय पाँच बज कर तीन मिनट हुए थे। मैंने अपनी बहनको पत्र लिख कर सारा हाल पूछा, और राबर्टकी मृत्युका ठीक ठीक वक्त लिख भेजनेको लिखा। इसके पहले मेरे मनमे कभी भी सन्देह न हुआ था कि मेरा मित्र मर गया होगा। दूसरे दिन मेरी बहनका उत्तर आया कि प्रातःकाल पाँच बज कर तीन मिनट पर वह शान्ति-पूर्वक इस संसारसे चल दिया।

ऐसी ही घटना मायला रौलण्ड बौस्टेड, एम० डी०, कैस्टरके विषयमे है। उसका कथन है कि—मैं क्रिकेटका मैच खेल रहा था। मेरी तरफ गेंद फेंका गया और वह लुढ़क कर निचाईके कारण एक बाड़मे चला गया। मैं उसे लानेके लिए दौड़ा। जब मैं बाड़के समीप पहुँचा तब मैंने वहाँ अपने सोतेले भाईका "वेताल" देखा। वह मुझे बहुत ही प्यारा था। वेताल (मृतात्माकी छाया) शिकारी कपड़े पहने, कंधे पर बंदूक रक्खे, बाड़के ऊपर खड़ा था। वह मुसकुराया और अपने बाहु मेरी ओर घुमाने लगा। मैं उस समय बड़ा शोकातुर हुआ और दौड़ कर अपने चचाके निकट जा जो कुछ देखा था वह सब मैंने उनसे कह सुनाया। उन्होंने घड़ी निकाली और वक्त देख कर टाइम लिख लिया। उस समय एक बजनेमे दस मिनट बाकी थे। दो दिन पीछे मुझे मेरे पिताका पत्र मिला। उसमे लिखा था कि मेरे सोतेले भाई जानमौसेका लिङ्कनमे एक बजनेमें दस मिनट बाकी रहने पर देहान्त हो गया। उसकी मृत्यु बड़ी विचित्र रीतिसे हुई थी। वह उसी दिन कहता था कि मुझे अब आराम है और खयाल करता था कि मै फिर शिकार खेलनेके लायक हो गया हूँ। अपनी बन्दूक उठा कर वह मेरे पितासे पूछने लगा कि उन्होंने मुझे बुला भेजा है या नहीं, क्योंकि उसे विशेषतः मुझसे मिलनेकी बड़ी अभिलाषा थी। मेरे पिताने उत्तर दिया कि रास्ता ३०० मील होनेके कारण बहुत लम्बा है और आनेमें खर्च भी बहुत उठाना पड़ेगा। इस समय वह जोशमें आकर कहने लगा कि मुझे रास्तेकी दूरीकी कुछ परवा नहीं। इन सब रुकावटोंके होते हुए भी मैं उससे जरूर मिलूंगा। सहसा रक्तकी एक नाड़ी उसके फेफड़ेमे टूट पड़ी और वह झटपट मर गया। उस वक्त वह

शिकारी वेषमें था और उसके कंधे पर बन्दूक रक्खी थी। मैं जानता था कि वह बीमार है। परन्तु उसे अब आराम हो चला था। उसे क्षय रोग था।

इन कहानियोंके देनेका अभिप्राय मूढ़ विश्वासोंका फैलाना या भूत-वेताल आदिके विचारोंको दृढ़ करना नहीं है; किन्तु यह सिद्ध करनेका है कि मृत्यु होनेके बाद—ठीक उसी समय—मृतकोंकी छाया दिखाई देनेकी ऐसी सैकड़ों सच्ची घटनायें हैं जो अनात्म-वाद पर वज्रपात करती हैं।

अनेकानेक बार सिद्ध किया जा चुका है कि असाधारण शक्तियोंके द्वारा मनुष्य सैकड़ों मीलो पर होनेवाली घटनाओंको देखने और बातोंको सुननेमें समर्थ है। ठीक तन्दुरुस्तीकी हालतमें मनुष्य सोते समय विदेशमें बैठे हुए दूसरे लोगोंके सामने प्रकट होने और उनसे संलाप करनेमें कामयाब हो चुके हैं। ये सब ऐसी बातें हैं जिनका कारण ब्रह्माण्डको केवल अनात्म-दृष्टिसे ही देखनेसे मालूम नहीं हो सकता।

एक और घटना सुनिए। यह राईट आनरेबल सर 'जान डूमण्ड हे' के० सी० बी० जी० एम० जी० के साथ घटी थी। वे लिखते हैं कि १८७९ में मेरा पुत्र 'राबर्ट डूमण्ड हे' परिवार-सहित मोगडोरमें रहता था। उस जगह वह पोलीटिकल कौंसल था। फरवरीका महीना था। मुझे अपने पुत्र और उसके परिवारके कुशल-समाचारको सुने थोड़े ही दिन हुए थे। मै भी सर्वथा तन्दुरुस्त था। रातके एक बजे जब कि मै टॉजीयर नगरमें गाढ़ी निद्रामें सो रहा था तब मुझे मेरी पुत्र-वधूकी आवाज सुनाई दी। मैं फौरन ही जाग उठा। मेरी बहू अपने पतिके साथ मोगडोरमें थी। उसकी जो आवाज मुझे सुनाई दी वह स्पष्ट थी; परन्तु उसका स्वर खिन्न था। उसने कहा—"हा! मैं चाहती हूँ कि पिताजीको मालूम होता कि राबर्ट इतना बीमार है।" कमरेमें जलानेके लिए लेम्प रक्खा था। मैं उठ बैठा और उसे जला कर चारों ओर देख कर आवाजको सुनने लगा। परन्तु कमरेमें मेरी स्त्रीके सिवा और कोई न था। वह चुपचाप सो रही थी। मैं कुछ देर तक चुपचाप बैठा रहा कि शायद बाहरसे किसीके पाँवकी आहट सुनाई दे। परन्तु कोई भी न आया और सुनसान रात वैसे ही सायँ सायँ करती रही। अतः मैंने परमात्माका धन्यवाद किया कि जो आवाज मैंने सुनी थी वह केवल एक भ्रम था। फिर मैं लेट गया। मैंने अभी मुश्किलसे ही आँखें बन्द की थीं कि वही आवाज फिर सुनाई दी। तब मैंने अपनी स्त्री 'लेडी डूमण्ड हे' को

जगाया। और जो घटना घटी थी वह सब मैंने उसे कह सुनाई। इसके बाद उठ कर मैं अपने वाचनालयमें गया। वहाँ जाकर यह बात मैंने अपनी नोट-बुकमें लिख ली। दूसरे दिन मैंने सारी बातें अपनी पुत्रीसे कह दी, और कहा कि यद्यपि मैं स्वप्नोंमे विश्वास नहीं रखता तथापि मुझे मोगडोरसे समाचार सुननेकी चिन्ता लग गई है। मोगडोरका बन्दरगाह टाँजीयरसे कोई तीन-सौ मील दूर है। इस घटनाके थोड़े दिन बाद मेरी पुत्र-बधू श्रीमती 'आर ड्रूसण्ड हे' का मुझे पत्र मिला। उसमें लिखा था कि मेरा पुत्र सांनिपातिक ज्वरसे सख्त बीमार है। यह दैवयोग देख कर कि मेरा पुत्र भी उसी रातको बीमार हुआ जिसमें कि मैंने वह आवाज सुनी थी, मैंने बहूको लिखा कि जो कुछ घटना घटी हो उसका सारा वृत्तान्त लिख कर भेजो। उसने लौटती डाकमें उत्तर दिया कि अपने पतिको ऐसा सख्त बीमार देख कर और उस दूर देशमे अपने अकेले होनेका अनुभव करके उसने ठीक वे ही शब्द बोले थे जिन्होंने कि मुझे निद्रासे जगा दिया था और उनको दुहराया भी था।

इसी प्रकारकी और सैकड़ों घटनाओंकी सचाई डब्ल्यू० एच० मायर्स कृत मानव व्यक्ति और शारीरिक मृत्युके पश्चात् उसका अतिजीवन" (Human Personality and Its Survival after Bodily Death) तथा मेसर्स गर्नें, मायर्स, तथा एफ० पाडमोर द्वारा प्रकाशित "प्राणियोंके भूत-वेताल" (Phantoms of the Living) नामक पुस्तकों पर आध्यात्मिक अन्वेषण सभा ((Psychic Research Society) की रिपोर्ट पढ़नेसे प्रकट हो सकती है।

पशु-जगत्की गुप्त शक्तियाँ।

मनुष्यकी मानसिक शक्तिके चमत्कारोंका वृत्तान्त आप पढ़ चुके, अब जंतुओंकी सूक्ष्म तथा अद्भुत शक्तियोंके कुछ उदाहरण सुनिए।

सागरके तल पर कीचड़में एक छोटासा जीव रहता है। वास्तवमें वह इतना क्षुद्र है कि मिट्टीके अणु और उसमें भेद करना कठिन है। इतना क्षुद्र होने पर भी वह अन्य जीवधारियोकी भाँति सब काम करता है। जन्म लेता है, भोजन खाकर चलता है और मल-मूत्र बाहर फेंकता है, सन्तानो-

त्पत्ति करता है, वृद्धा होता है और अन्तमे मर जाता है। परन्तु हमारे लिए उसकी विचारणीय बात यह है कि यद्यपि उस जीवनमे ज्ञानेन्द्रियोंके गोलक अर्थात् नाक, कान, ऑख आदि कुछ भी नही होते, परन्तु फिर भी वह अपने आहार और दूसरे जीवोंके आगमनको झट मालूम कर लेता है। किसी न किसी प्रकार उसे इन बातोंका पता चल जाता है। यह बात अब तक मनुष्यको ज्ञात नहीं हुई कि उसे इन बातोका पता किस तरह चल जाता है। उसके पॉव नही होते, पर वह चलता है। ऑखें नही होती, पर वह देखता है, कान नहीं होते, पर वह सुनता है। उसका बिना पैरके चलना, विना ऑखके देखना और विना कानके सुनना एक पहेली-सी है। ऐसा जान पड़ता है कि वह ये सब काम अपने मनोबलके द्वारा ही करता है।

इसको छोड़ कर जब हम कुछ बड़े कीड़ोकी ओर आते हैं तब देखते हैं कि परमात्माने इन्हे कोई ऐसी शक्ति दे रक्खी है जिससे ये दूसरे कीड़ोंकी उपस्थितिको इतनी दूरसे मालूम कर लेते हैं जहॉ कि साधारण ज्ञानेन्द्रियॉ पहुॅच नहीं सकती। जिन लोगोंने चिउॅटियोंका हाल पढ़ा है अथवा स्वयं अवलोकन किया है वे जानते होंगे कि चिउॅटी किस प्रकार बड़ी दूरीसे अपनी दूसरी साथिन चिउॅटियोंके साथ बात-चीत कर सकती है, उनसे सहायता मॉग सकती है, और पिपीलका-दलकी गतिकी दिशाको बदलनेकी अनुमति दे सकती है। एक प्राणिशास्त्र-वेत्ता अमरीकन प्रोफेसर लिखता है कि एक बार मैंने चिउॅटियोका पिंजड़ा एक पत्थरके बने हुए कमरेमे रख दिया। इस कमरेकी दीवारे १६ इंच मोटी थीं। उनमें दरार, छिद्र या खिड़की कही भी न थी। केवल एक द्वार था। और वह भी इस तरह सुरक्षित और बंद किया हुआ था कि एक छोटी चिउॅटीके लिए भी उसके छिद्रोंमेंसे अन्दर घुस आना असम्भव था। जब कभी प्रोफेसर चिउॅटियोंकी बस्तीकी परिवृद्धिका अवलोकन करने उस कमरेमें आता तब सदैव देखता कि दूसरी चिउॅटियॉ दीवारके बाहर एकत्रित हैं और पत्थरमेंसे भीतर घुसनेका यत्न कर रही हैं। तब उसने परीक्षाके तौर पर चिउॅटियोके पिंजड़ेको एक दीवारके पाससे उठा कर दूसरीके पास, दूसरीसे तीसरीके पास, और वहॉसे चौथीके पास रख दिया। जब जब वह कमरेके अन्दर पिंजड़ेमें बंद चिउॅटियोका स्थान बदल कर कमरेसे बाहर निकलता तब तब क्या देखता कि बाहरकी चिउॅटियॉ भी उसी दीवारके पास और ठीक उसी जगह बाहर एकत्र हैं जहॉ कि

भीतर वे पिंजड़ेकी चिउंटियाँ हैं। उसने पिंजड़ेके स्थानमें कई परिवर्तन किये और प्रत्येक बार बाहरकी चिउंटियोंको भी वैसे ही अपनी जगह बदलते पाया। अब प्रश्न होता है कि वह कौनसी शक्ति थी जिसके द्वारा बिना देखे ही बाहरकी चिउंटियोंको यह पता लग जाता था कि भीतरकी चिउंटियाँ अब अमुक स्थान पर हैं?

एक और महाशय लिखते हैं कि एक बार इंग्लैण्डमें कोई सज्जन एक विशेष प्रकारके पङ्खदार कीड़ोंका एक जोड़ा लाये। इसके पहले वहाँ ऐसे कीड़े बिलकुल न थे। सुयोगसे उस जोड़ेमेंसे नर-कीड़ा उड़ गया और जहाँ नारी-कीड़ा रक्खा था वहाँसे कई मील दूर कहीं भाग गया। नारी-कीड़ा एक छोटेसे पिंजड़ेमें बंद करके रात्रिके समय बाहर लटका दिया गया। सवेरे उस कीड़े पालनेवाले सज्जनने बड़े आश्चर्यसे देखा कि नर-कीड़ा पिंजड़ेके बाहर चिमटा हुआ है। निस्सन्देह यह वही कीड़ा था; क्योंकि इसका रङ्ग-ढंग, आकार प्रकार सब वैसे ही थे। और इसके सिवा इंग्लैण्डमें वैसा कीड़ा कोई और था ही नहीं। इस लिए कहना पड़ता है कि कीड़े अपने जोड़ीदारोंको किसी गुप्त मानसिक शक्तिके द्वारा आकर्षित करते हैं; क्योंकि इन अवस्थाओंमें साधारण ज्ञानेन्द्रियाँ काम नहीं देतीं।

यही बात पक्षियोंके झुण्डोंमें पाई जाती है। जिन लोगोंने विविध प्रकारके पक्षियोंके बड़े बड़े समूहोंको एकदम उड़ते देखा है वे यह बात भली भाँति जानते होंगे कि किस प्रकार उन्हें भयका एक ही समयमें ज्ञान हो जाता है। वन-पशुओंमें निस्सन्देह कोई सूक्ष्म शक्ति है जिसके द्वारा वे एक दूसरेसे कई कई मील दूर होने पर भी फिर आ मिलते हैं। कई कई मील दूर ले-जा कर छोड़ी हुई बिल्लियों और कुत्तोंका वापस घर आ जाना और कोकिल प्रभृति पर्यटक पक्षियोंका यात्राके बाद पुनः उसी स्थान पर आ जाना भी विशेष अर्थ रखता है। ऐसा प्रतीत होता है कि स्थानों, व्यक्तियों, और वस्तुओंसे सूक्ष्म प्रकारके तरङ्ग निकलते रहते हैं। पशु इनका दूरसे ही अनुभव कर लेते हैं।

इसमें जरा भी सन्देह नहीं कि जन्तु अपने साथियों पर एक विशेष प्रकारका मानसिक प्रभाव डालते हैं। एक दूसरेकी शारीरिक शक्तिको जाननेके लिए उन्हें मल्लयुद्ध नहीं करना पड़ता, बल्कि विशेष प्रकारके सूक्ष्म प्रभावोंसे ही वे अपनी अपनी स्थिति और पदवीको जान लेते हैं। आप दो

नर-बन्दरोंको एक ही पिंजड़ेमे बंद कर दीजिए। वे अपने मुँह खोलेंगे, दाँत निकालेंगे और एक दूसरेकी और गुरगुरायँगे। परन्तु उनमेंसे एककी गुरगुराहट, चाहे उसके दाँत अधिक भद्दे और भयानक हो, दूसरेकी गुरगुराहटसे कुछ भिन्न होगी और ऐसा मालूम होगा कि भीतरसे वह कुछ थरथरा रहा है। उससे स्पष्ट प्रकट होगा कि वह दोनोंमेसे नीच या शासित है। उनमें मल्लयुद्ध अथवा लड़ाईके द्वारा शक्तिकी जाँच करनेकी कोई आवश्यकता नहीं पड़ती। वह सदैव दूसरेके अधीन रहेगा। यही हाल बड़ी बिल्लियोंका है। दो, तीन, चार, या एक दर्जन सिंहोंको एक पिंजड़ेमें बंद कर दीजिए। वे बिना किसी प्रकारके लड़ाई झगड़ेके अपने आप ही मालूम कर लेगे कि उनमेंसे कौन प्रधान है। इसके बाद वही सदा सबके पहले मांस खायगा और यदि उसकी इच्छा हो तो जब तक वह पेट न भर ले तब तक दूसरे सिंहोंमेंसे कोई खाना आरम्भ न करेगा। वही सदा सबके पहले ताजा पानी पीयेगा। बाकी सब उसका झूठा खायँगे, झूठा पानी पीयेंगे। सारांश यह कि पिंजड़ेमें वह सबका राजा होगा। अब कहिए, बिना युद्धके दूसरोंने कैसे जान लिया कि यही सबसे बलवान् और राजा बननेके योग्य है?

जन्तुओंके अन्दर हमें वशीभूत या मोहित कर लेनेके भी बहुतसे दृष्टान्त मिलते हैं। उनकी यह सम्मोहिनी शक्ति दो रीतियोंसे कार्य करती है। एक अपने जोड़ीदारोंके (नरका-नारीको और नारीका नरको) वशीभूत कर लेनेकी आकांक्षाके रूपमें; और दूसरी, दूसरे जन्तुओंको अपने शिकारके लिए मालूम कर लेनेकी इच्छाके रूपमें, जैसा कि साँप पक्षियोंको और सिंह छोटे छोटे जन्तुओंको वशीभूत कर लेता है। इन बातोंको प्रमाणित और स्पष्ट करनेके लिए दृष्टान्तोंकी कमी नहीं है। जीव-विद्या ऐसे दृष्टान्तोंसे भरी पड़ी है।

एक प्राणिशास्त्र-वेत्ता लिखता है कि एक दिन मैंने देखा कि एक पङ्खदार कीड़ा एक बिच्छूके इर्द-गिर्द चक्कर लगा रहा है। थोड़ी देरके बाद कीड़ा अस्वभाविक रीतिसे कई बार बिच्छू पर कूदा, मानों उसके जादूको दूर करनेकी उन्मत्त आकाँक्षा कर रहा है। बिच्छू फौरन ही कीड़ेको पकड़ कर निगल गया। अनेक वार पर्यटकोंसे सुना है कि जब मनुष्य अकस्मात् किसी सिंह, चीते, अथवा भेड़ियेको देखता है तब उसकी टाँगे काँपने लगती हैं जैसे कँपकँपी लग रही हो, और ऐसा मालूम होने लगता है मानों हिंसक जन्तुके नेत्र मनुष्य पर एक विशेष प्रकारका आकर्षण और प्रभाव डाल रहे

हैं। आपमेंसे बहुतोंने बिल्लीकी उपस्थितिमें चूहेकी भी ऐसी ही दशा अनेक बार देखी होगी। इसके विपरीत प्रकृतिका अध्ययन करनेवाला प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि जन्तुओंमें नर और नारी एक दूसरे पर आकर्षणका कैसा अद्भुत प्रभाव डालते हैं। यदि किसीने इस आकर्षणका अवलोकन नहीं किया तो वह पक्षियोंके विवाहकी ऋतुमें अच्छी तरह कर सकता है। नर नारीको और नारी नरको वास्तवमें वशीभूत या मोहित करता हुआ दिखाई देगा। इस समय दूसरा पक्षी चुपचाप परोंको फड़फड़ाता हुआ वहाँ बैठा होगा। उसके नेत्रोंसे विवशताका भाव टपक रहा होगा। इसी पक्षीके साँपके वशीभूत होनेकी अवस्थामें और अपने जोड़ीके वशीभूत होनेकी अवस्थामें भारी भेद होगा।

एक प्रोफेसरका कथन है कि एक बार मैं तंग रास्तमेंसे गुजर रहा था। रास्तेके एक तरफ नदी थी और दूसरी तरफ झाड़ियोंसे ढँपी हुई एक चट्टान। एकाएक मैं क्या देखता हूँ कि विविध प्रकारके पक्षी मार्गके आर-पार, आगे पीछे कलरव करते हुए मार्गके एक विशेष स्थान पर घूम रहे हैं। ध्यानसे दृष्टि डालने पर देखा कि एक बड़ा भारी काला नाग कुण्डली मारे, फण उठाये और टकटकी बाँधे बैठा है। उसकी आँखें हीरेकी तरह चमक रही हैं और जबान कभी बाहर आती है और कभी अन्दर जाती है। यही नाग पक्षियोंकी गतिका केन्द्र था। प्रोफेसर कहता है यद्यपि मनुष्यकी आहटसे साँप तो छिप गया; परन्तु पक्षी ऐसे आसक्त हो रहे थे कि वे वहाँसे बिलकुल न भागे, बल्कि निकटस्थ झाड़ियों पर बैठ कर अपने जादूगरके लौटनेकी प्रतीक्षा करने लगे।

एक और महाशय लिखते हैं कि मैंने एक साँपको एक पक्षीको वशीभूत करते देखा है। पक्षी साँपके चारों ओर चक्कर काट रहा था, परन्तु उसकी उड़ानके चक्र शनैः शनैः सङ्कीर्ण होते जाते थे और साथ ही वह मर्मभेदी चीत्कार कर रहा था। पक्षी सर्पके मुँहमें गिरा ही चाहता था कि मैंने साँपको भगा दिया। पक्षी फिर आनन्द-पूर्वक उड़ गया।

इसी प्रकार एक गिलहरीका हाल सुना है। यह गिलहरी एक खाड़ी और एक विशाल वृक्षके बीच, जो कि खाड़ीसे कतिपय गजकी दूरी पर था, उन्मत्तकी भाँति आगे पीछे दौड़ रही थी। इसके मुखसे भय तथा विपत्तिके चिह्न प्रकट हो रहे थे। ध्यान-पूर्वक देखनेसे मालूम हुआ कि एक विषैल

नाग वृक्षके एक छिद्रमेंसे सिर निकाले गिलहरीकी तरफ ताक रहा है। बेचारी गिलहरीने अन्तको सब दौड़-धाम करना छोड़ दिया और सॉपके मोहिनी मंत्र या जादूके वशमें होकर उसके मुँहके पास अपना सिर रख कर वह लेट गई। तब सॉप अपने शिकारको निगलनेके लिए निकला, परन्तु वह अभी गिलहरीके पास पहुँचने भी न पाया था कि देखनेवालेने एक बड़े पत्थरसे उसके सिरको कुचल दिया। गिलहरी उस जादूसे छुटकारा पाकर शीघ्र भाग गई।

डाक्टर गुड नामक एक महाशयने अजगरोंकी इस विचित्र मोहिनी शक्तिके प्रभावका, जो कि वे पक्षियों, गिलहरियों, और खरगोशके बच्चे प्रभृति क्षुद्र जन्तुओं पर डालते हैं, विशेष अध्ययन किया है। उनका कथन है कि इन जन्तुओंमें इतनी शक्ति नहीं रहती कि वे अपनी ऑखोंको सॉपकी ऑखोंसे परे हटा सकें। यद्यपि बाहरसे वे उससे परे हटनेका यत्न करते हुए दृष्टि-गोचर होते हैं, परन्तु फिर भी शनैः शनैः सॉपके पास आते जाते है मानों किसी ऐसी शक्तिसे खींचे जाकर उसकी तरफ ढकेले जा रहे हैं जो कि उनकी स्वाभाविक शक्तिसे बहुत जियादा है। उनका कहना है कि वे धीरे धीरे निकट ही निकट खिंचते आते हैं। यहाँ तक कि अन्तको वे विवश होकर सॉपके मुँहमें चले जाते है। सॉपका मुँह पहलेसे ही उनके स्वागतके लिए खुला रहता है।

वेलियन्ट नामक एक अफ्रीकन यात्रीका बयान है कि मैंने देखा कि एक पक्षीको एक अजगर दूरसे आकृष्ट कर रहा है। उसकी ऑखें चमक रही हैं, मुँह खुला है और वह हौले हौले पक्षीकी ओर बढ़ रहा है। बेचारा पक्षी विपत्तिमें पड़ कर अस्वाभाविक रीतिसे बड़ा ही हृदय-द्रावक आर्तनाद कर रहा है। मुझसे यह न देखा गया। मैंने अजगरको गोलीसे मार डाला। इसके बाद जो पक्षीको उठाया तो मरा हुआ पाया। पक्षी या तो उसके भयसे मर गया था, या शक्तिसे या शायद जादूके सहसा नष्ट हो जानेसे। उसने अजगर और पक्षीके बीचकी दूरीको मापा तो उसे साढ़े तीन फुट पाया।

फिलोसाफीकल सोसायटीकी रिपोर्टोंमें लिखा है कि एक बार एक चूहे और एक अजगरको इकट्ठा एक पिंजड़ेमें बंद कर दिया गया। पहले पहल चूहा बहुत घबराया, परन्तु वह घबराहट आकर्षणमें परिणत हो गई। चूहा शनैः शनै. अजगरके निकट आता गया; यद्यपि सॉप अपनी चम-

कती हुई आँखोंके साथ जबड़े खोले हुए अपने ही स्थान पर बैठा रहा। चूहा अन्तको उसके मुँहमें घुस गया और वह उसे निगल गया।

ब्रूस नामक एक अफ्रीकन यात्री लिखता है कि मध्य अफ्रीकाकी जातियोंकी सांपों और बिच्छुओंके डंकसे प्रकृति ही रक्षा करती है। ये लोग साँपको बे-धड़क पकड़ लेते हैं। साँपोंमें उनके मुकाबलेकी शक्ति बिलकुल जाती रहती है। उसका बयान है कि ज्यों ही ये आदिम-निवासी साँपको छूते हैं ऐसा मालूम होता है मानों साँप बीमार पड़ा है। अनेक बार तो उनकी गुप्त सम्मोहिनी शक्तिसे उसका बल इतना नष्ट हो जाता है कि वह थोड़ी ही देर बाद मर जाता है। यात्री कहता है कि मैंने बहुधा देखा है कि साँप पहले चाहे कितना ही सुन्दर और फुर्तीला क्यों न हो, ज्यों ही इन बनैले मनुष्योंमेंसे कोई एक उसे पकड़ता है तो वह ऐसा दिखाई देने लगता है मानों सख्त बीमार और निर्बल है। इस समय वह बहुधा आँखें बन्द रखता है, और अपने पकड़नेवालेको काटनेके लिए उसकी तरफ मुँह भी नहीं करता। पाठकोंमेंसे बहुतेरोंने सपेरोंको साँप पकड़ते देखा होगा। जिस समय सपेरा साँपको पकड़ने लगता है उसके कई सेकण्ड पहले साँप निश्चेष्ट अपने स्थान पर ठहरा रहता है, और क्या मजाल है कि हिल भी जाये। मानों आप चाहता है कि सपेरा मुझे पकड़ ले।

जन्तुओं, कुत्तों और बनैले जीवोंको वशीभूत करनेकी थोड़ी बहुत शक्ति कई मनुष्योंमें होती है। बहुतेरे चोर, डाकू, निशाचर पहरेके कुत्तोंको इस प्रकार वशीभूत कर लेते हैं कि वे चुपचाप वहाँसे भाग जाते हैं।

छोटे छोटे जन्तुओं और पक्षियोंकी ही बात नहीं; अजगर अनेक बार मनुष्योंको भी आकर्षित कर लेता है। एक बारका जिक्र है कि एक व्यक्ति अपनी वाटिकामें घूम रहा था। एकाएक एक साँपसे उसकी चार आँखें हो गईं। साँपकी आँखोंसे एक विशेष प्रकारकी ज्योतिः निकल रही थी। उस व्यक्तिने अनुभव किया कि मानों साँपने उसे आकर्षित कर लिया है। यत्न करने पर भी वह साँपकी आँखोंसे अपनी आँखें परे न हटा सका। उसका बयान है कि फिर मुझे ऐसा मालूम होने लगा कि साँपका शरीर फैल रहा है और वह विचित्र प्रकारके चमकीले रंग बदल रहा है। उसका सिर चकराने लगा। वह साँपकी ओर गिरनेहीको था कि उसकी स्त्रीने आकर उसे खींच लिया और साँपके जादूको नष्ट कर दिया। इसी प्रकार एक और मनुष्य-

का जिक्र है। उसने अपने साथीको चुपचाप एक सड़कके किनारे खड़ा पाया। उसकी आँखें एक बड़े अजगरकी आँखोंसे लड़ रही थीं। अजगर टकटकी बाँधे अपनी तीक्ष्ण और चमकीली आँखोंसे उसकी ओर घूर रहा था और कुछ मिनटोंमें उसकी तरफ लपका ही चाहता था कि इतनेमे वह मनुष्य, कोमल परन्तु दुःख-पूर्ण स्वरसे चिल्ला उठा कि अजगर मुझे काट खायगा, मुझे मार डालेगा। उसके साथीने उत्तरमें कहा—'तो तुम भाग क्यों नहीं जाते! यहाँ क्यों खड़े हो?' परन्तु वह मनुष्य सर्वथा अचेत हो जानेके कारण बिलकुल उत्तर न दे सका। अन्तको उसके साथीने साँप पर एक छड़ी मार दी जिससे कि साँप फौरन भाग गया। वह मनुष्य पीछेसे कई घण्टे बीमार रहा।

पाठकोंको उपर्युक्त दृष्टान्तोंसे विदित हो गया होगा कि पशु-पक्षियोंमें अनाविर्भूत मानसिक शक्ति कैसी बलवती होती है। इसके द्वारा वे कैसे कैसे अद्भुत कार्य करते हैं। जब पशुओंका यह हाल है तो बताइए, मनुष्य अपनी मानसिक शक्तिको वशमें करके क्या नहीं कर सकता। संसारमें जितने भी बड़े बड़े आदमी हुए हैं वे सब इस शक्तिसे काम लेते थे। महर्षि दयानन्दसे एक बार किसीने पूछा—'महाराज, क्या आप योगाभ्यास किया करते हैं?' तो आपने उत्तर दिया—"क्या तुम यह समझते हो कि इतना महान् कार्य मैं योगकी सहायताके बिना ही कर रहा हूँ?" शोक है कि आज आपसमे लड़ने झगड़नेका ही नाम धर्म्म रह गया है। आर्योंकी यह पवित्र विद्या प्रायः अब लोप होती जा रही है। दयामय जगदीश! वह दिन कब आयगा जब कि फिरसे इस देशमें योग-विद्याका प्रचार होगा और लोग साम्प्रदायिक झगड़ोंको छोड़ कर सच्ची आध्यात्मिक उन्नतिके लिए यत्न करेंगे। उस समय आत्माके अन्दर बल आयगा और दुष्टोंके दलन करनेके लिए शरीरमें औज और तेजका संचार होगा। वह स्वर्गीय समय होगा। उस समय गाय और सिंह एक घाट पानी पीयेंगे, हिंसाका कहीं नामोनिशान न होगा। चारों ओर सुख और शान्तिका साम्राज्य होगा। सारा संसार एक दूसरेको भाई समझेगा।

ॐ शान्तिः।

हिन्दी-गौरव-ग्रन्थमाला ।

अपने ढंगकी यह उत्कृष्ट ग्रंथमाला है । इसमें जो ग्रंथ प्रकाशित होते हैं वे भाव, भाषा, साहित्य, कागज, छपाई-सफाई, आदि सभी बातोंमें श्रेष्ठ होते है । इसमें प्रकाशित ग्रंथोंकी प्रायः सभी हिन्दीके प्रतिष्ठित पत्रोंने वडी अच्छी समालोचनाएँ की हैं । स्थायी-ग्राहकोंको नीचे लिखे सब ग्रंथ पौनी कीमतमे दिये जाते है । अव तक ये ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं ।

१ **सफल गृहस्थ** । इसमें मानसिक शान्तिके उपाय, कार्य-कुशलता, कुटुम्ब-शासन, हृदयकी गंभीरता, सयम आदि पर सुंदर विवेचन है । इसकी शिक्षासे जीवनमें वड़ा सुन्दर परिवर्तन हो सकता है । नया सस्करण । मू० ॥।)

२ **आरोग्य दिग्दर्शन** । मूल-लेखक महात्मा गाँधी । पुस्तक वड़ी उपयोगी है । पुस्तकमें हवा, पानी, खूराक, जल-चिकित्सा, मिट्टीके उपचार, छूतके रोग, वच्चोंकी सँभाल, सर्प-बिच्छू आदिका काटना, डूवना या जलजाना आदि अनेक विषयों पर विवेचन है । चौथा संस्करण । सुलभ मू० ।≶)

३ **कांग्रेसके पिता मि० ह्यूम** । कांग्रेसके जन्मदाता, भारतमें राष्ट्रीय भावोंके उत्पादक, मि० ह्यूमका पवित्र जीवन-चरित । मूल्य ।॥) आने ।

४ **जीवनके महत्त्व-पूर्ण प्रश्नों पर प्रकाश** । प्रसिद्ध आध्यात्मिक लेखक जेम्स एलनकी एक उत्कृष्ट पुस्तकका अनुवाद । प्रत्येक युवकके पढ़ने योग्य, चरित्र-संगठनमें उपयोगी पुस्तक । नया सस्करण । मू० ॥-)

५ **विवेकानन्द (नाटक)** । अव नही मिलता ।

६ **स्वदेशाभिमान** । इसमें कितने ही ऐसे विदेशी-नररत्नोंकी खास खास घटनाओंका उल्लेख है, जिन्होंने अपनी मातृभूमिकी स्वाधीनताकी रक्षाके लिए अपना सर्वस्व वलिदान कर एक उच्च आदर्श खड़ा कर दिया है । मूल्य ।-)

७ **स्वराज्यकी योग्यता** । स्वराज्यके विरुद्ध जो आपत्तियाँ उठाई जाती हैं उनका इसमें वडी उत्तमताके साथ खण्डन कर इस वातको अच्छी तरह सिद्ध कर दिया है कि भारतको स्वराज्य मिलना ही चाहिए । मू० १।) रु०

८ **एकाग्रता और दिव्यशक्ति** । इसमे दिव्यशक्ति—आरोग्य, आनन्द, शक्ति और सफलता—की प्राप्तिके सरल उपाय वतलाये गये हैं । मूल लेखिका लिखती है कि—" इस पुस्तकमें वतलाये हुए नियमोंका पालन करो, प्रत्येक पाठको याद करो, उसका खूव मनन करो, फिर यदि तुम्हें दिव्यशक्ति प्राप्त न

हो और तुम्हें यह न मालूम होने लगे कि अब तुम पहलेके जैसे निर्बल, पद-दलित प्राणी नहीं रहे तो मेरा नाम ओ हाणु द्वारा नहीं।" मू० १।) और १॥।) रु०

९ जीवन और श्रम। परिश्रम करनेसे घबड़ानेवाले और परिश्रम करनेको बुरा समझनेवाले भारतके लिए सजीवनी शक्तिकी दाता। श्रम कितने महत्त्वकी वस्तु है, यह इसे पढ़नेसे मालूम होगा। मूल्य १॥), स० १॥।=)

१० प्रफुल्ल (नाटक)। हमारे घरों और समाजमें जो फूट, स्वार्थ, मुकदमेबाजी, ईर्षा-द्वेष आदि अनेक दोषोंने घुस कर उन्हें नरक-धाम बना दिया है उनके संशोधनके लिए महाकवि गिरीश बाबूके उत्कृष्ट सामाजिक नाटकोंका घर-घरमें प्रचार होना चाहिए। मूल्य १=)

११ लक्ष्मीबाई। झाँसीकी रानीकी यह जीवनी बड़ी खोजके साथ लिखी गई है। सरस्वतीके सम्पादकका कहना है कि "केवल इसी पुस्तकके लिए मराठी सीखनी चाहिए।" मूल्य १।) रु०, सजिल्दका १॥=)

१२ पृथ्वीराज (नाटक)। भारतके सुप्रसिद्ध वीर पृथ्वीराज चोहानका वीररस-प्रधान चरित्र इसमें चित्रित किया गया है। मू० ॥।)

१३ महात्मा गाँधी। बहुत कुछ परिवर्द्धित दूसरा संस्करण। हिंदी-साहित्यमें यह बहुत बड़ा और अपूर्व ग्रंथ है। इसके पहले खण्डमें महात्माजीकी २०० पृष्ठोंमें विस्तृत जीवनी है। जिसमें कई अपूर्व बातोंके सिवा अब तकका सब हाल आ गया है। दूसरे खण्डमें महात्माजीके लगभग १५० महत्त्व-पूर्ण व्याख्यानों और लेखोंका संग्रह है, और उनमें ऐसे व्याख्यान बहुत हैं जिन्हें हिन्दी-संसारने बहुत कम पढ़ा है। इस संस्करणमें सत्याग्रह-सम्बन्धी कई नई बातें, और असहयोग पर दिये हुए महात्माजीके खास खास व्याख्यान तथा लेख भी शामिल कर दिये गये हैं। पृष्ठ ७५०। मू० ४) रु०।

१४ वैधव्य कठोर दंड है या शान्ति? यह भी महाकवि गिरीशचंद्र घोषके एक उत्कृष्ट नाटकका अनुवाद है। इसमें विधवा-विवाहके विषयमें बड़ा ही मार्मिक और हृदयको हिला देनेवाला चित्र खींचा गया है। मू० ॥।≈), सजि० १।-)

१५ आत्मविद्या। नये ढंगसे लिखा हुआ वेदान्त विषयका यह अपूर्व ग्रंथ है। इसमें संक्षिप्तमें पर बड़ी सुन्दरताके साथ वेदान्तके महान् ग्रंथ योगवाशिष्टका सार दे दिया गया है। अनुवादक पं० माधवराव सप्रे बी० ए०। मू० २) २॥) रु०।

१६ सम्राट् अशोक। यह एक उत्कृष्ट और भाव-पूर्ण उपन्यास है। इसमें अशोकका विश्वप्रेम, महात्मा मोग्गली-पुत्र तिष्य और श्रेष्ठी उपगुप्तकी पर-हित-

साधनकी समुज्ज्वल भावनाएँ, कुमार वीताशोकका भ्रातृ-प्रेम, प्रमिलाका कार-स्थान और इन्दिरा तथा जितेन्द्रका स्वर्गीय प्रेम आदिकी एकसे एक बढ़कर कहानी पढ़ कर आप मुग्ध हो जायँगे। मूल्य २॥)रु०, कपड़ेकी जि० ३।)रु०।

१७ बलिदान। महाकवि गिरीशचंद्र घोषके एक उत्कृष्ट सामाजिक नाटकका अनुवाद। इसमें वर-विक्रयसे होनेवाली दुर्दशाका चित्र बड़ी कारुणिक भाषामें खींचा गया है, जिसे पढ़ कर आप रो उठेंगे। देश और जातियोंकी हालतसे आपका हृदय तलमला उठेगा। मू० १।) और १॥) रु०।

१८ हिन्दूजातिका स्वातन्त्र्य-प्रेम। हिंदी-साहित्यमें स्वतंत्र लिखी हुई एक उत्कृष्ट पुस्तक। इसमें स्वतंत्रता-प्राप्तिके लिए बलिदान होनेवाली हिन्दू-जातिकी वीरताका ज्वलंत चित्र खींचा गया है, जिसे पढ़ कर आपका रोम रोम फड़क उठेगा। भाषा बड़ी ओजस्वी है। मू० १), सजिल्द १॥)।

१९ चाँदबीबी। बंगालके प्रसिद्ध नाटककार क्षीरोदप्रसाद विद्याविनोद एम० ए० के नाटकका अनुवाद। इसमें बीजापुरकी वीर-नारी बेगम चाँद-सुलतानाकी अद्भुत वीरता और क्षमता, देशके उछरते हुए बालकोंका जन्मभूमिके लिए अपूर्व बलिदान और मराठे वीर रघुजीकी हृदयको हिला देनेवाली स्वामी भक्ति आदिकी वीर और करुण कहानीको पढ़ कर आपका हृदय भर आयेगा। मूल्य १।) रु०, पक्की जिल्दके १॥) रु०

२० भारतमें दुर्भिक्ष। ले० पं० गणेशदत्त शर्मा। कई पुस्तकोंके आधार पर लिखा गया स्वतंत्र ग्रंथ। भारतमें जब अँगरेजोंका राज्य स्थापित नहीं हुआ था तब देशमें अन्न, वस्त्र, घी, दूध आदि सभी वस्तुएँ खूब सस्ती—पानीके भाव—थीं; देशमें क्या गरीब, क्या धनी सभी सुखी थे; दुर्भिक्ष, महामारी आदिके उपद्रव तब कभी कहीं नाम मात्रको हो जाया करते थे और जबसे अँगरेजोंका प्रभुत्व स्थापित हुआ तबसे देशके सब व्यापार-धन्धे विदेशियोंके हाथ चले गये; देशकी कारीगरी, कला-कौशल बड़ी क्रूरतासे बरबाद कर दिये गये; अन्न, वस्त्र, दूध, घी, आदिकी अभूतपूर्व मँहगीने गरीब भारतीयोंको तबाह कर दिया, देशकी छाती पर दुर्भिक्ष-दानव लोमहर्षण तांडवनृत्य करने लगा; जिस भारतमें ७५० वर्षोंमें केवल १८ अकाल पड़े—सो भी देशव्यापी नहीं, प्रान्तीय—उसमें सिर्फ सौ वर्षोंमें ३१ दारुण अकाल पड़े और उनमें सवा तीन करोड़ मनुष्य काल-कवलित हुए। देशकी इस रोमाञ्चकारी दुर्दशाको पढ़ कर पत्थरके जैसा हृदय भी दहल उठेगा। मू० १॥),२।)

२१ स्वाधीन भारत। ले० महात्मा गाँधी। भारत पराधीन है—गुलामीकी बेड़ियोंसे जकड़ा हुआ है। वह स्वाधीन कैसे हो सकता है, इसी विषय पर सत्य, दृढ़ता और निर्भीकतासे महात्माजीने इस दिव्य पुस्तकमें विवेचन किया है। इस पुस्तकका घर-घरमें प्रचार होना चाहिए। इसी विचारसे इसका मूल्य भी कम रक्खा गया है। मूल्य सिर्फ ।॥) आने।

२२ महाराज रणजीतसिंह। ले० पं० नन्दकुमारदेव शर्मा। कोई २५–३० ग्रंथोंके आधार पर लिखा गया रणजीतसिंहका स्वतंत्र और महत्त्व-पूर्ण जीवनचरित। इसे पंजावका सौ वर्षोंका इतिहास समझिए। पंजावमें जब चारों ओर खून-खरावी और मारकाटका वाजार गर्म था तव अपनी लोकोत्तर वीरता और बुद्धिसे थोड़े ही वर्षोंमें पंजाव-केसरी सारे पंजाव पर विजय करके उसे एकाधिपत्य शासनके छत्रतले ले आये। उनमें अद्भुत संगठन-शक्ति और शासनक्षमता थी। प्रत्येक देशाभिमानीको पंजाव-केसरीकी यह वीररस-पूर्ण जीवनी पढ़नी चाहिए। मू० १॥।) रु०, सजि० २।) रु०

२३ सम्राट् हर्षवर्धन। ले० सम्पूर्णानंद वी० एस० सी०। भारतके अन्तिम आर्य-सम्राट् परम दानवीर हर्षवर्द्धनका जीवन-चरित। मू ॥)आ०

ग्रंथमालामें नीचे लिखे उत्कृष्ट ग्रंथ छप रहे हैं—

२४ कादम्बरी। महाकवि वाणभट्ट-कृत सस्कृत साहित्यके अपूर्व गद्य काव्यका सुन्दर-सरल हिन्दी अनुवाद। अनुवादक—श्रीयुक्त पं० ऋषीश्वरनाथ भट्ट वी० ए० एल० एल० वी०।

२५ सत्याग्रह और असहयोग। ले० श्रीयुत पं० चतुरसेनजी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य। हिन्दीमें सर्वथा मौलिक और अपूर्व ग्रंथ।

२६ जीवनका सद्व्यय। एक अँगरेजीकी उत्कृष्ट पुस्तकका अनुवाद।

२७ दूकानदारी। अपने विषयका हिन्दी-साहित्यमें सवसे पहला ग्रंथ। लेखक श्रीयुत् प्रोफेसर नारायणप्रसादजी वी० एस० सी०।

२८ चैतन्य महाप्रभु। प्रसिद्ध अवतार गौरांग प्रभुकी उत्कृष्ट जीवनी।

२९ हृदयकी प्यास। ले० श्रीयुत् पं० चतुरसेनजी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य। हिन्दी-साहित्यमें बिल्कुल स्वतंत्र लिखा हुआ उत्कृष्ट उपन्यास।

३० व्यापारी पत्र-व्यवहार और उसका संरक्षण—ले० श्रीयुत् कस्तूरचंदजी बॉठिया, बी० ए० बी० काम०।

मैनेजर—**गाँधी हिन्दी-पुस्तक भंडार;** कालवादेवी—**बम्बई।**